नब्बे के दशक की कवयित्रियों की कविताओं में स्त्री विमर्श

(NABBE KE DASHAK KI KAVAYITRIYON KI KAVITAON MEIN STREE VIMARSH)

Thesis Submitted to

COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE AND TECHNOLOGY

for the award of the degree

of

DOCTOR OF PHILOSOPHY

In

HINDI

Under the Faculty of Humanities

By

विनीता एन. ए.

VINEETHA N.A.

Prof.Dr. K. VANAJA *Prof.& Head of Department*		**Prof. Dr.K. AJITHA** *Supervising Teacher*

DEPARTMENT OF HINDI

COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE AND TECHNOLOGY

COCHIN – 682022

NOVEMBER 2015

Certificate

This is to certify that the research work presented in the thesis entitled **“NABBE KE DASHAK KI KAVAYITRIYON KI KAVITAON MEIN STREE VIMARSH”** is an authentic record of research work carried out by **VINEETHA N.A**. under my supervision at the Department of Hindi, Cochin University of Science & Technology, in partial fulfillment of the requirements for the degree of **DOCTOR OF PHILOSOPHY in HINDI** and that no part thereof has been included for the award of any other degrees.

Prof. K AJITHA
Department of Hindi
Cochin University of Science & Technology
Kochi – 682 022

Place :

Date :

Declaration

I hereby declare that the thesis entitled "**NABBE KE DASHAK KI KAVAYITRIYON KI KAVITAON MEIN STREE VIMARSH"** is the bonafide record of the original work carried out by me under the supervision of **Prof. K. AJITHA**, Professor, at the Department of Hindi, Cochin University of Science & Technology, and no part has been included in any other thesis submitted previously for the award of any degree.

VINEETHA N.A.
Department of Hindi
Cochin University of Science & Technology
Kochi – 682 022

Place : Kochi-22

Date : /11/2015

पुरोवाक्

पुरोवाक्

शिक्षा एवं जागरण के फलस्वरूप आधुनिक समाज में नारी विभिन्न क्षेत्रो में उपलब्धियाँ हासिल करने लगी है| वह हर क्षेत्र में पुरुष के साथ कंधे से कन्धा मिलाकर आगे बढ़ने की कोशिश कर रही है| पर पितृसत्ता भी हर युग में अपना वर्चस्व बनाये रखने की कोशिश करती आ रही है| वह स्त्री को हमेशा दूसरे दर्जे के नागरिक के रूप में मानती है| वह नारी की गति पर रोक लगाने का प्रयास करती रहती है क्योंकि उसके स्वार्थों की पूर्ति के लिए यह अनिवार्य है| आज़ादी के इतने वर्ष बीतने पर भी नारी की स्थिति में अनेकानेक विडंबनायें दिखाई पड रही हैं| भूमंडलीकरण भी उसे यौन सिबंल के रूप में परिवर्तित कर रहा है|

कविता मानवीय संवेदना की अभिव्यंजना है| नब्बे के दशक की कवयित्रियाँ नारी की बदहालत पर अत्यंत चिंतित हैं| स्त्री होने के कारण स्त्रियों की व्यथा-पीड़ा से वे खूब परिचित हैं | स्वानुभूतियों को ही उन्होंने कविता द्वारा शब्दबद्ध किया हैं| उन्होंने पितृसत्तात्मक समाज की नारी की स्थिति में बदलाव लाने का प्रयत्न किया है| नारी जाति को आत्मनिर्भर बनाने के लिए, अपनी अस्मिता की तलाश करने के लिए उन्होंने अपनी कविता द्वारा प्रेरणा दी| नब्बे के दशक की कवयित्रियों में कात्यायनी अनामिका, नीलेश रघुवंशी, गगन गिल, निर्मला गर्ग, सुनीता जैन, अर्चना वर्मा, अनिता वर्मा, रमणिका गुप्ता आदि प्रमुख हैं| इन कवयित्रियों ने नारी अस्मिता की पहचान और उसे मज़बूत करने के लिए जो प्रयास किया, तथा करती आ रही हैं, उसे परखने की कोशिश ही शोधार्थी द्वारा हुई है| इस शोध प्रबंध का विषय 'नब्बे के दशक की कवयित्रियों की कविताओं में स्त्री विमर्श' है| अध्ययन की सुविधा के लिए इसे पाँच अध्यायों में विभाजित किया गया है| पहला अध्याय 'स्त्री विमर्श: स्वरूप एवं अवधारणा' है, और दूसरा अध्याय 'हिन्दी कविता में स्त्री चेतना का विकास' है| तीसरा अध्याय 'नब्बे के दशक की कवयित्रियों की कविताओं में शोषण के विभिन्न आयाम' है|

चौथा अध्याय 'नब्बे के दशक की कवयित्रियों की कविताओं में पुरुषवर्चस्व का विरोध' है| पाँचवाँ अध्याय 'नब्बे के दशक की कवयित्रियों की जीवन दृष्टि एवं भाषा' है|

पहला अध्याय 'स्त्री विमर्श: स्वरूप एवं अवधारणा' है| इस अध्याय में स्त्रीवाद एवं उसका स्वरूप का विश्लेषण किया गया है| स्त्रियों के अधिकार पर बल देनेवाली विचारधारा ही स्त्रीवाद है| विभिन्न चिन्तकों ने इसको अपने-अपने ढंग से स्पष्ट करने का प्रयास किया है| इसके आधार पर स्त्रीवाद का उद्देश्य है पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था को समाप्त करना, सेक्स और जेंडर को अलग करके देखना, स्त्री की अस्मिता की तलाश करना, उसको मानव के रूप में प्रतिष्ठित करना, स्त्री-पुरुष सहभागिता पर बल देना आदि| भारतीय तथा पाश्चात्य स्त्रीवादी चिंतन पर नारी मुक्ति आन्दोलन का गहरा प्रभाव पड़ा है| इन मुक्ति आंदोलनों के फलस्वरूप स्त्रीवाद के विभिन्न रूप दिखाई देने लगे| इसमें सबसे प्रमुख उग्रवादी स्त्रीवाद, उदारवादी स्त्रीवाद, समाजवादी-मार्क्सवादी स्त्रीवाद आदि हैं| इसके अलावा दलित स्त्रीवाद, पारिस्थितिक स्त्रीवाद, पोस्ट फेमिनिस्म, वुमनिसम आदि कई रूप भी प्रचलित हैं| तमाम नारीवादी विचारों का साहित्य पर गहरी मात्रा में असर दिखाई पड़ता है| आधुनिक साहित्य - उपन्यास, नाटक, कहानी, कविता जैसी सभी विधाओं में नारी का स्वर साफ़ तौर पर मुखरित है| कविता के क्षेत्र में नब्बे के दशक के पूर्व ही पुरुष एवं स्त्री रचनाकारों ने स्त्री पर कविता करना शुरू किया था|

दूसरे अध्याय का शीर्षक 'हिन्दी कविता में स्त्री चेतना का विकास' है| इसे दो भागों में विभाजित किया गया है| नब्बे की पूर्ववर्ती कवयित्रियों की कविताओं में नारी और नब्बे के पूर्ववर्ती कवियों की कविताओं में नारी| वैदिककाल में ब्रह्मवादिनी रोमशा, बौद्धकाल में भिक्षुणी सुमंगलामाता थेरी, भक्तिकाल में मीराबाई आदि पूर्व आधुनिक काल की मुख्य कवयित्रियाँ थी| आधुनिक काल के प्रारंभ में राजाराणी देवी, सुभद्रा कुमारी चौहान, महादेवी वर्मा, शकुन्त माथुर, कीर्ति चौधरी, सुमन राजे आदि

ने नारी समस्याओं को लेकर कविताएँ लिखीं| सत्तरोत्तर काल में स्नेहमयी चौधरी, चंपा वैद, रमणिका गुप्ता, राजी सेठ, कमल कुमार, कुसुम कुमार, प्रभा खेतान, सविता सिंह आदि काव्य लेखन के क्षेत्र में सक्रिय रहीं| पूर्व आधुनिक कालीन कवियों ने नारी को केवल भोग्या के रूप में देखा था| आधुनिक काल में समाज सुधार आन्दोलन के फलस्वरूप नारी के प्रति समाज के दृष्टिकोण में भी बदलाव आया| महावीर प्रसाद द्विवेदी, मैथिलीशरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानंदन पंत, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, नागार्जुन, बालकृष्ण शर्मा नवीन, केदारनाथ अग्रवाल, भारतभूषण अग्रवाल, रघुवीर सहाय आदि कवियों ने नारी के शोषित एवं उपेक्षित जीवन पर अपनी कविताओं के ज़रिए सहानुभूति प्रकट की और साथ ही साथ उसकी दशा सुधारने का प्रयास भी किया|

तीसरा अध्याय 'नब्बे के दशक की कवयित्रियों की कविताओं में शोषण के विभिन्न आयाम' है| इस अध्याय में नारी शोषण के विभिन्न पक्षों का उद्घाटन किया गया है| मुख्य रूप से नब्बे के दशक की कवयित्रियों ने परिवार में हो रहे नारी शोषण का ही पर्दाफाश किया है| गृहस्थी के झंझट में फँसनेवाली नारी, दोहरी ज़िम्मेदारियाँ उठाने वाले नारी, यांत्रिक संबंधों में दम घुटती नारी, परिवार के बाहर एवं भीतर दोयम दर्जे की शिकार नारी आदि नारी जीवन के भिन्न-भिन्न स्थितियों को अनामिका, नीलेश रघुवंशी, अर्चना वर्मा, कमल कुमार, संज्ञा सिंह आदि कवयित्रियों ने अपनी कविताओं में पेश किया है| यौन हिंसा की नृंशसता को अनीता वर्मा, चंपा वैद, वीणा सिन्हा आदि ने व्यक्त किया है| परंपरागत आचार एवं अनुष्ठानों के बहाने हो रहे शोषण नीलेश रघुवंशी की कविताओं में देख सकते हैं| वैश्वीकरण के कारण विज्ञापनों के ज़रिए जो शोषण होता है, निर्मला गर्ग, चंद्रकला त्रिपाठी, अनिता वर्मा आदि की कविताएँ इसका पर्दाफाश करती हैं|

चौथा अध्याय 'नब्बे के दशक की कवयित्रियों की कविताओं में पुरुष वर्चस्व का विरोध' है| इसमें नब्बे के दशक की कवयित्रियों द्वारा सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और औपनिवेशिक वर्चस्व के खिलाफ खड़ा कर दिए प्रतिरोध को स्पष्ट किया गया है| कात्यायनी, नीलेश रघुवंशी, संज्ञासिंह, अनामिका आदि की कविताएँ इसका निदर्शन है|

पाँचवाँ अध्याय 'नब्बे के दशक की कवयित्रियों की जीवन दृष्टि एवं भाषा' है| नब्बे के दशक की कवयित्रियों ने प्रेम, मातृत्व, देह, परिस्थिति, स्वतंत्रता इत्यादि मान्यताओं को स्पष्ट करने का प्रयास किया है| इन कवयित्रियों की भाषा उनकी जीवन दृष्टि को व्यक्त करनेवाली है| अपनी अनुभूत सच्चाई को ही भाषा द्वारा उन्होंने स्पष्ट किया है| घर गृहस्थी से जुड़े रहने के कारण उन्होंने घरेलु शब्दावली का अधिक प्रयोग किया है|

अंत में उपसंहार एवं ग्रंथ सूचि भी लिखे गए हैं|

प्रस्तुत शोध प्रबंध कोच्चिन विज्ञान व प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग की आदरणीय गुरुवर प्रो. के. अजिता के निर्देशन में संपन्न हुआ| उनकी प्रेरणा ने ही मुझे कविता पर शोध करने का काबिल बनाया है| उनके समय-समय के सुझाव से ही यह अध्ययन पूर्ण हो गया है| उनके सलाह और सहयोग के प्रति मैं कृतज्ञ हूँ|

विभाग की भूतपूर्व प्रो.पि.ए. शमीम अलियार के प्रति मैं आभारी रहूँगी, जो मेरी विषय विशेषज्ञा रही है| वे भी मुझे बहुमूल्य सुझाव समय-समय पर देती रही| विभाग के प्रो. षनमुखन के प्रति भी अपना आभार प्रकट करती हूँ, जो कविता संबंधी दिक्कतों को दूर करने में सहायक बने| साथ ही प्रो. आर. शशिधरन के प्रति भी मैं कृतज्ञ हूँ|

कोच्चिन विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग की अध्यक्षा प्रो.के वनजा के प्रति मैं सर्वथा कृतज्ञ हूँ|

विभाग के पुस्तकालय के कर्मचारियों के प्रति मैं आभारी हूँ| इस अवसर पर विभाग के मेरे मित्रों को भी याद करती हूँ| मेरे हर कदम पर प्रार्थना और प्रोत्साहन के द्वारा मेरे साथ देनेवाले परिवारवालों के प्रति भी मैं सर्वथा कृतज्ञ हूँ|

सविनय,

विनीता एन. ए.

विषयानुक्रमणिका

पृष्ठ संख्या

पहला अध्याय

स्त्री विमर्श : स्वरुप एवं अवधारणा

स्त्रीवाद स्वरूप – स्त्रीवाद का उद्देश्य - पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था – नारी की परंपरागत मानसिकता–सेक्स जेंडर – स्त्री पुरुष की सहभागिता – नारी का सजग होना - मानव के रूप में नारी की प्रतिष्ठा - सार्वजानिक निजी भेद - नारी मुक्ति आन्दोलन – पाश्चात्य नारी-मुक्ति आन्दोलन – आन्दोलन की प्रथम लहर – महिला आन्दोलन की दूसरी लहर – भारतीय नारी – आधुनिक काल में नारी - नारीवाद के विभिन्न रूप – उदार नारीवाद – उग्र नारीवाद – समाजवादी/मार्क्सवादी नारीवाद – नारीवाद के अन्य रूप – साहित्य और स्त्रीवाद – स्त्री साहित्य और स्त्रीवादी साहित्य – हिन्दी स्त्रीवादी लेखिकाएँ – निष्कर्ष 1-39

दूसरा अध्याय

हिन्दी कविता में स्त्री चेतना का विकास

हिन्दी कविता में नारी चेतना – नब्बे की पूर्ववर्ती कवयित्रियों की कविताओं में नारी चेतना – ब्रह्मवादिनी रोमशा – सुमंगलमाता थेरी – मीराबाई – राजाराणी देवी – सुभद्रा कुमारी चौहान – महादेवी वर्मा – विद्यावती कोकिल – शकुन्त माथुर – कीर्ति चौधरी – सुमन राजे - कुसुम कुमार – स्नेहमयी चौधरी – प्रभा खेतान – कवियों की कविता में नारी चेतना –पूर्ववर्ती कवियों की कविताओं में नारी चेतना – बीसवीं सदी के कवियों की कविताओं में नारी चेतना – महावीर प्रसाद द्विवेदी – मैथिलीशरण गुप्त – जयशंकर प्रसाद – सुमित्रानन्दन पंत – सूर्यकांत त्रिपाठी निराला – नरेन्द्र शर्मा – नागार्जुन – धर्मवीर भारती – भारतभूषण अग्रवाल– रघुवीर सहाय - निष्कर्ष 40-82

तीसरा अध्याय

नब्बे के दशक की कवयित्रियों की कविताओं में शोषण के विभिन्न आयाम

परिवार में पुरुष की संप्रभुता – गृहस्थी के झंझट में नारी – कामकाजी की स्थिति - वेतन हीन नौकरानी – यांत्रिक संबन्धों में दम घुटती नारी - बनाई गई स्त्री – स्त्री मात्र एक देह – बलात्कार रूपी अत्याचार – परिवार की इज़्ज़त को बचाती लड़कियाँ – देह व्यापार की यंत्रणा – धर्म नैतिकता और स्त्री स्वत्व – धर्म के चक्कर में नारी – वैश्वीकरण का चक्कर – उपभोक्तावादी संस्कृति का जाल – बिकाऊ माल बनती स्त्री – पुरुष केंद्रित अर्थ व्यवस्था में स्त्री – आर्थिक संकट में जीने वाली नारी – देह व्यापार केलिए मज़बूरी - निष्कर्ष 83-133

चौथा अध्याय

नब्बे के दशक की कवयित्रियों की कविताओं में पुरुषवर्चस्व का विरोध

नब्बे के दशक की कवयित्रियों में विद्रोही चेतना – पितृसत्तात्मक समाज और स्त्री विद्रोह – सामाजिक रूढ़ियों के प्रति विद्रोह – स्वतंत्र अस्मिता की चाह – लिंग भेद से मुक्ति - भ्रूणहत्या के खिलाफ – प्रगतिशीलता पर प्रश्न चिह्न – स्वावलंबन का आग्रह – धर्म एवं छद्म नैतिकता का विरोध – बाज़ार के खिलाफ लड़ाई – देह मुक्ति का आग्रह – निष्कर्ष 134-178

पाँचवाँ अध्याय

नब्बे के दशक की कवयित्रियों की जीवन दृष्टि एवं भाषा

कवयित्रियों की जीवनदृष्टि – मातृत्व की भावना – प्रेम की भावना – देह की पहचान – सखी भाव – स्वतंत्रता की चाह – स्त्री और प्रकृति: समान धर्मी – स्त्री पुरुष का पूरक - काव्य भाषा – स्त्री भाषा – नब्बे के दशक की कवयित्रियों की भाषा – स्त्री अनुभवों की सच्चाई - देह से संबंधित 179-237

अनुभवों की भाषा – माँ की भाषा – प्रेम की भाषा – बिंबों प्रतीकों एवं मिथकों का प्रयोग – विभिन्न शैलियों का प्रयोग – घर-गृहस्थी से जुडी शब्दावली – अलंकार, छंद एवं शब्दों का प्रयोग – निष्कर्ष

उपसंहार 238-242

परिशिष्ट 243

संदर्भग्रंथ सूची 244-265

पहला अध्याय

स्त्रीविमर्श : स्वरूप एवं अवधारणा

स्त्रीविमर्श : स्वरूप एवं अवधारणा

'स्त्रीविमर्श' आजकल हिन्दी साहित्य जगत् में सबसे प्रचलित विमर्श है, जिसने भारतीय समाज में स्त्रीवादी अवधारणओं को गति देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। इसकी पहल पश्चिमी जगत् से हुई है। सन् 1980 के बाद भारत में स्त्री, दलित, आदिवासी, जैसे उपेक्षित लोगों की सामाजिक अस्मिता के सवाल वैचारिक विमर्श के केन्द्र में आ गया और इससे स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, आदिवासी विमर्श आदि मजबूत हुए। 'स्त्री-विमर्श' में स्त्री की आदिम यातना से लेकर आज तक की बदहालत का ऐतिहासिक विवेचन ही किया जाता है। 'स्त्री-विमर्श' के सबन्ध में अनामिका का कहना हैं "हिन्दी साहित्य में स्त्री विमर्श कई रंगों में उपस्थित हैं- कहीं प्रत्यक्ष, कहीं परोक्ष, कहीं आडा, कहीं तिरछा। पुरुष स्त्रीवादियों की भी एक अलग कोटि है ।"[1] यह विमर्श मुख्य रूप से स्त्रीवादी अवधारणाओं को ही साहित्य के ज़रिए अभिव्यक्त करता रहता है ।

1.1 स्त्रीवाद स्वरूप

स्त्रीवाद स्त्री की स्वतंत्रता एवं समानता पर बल देनेवाली विचारधारा है । असल में यह स्त्री, मुक्ति संघर्ष की वैचारिकी है । स्त्री, पुरुष-प्रधान समाज में उपेक्षित रही । आधुनिक शिक्षा एवं पश्चिमी संघर्ष से वह जागने लगी। उसके बल पर वह अपनी अस्मिता का संघर्ष जारी रखती है, जिसे स्त्री मुक्ति का संघर्ष कहते

[1] अनामिका – पानी जो पत्थर पीता है -पृ.20

हैं । स्त्री जीवन की सारी समस्याओं की खोज करके, उसके समाधान करने की कोशिश भी इसके तहत ज़ारी है।

अंग्रेजी में स्त्रीवाद को 'फेमिनिज़म' कहते हैं । जिसकी उत्पत्ति लैटिन शब्द 'फेमिना' से हुई, जिसका अर्थ है स्त्री । फेमिनिस्ट शब्द का प्रथम प्रयोग सन् 1895 में, 25 अप्रैल की "अत्तैनम" नामक पत्रिका में हुआ । अपनी स्वतंत्रता को हासिल करने में सक्षम के अर्थ में इसका प्रयोग हुआ।

स्त्रीवाद को एक परिभाषा में सीमित रखना प्रस्तुत विमर्श के विकास पर पाबन्दी लगाना है । झाँसी झेम्स का कहना है " स्त्रीवाद की कोई ऐसी परिभाषा नहीं है जो सबको और सब कहीं सर्वस्वीकृत है |इसका कारण स्त्री अनुभवों की जटिलता होगी |1 फिर भी स्त्रीवाद को स्पष्ट करने का प्रयास कई कोनों से हुआ है । औक्सफोर्ड डिक्शनरी में इसका अर्थ हैः- "स्त्रियों के हक केलिए किए जानेवाले अभियान ही नारीवाद है"। (The advacacy of women's right on the ground of the equality of the sexes)"[2]

मृणाल पाण्डे स्त्रीवाद के सबन्ध में कहती हैः- "नारीवाद कतई स्तियों को बृहत्तर समाज से अलग-थलग रखकर देखने और हर क्षेत्र में पुरुषों के खिलाफ उन्हें प्रोत्साहित करने का दर्शन नहीं । यह तो एक समग्र दृष्टिकोण है, जो

---

[1] **जान्सी** जेम्स –फेमिनिज़्म –पृ 5

[2] www.oxforddictionaries.com/ definition

संवेदनशील नागरिकों में पहले शोषित और प्रवंचित स्त्रियों की स्थिति के प्रति सहानुभूति और मानवीय दृष्टिकोण विकसित करके उसके उजास में उन्हें अपने पूरे समाज के शोषित और प्रवंचित तबकों को समझने की क्षमता देता है। साथ ही उनके प्रति एक तरह की सदयता तथा कर्मठ दायित्वबोध भी जगाता है"।[1] सुराजिन्ता रे के अनुसार "नारीवाद महिला उत्पीडन के विभिन्न पहलुओं को समझने की दिशा में प्रयासरत एक गतिशील और निरंतर परिवर्तित होनेवाली विचारधारा है । जिनमें व्यक्तिगत, राजनीतिक और दार्शनिक पहलू भी शामिल है लेकिन जो एक विचार इन सभी नारीवादी दृष्टिकोणों में समान है, वह यह है कि यह सभी मौजूदा स्त्री-पुरुष सबन्धों को बदलने की दिशा में कार्यरत है।"[2] सुशीला सिन्हा कहते हैं कि "स्त्रीवाद को उसके सही और विशाल अर्थ में समझ लेना चाहिए कि वह स्त्री के रूप में उसकी अस्मिता की गहरी पहचान है और स्त्री समस्याओं के प्रति ईमानदार समझ है |स्त्री अधिकारों के समर्थन के रूप में उसके अर्थ को सीमित नहीं करना चाहिए|"[3]("The word feminism however, must be understood in its broadest sence as referring to an intence awareness of identities as a women and interest in feminine problem. Its meaning should not be restricted to the advocacy of women's rights"[4].) इसप्रकार नारीवाद का दायित्व बहुत

[1] मृणाल पाण्डे – परिधि पर स्त्री -पृ.47
[2] सुरजिन्ता रे - नारीवादी राजनीति -पृ.49
[3] सुशीला सिंह – स्त्रीवाद सिद्धांत, विमर्श एवं विश्लेषण -पृ.21
[4] Sushila singh- Feminism: Theory, criticism,analysis

बडा है। यह स्त्रियों के अधिकार केलिए खडा होता है ।पर यह पुरुषविरोधी दर्शन नहीं। यह तो मानवीयता के आधार पर विकसित समग्र दृष्टिकोण है जो समाज की शोषित स्त्रियों के प्रति ध्यान ले जाता है। नारी शोषण के विभिन्न पहलुओं को समझनेवाली यह विचारधारा निरंतर परिवर्तित होती रहती है।

1.2 स्त्रीवाद का उद्देश्य

स्त्रीवाद एक मानवतावादी विचारधारा है। वह पुरुष विरोध या समाज विरोध का प्रचार प्रसार नहीं करता है। पुरुष वर्चस्ववाले समाज में स्त्री अस्मिता की स्थापना करना उसका मकसद है। इसके लिए एक स्पष्ट विचार के आधार पर स्त्रीवादी आन्दोलन चल रहा है। सारे शोषणों से स्त्री को मुक्त करके एक स्वतंत्र व्यक्ति बनाना इसका उद्देश्य है।

1.2.1 पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था

हमारी सामाजिक व्यवस्था, जिसकी बनावट लिंग के आधार पर हुई उसका वर्चस्व सदा पुरुष के हाथ में है । स्त्री अधीनस्थता की स्थिति में है । बचपन से ही उसके मन में हीनभाव का निर्माण किया जाता है। पुरुष अपने वर्चस्व द्वारा स्त्री को व्यवस्था के ढाँचे में ढालकर अपने अनुकूल उपयोग करते हैं । अर्थात् पितृसत्तात्मक व्यवस्था में स्त्रियाँ बनाई जाती है जिसकी कोई आधार नहीं होती, स्वतंत्र अस्तित्व नहीं होता| पुरुष स्त्री को अपने नियंत्रण में रखने केलिए सुविधानुसार नियम कानून सिद्धांत, बनाते हैं । इसके जरिए व्यवस्था स्त्रियों का शोषण और उत्पीडन करती रहती है । पारिवारिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक सभी क्षेत्रों में पुरुष का वर्चस्व है । स्त्रीवाद इसका विरोध करके स्त्री पुरुष समानता पर

आधारित सामाजिक व्यवस्था पर बल देता हैं । राकेश कुमार का कहना है “स्त्री विमर्श ने दुनिया में जिस विस्फोटक मुद्दे को उठाया है, वह है पितृकवर्चस्व को तोडना और स्त्रियों की मुक्ति हेतु उत्पीडन अन्याय को रोकना।”[1] पाश्चात्य शिक्षा एवं संपर्क से स्त्री जागृत होने लगी, उसी के समानांतर वह पुरुष वर्चस्व को चुनौतियाँ देने लगी।

1.2.2 सेक्स जेंडर

सेक्स शब्द स्त्री पुरुष के बीच के जैविक अर्थ की ओर इशारा करता है, जबकि जेंडर शब्द संस्कृति निर्मित है। नारीवाद में इन दो शब्दों का व्यापक प्रयोग करते हैं । नारीवादियों का मानना है कि स्त्री-पुरुष की जैविक संरचना और पुरुषत्व-नारित्व की अवधारणा के बीच कोई अनिवार्य सहसबन्ध नहीं है । जगदीश्वर चतुर्वेदी का कहना है:- “स्त्री-पुरुष का फर्क शारीरिक है, किन्तु इन दोनों की अस्मिता का निर्माण, क्षमताओं-अक्षमताओं की पहचान एवं सांस्कृतिक रूपों की पहचान का आधार शरीर नहीं है । कोई व्यक्ति स्त्री है या पुरुष यह तो प्रकृति प्रदत्त चीज़ है। किन्तु उसकी लिंग के रूप में पहचान को सांस्कृतिक कारकों के माध्यम से निर्मित किया जाता है। संस्कारों के बहाने स्त्री को अपनी पहचान मिलती है। स्त्री की पहचान जन्मजात न होकर सामाजिक निर्मित है।”[2] ‘द सेकंड सेक्स’ के द्वारा सीमोन द बोउवर ने भी यह कहा था कि सेक्स को जेडंर से अलग

---

[1] राकेश कुमार- नारीवादी विमर्श- पृ 51

[2] जगदीश चतुर्वेदी –स्त्री अस्मिता : साहित्य और विचारधारा –पृ 127-128

समझना चाहिए और महिलाओं का उत्पीडन जो है जेडंर के कारण है। पर समाज में स्त्रैणता की व्याख्या शारीरिक प्रतिमानों के आधार पर ही होती है। परिवार में बचपन से ही लड़कों और लड़कियों को जेडंर भेद के अनुरूप व्यवहार करना, कपडे पहनना आदि प्रशिक्षण निरंतर देते आ रहे हैं। लिंग को आधार बनाकार ही समाज में श्रम विभाजन भी हुआ है । नारीवाद सेक्स विरोध नहीं करता है, पर लिंग-भेद को मानता नहीं। इसलिए नारीवाद सेक्स और जेडंर को अलग अलग देखने की शिक्षा देता है।

1.2.3 नारी की परंपरागत मानसिकता

भारत की स्त्रियाँ प्राचीन काल से ही पुरुषवर्चस्व को आत्मसात करके जी रही है । हमारी परंपरागत संस्कृति जिसका संबन्ध धर्म से है बचपन से ही नारी के मन में यह विचार डालती है कि पति ही परमेश्वर है । उसके बिना वह अपने को अधूरी मानती है | अपने अस्तित्व को नष्ट करके पुरुषवर्चस्ववाले समाज के अनुसार जीने में महत्व ढूँढती है । बेटी, पत्नी,माँ बनकर पुरुष की सेवा करके उसके संरक्षण में जीना अपना कर्तव्य मानती है । मूलचंद्र सोनकर का कहना है:- “विडंबना यह भी है कि स्त्री का जीवन स्तर चाहे जितना ऊँचा और आधुनिक हो, वह धार्मिक अवरोध को अवरोध मानने केलिए तैयार नहीं है | वह युगों से धार्मिक कर्मकांड को अपनी मर्यादा का प्रतीक और पुरुष को अपना सुरक्षा कवच मानती आई है । अपनी इस मानसिक बनावट और बुनावट के कारण वह पति और पुत्र की सलामती केलिए साल भर न जाने कितना व्रत पूजा का कर्मकांड

करती रहती है । लेकिन पुत्री उसकी चिंता के केंद्र में नहीं रहती।"[1] सारे धर्म ग्रंथ उसे इसका प्रशिक्षण देते है । नारीवाद के उदय के फलस्वरूप नारी अपनी बदहालत के बारे में सोचने और विचार करने लगी। नारी की परंपरागत मानसिकता में परिवर्तन लाकर उसे अपने अस्तित्व का साक्षात्कार नारीवाद कर रहा है । रमणिका गुप्ता की राय में " सही मायने में स्त्री अस्मिता का अर्थ होगा स्त्री के प्रति समाज के दृष्टिकोण और मानसिकता में बदलाव । जिसमें स्त्री का खुद का दृष्टिकोण भी शमिल है ।"[2] परंपरा को तोडना व उसका उल्लंघन करना आसान तो नहीं , लेकिन चौतरफे शोषण से मुक्ति चाहती स्त्री केलिए और कोई चारा नहीं, इसीलिए वह परंपरा को ललकारती है।

1.2.4 स्त्री-पुरुष की सहभागिता

समाज के सर्वांगीण विकास केलिए स्त्री-पुरुष की सहभागिता की आवश्यकता है। स्त्री पुरुष की आपसी समझ एवं सामंजस्य की प्रवृत्ति से ही समाज का सर्वांगीण विकास संभव है। क्योंकि समाज रूपी रथ के दो पहिए हैं स्त्री और पुरुष। भारतीय संस्कृति के अर्धनारीश्वर संकल्पना भी स्त्री और पुरुष के समान महत्व की ओर संकेत करती है ताकि दो शरीर और दो आत्माएँ एक दूसरे से युग्मबद्ध हुए बिना अधूरी है। अर्थात स्त्री और पुरुष दोनों अगर एक दुसरे से जुड जाय तो मंगलमय स्थिति का निर्माण कर सकते हैं। स्त्रीवाद सह अस्तित्व का आग्रह करता है। सीमा दीक्षित का कहना है :- "नारी यदि प्रकृति का वैभवपूर्ण

---

[1] मूमचंद्र सोनकर – आज़ाद औरत :कितनी आज़ाद –पृ 120
(सं.शैलेंद्र सागर, रजनी गुप्ता)

[2] रमणिका गुप्ता : स्त्री विमर्श कलम और कुदाल के बहाने – पृ : 55

अनुराग है तो पुरुष अनुरागी है, नारी यदि पथ है तो पुरुष उसका चिर पथिक, वह यदि निर्मल धारावाली सरिता है तो पुरुष अगाध सिन्धु है, जिसमें दोनों का संगम होता है अर्थात् एक नौका है तो दूसरी उसकी पतवार है, नारी यदि देह है तो पुरुष उसका प्राण है, कहीं भी एक दूसरे के अभाव में किसी एक का अस्तित्व नहीं । अतः पुरुष एवं नारी की पूरकता निर्विवाद सत्य है, ग्राह्य, सहज एवं नैसर्गिक है।"1 जिसप्रकार पृथ्वी में जल और थल का अन्योन्याश्रित संबन्ध है उसी प्रकार समाज में स्त्री और पुरुष अन्योनश्रित संबन्ध है।

1.2.5 नारी का सजग होना

जन्म से लेकर मृत्यु तक नारी चहूँमुखी शोषण का शिकार हो रही है। आजकल उसकी सबसे बडी समस्या बन गयी है उसका शरीर । उसे शरीर को लेकर विभिन्न समस्याओं का सामना करना पडता है । नारी पर हो रहे विभिन्न अत्याचारों की ओर नारीवाद स्त्री का ध्यान आकृष्ट कराता है।

1.2.6 मानव के रूप में नारी की प्रतिष्ठा

स्त्रीवाद का मुख्य लक्ष्य स्त्री को मानव या व्यक्ति के रूप में प्रतिष्ठित करना है। क्योंकि प्राचीनकाल से ही उसे देवी के रूप में देखने की परंपरा हमारे यहाँ कायम थी। आजकल औपनिवेशिक संस्कृति के प्रभाव से उसे वस्तू या भोग्या के रूप में ही देखने लगा है । पुरुषवर्चस्व उसे मात्र शरीर के रूप में ही देखता है । उसका अपना कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं होता। नारीवाद नारी को मानव के रूप

---

[1] सीमा दीक्षित –स्त्री अस्मिता –पृ 16

में देखने की बात पर बल देता है। मृणाल पाण्डे का कहना हैः- "स्त्री के अस्तित्व को, उसके पुरुष से जुडे संबन्धों तक ही सीमित करके न देखा जाय बल्कि पुरुष की तरह उसे भी मानवता का एक भिन्न तथा अनिवार्य और पूरक तत्व माना जाये।"[1] स्त्री को एक व्यक्ति का दर्जा मिलाना चाहिए, जिसकेलिए वह लड रही है।

1.2.7 सार्वजनिक- निजी भेद

परंपरागत राजनीतिक सिद्धांतों ने मानव अस्तित्व के निजी और सार्वजनिक दायरों के बीच फर्क किया है। प्राकृतिक काम माननेवाली यौनिकता, बच्चा पैदा करना, बच्चों का पालन पोषण आदि निजी दायरे में आते है। इस दृष्टिकोण के अनुसार परिवार जैसी संस्थाओं को राज्य कार्यक्षेत्र से बाहर माना जाता है । नारीवाद इसका विरोध करती है। क्योंकि परिवार में ही नारी को सबसे अधिक काम व दायित्व निभाना है । वह माँ है, जो स्त्री के सिवा पुरुष के वश की बात नहीं है । सार्वजनिक निजी विभाजन के कारण परिवार में काम व उत्पीडन को वैधता नहीं मिलती, समाज के काम व उत्पीडन को ही वैधता मिलती है। नारीवादियाँ निजी और सार्वजनिक क्षेत्र को एक ही कसौटी में कसने का आह्वान करती है। इसे पश्चिमी दर्शन में मुख्यधारा का स्थान प्राप्त है।

---

[1]मृणाल पाण्डे - स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीति तक - पृ 18

1.3 नारी-मुक्ति आन्दोलन

नारीवाद के सन्दर्भ में सबसे प्रचलित शब्द है 'नारीमुक्ति आन्दोलन'। आन्दोलन धर्मिता सभी विचारधाराओं का एक पहल है। नारी अस्मिता केलिए नारीमुक्ति आन्दोलन की भूमिका को इसी अर्थ में देखना चाहिए। नारी जागरण या अपने अधिकारों के प्रति जाग्रत होना पहले पश्चिम में ही हुए। डॉ. ओमप्रकाश शर्मा का कहना हैः "पश्चिमी समाज में शताब्दियों की दासता, हीनता, प्रताडना व असंतोष से तडपती नारी जाति ने जब मुक्ति केलिए जागृत होकर संघर्ष का बिगुल बजाया, जो बाद में अनवरत काल प्रवाह से गुज़रते हुए छोटी-छोटी माँगों और संघर्षों के समन्वित प्रयास से बृहत्तर नारी जाति से संबद्ध आन्दोलन के रूप में परिलक्षित हुआ, तो इसे ही नारी मुक्ति आन्दोलन के नाम से पुकारा गया।"[1] आगे चलकर नारीवाद विभिन्न रूपों में दिखाई पडने लगे |

पाश्चात्य और भारतीय नारी मुक्ति आन्दोलन में परिवेशगत अन्तर ज़रूर था। साथ ही दृष्टिकोण में भी अन्तर था। आर्थिक स्वतंत्रता, मताधिकार, समानता की माँग पाश्चात्य स्त्री संघर्ष के प्रमुख मुद्दे थे । पर भारतीय नारी अपने जीवन जीने का अधिकार हासिल करने केलिए लड रही थी। भारतीय नारी पर पाश्चात्य नारी मुक्ति आन्दोलन का गहरा प्रभाव पडा है । आज इनके कई रूप देख सकते हैं ।

[1] ओमप्रकाश शर्मा – समकालीन महिला लेखन –पृ 63

1.3.1 पाश्चात्य नारी-मुक्ति आन्दोलन

सर्वप्रथम अपनी रचनाओं के माध्यम से स्त्रियों के अधिकार केलिए आवाज़ उठाने का श्रेय 17वीं शती में जीवित ईसाई सन्यासिनी जुआना को प्राप्त है। जुआने के संबंध में डॉ एम लीलावती का कहना है "उन्होंने यह जानते हुए ही सन्यास का वरण किया था कि विवाह, पति एवं बच्चा स्त्री की पराधीनता के कारण है |"[1] पुरुष समान मानवाधिकार, पुरुष की कपट नैतिकता, स्त्री शिक्षा आदि के संबन्धी अपने तर्कों को उन्होंने प्रस्तुत किया। पर कैथलिक चर्च ने जल्दी ही उसे छुप कराया।

1.3.1.1 आन्दोलन की प्रथम लहर

फ्रान्स के क्रान्ति और औद्योगिक क्रान्ति ने समाज के हर वर्गों को प्रभावित करने के साथ ही स्त्री जाति को भी प्रभावित किया। फ्रान्सीसी क्रान्ति के प्रमुख विचार समानता, स्वतंत्रता, बन्धुत्व सभी देशों में फैलने लगे । रूसो, वालटयर, मांटेस्व्यू के लेखन में स्त्रियों के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण का अभाव था। फिर भी समग्र सामाजिक उद्बोधन से स्त्रियाँ भी जागरित हो गयी। बाद में महिला विदुषियों द्वारा स्त्री समस्याओं को उठाये जाने लगा, जिसका एक लंबा इतिहास है।

सन् 1792 में इग्लेंड में मेरी वुलस्टोन क्राफ्ट ने 'विनडिकेशन आफ दि राइट्स ओफ विमेन' नामक पुस्तक द्वारा नारी अधिकारों की माँग की। उन्होंने फ्रेंच राज्यक्रान्ति के आदर्शों के सन्दर्भ में स्त्री का विचार किया। लड़का-लड़की की

---

[1] डॉ एम लीलावती –फेमिनिज़्म : चरित्रपरमाया ओरु अंवेषणम–पृ 11

समान शिक्षा, स्त्री का प्राकृतिक अधिकार आदि केलिए उन्होंने आवाज़ उठायी। क्राफ्ट ने जो समान अधिकार की बात माँगी थी, वह आगे चलकर मतदान के अधिकार, समान कानूनी अधिकार, राजनीति, रोज़गार आदि क्षेत्रों पर समान स्तर का अधिकार आदि आन्दोलनों का कारण बन गया।

उन्नीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में शिक्षा कानून, राजनीति, आदि सभी क्षेत्रों में समान अधिकार की माँग चारों ओर से उठने लगी। अमेरिका की प्रमुख नारीवादी एलिज़ाबेथ केडी स्टैंन्टन की पुस्तक "सोने का फल कन्वेशन आफ 1848" एक ऐसा घोषणापत्र था जिसमें महिलाओं केलिए मतदान, संपत्ति, शिक्षा, रोजगार आदि सभी क्षेत्रों में समान अधिकार की माँग उठायी थी, साथ ही राजनीति और गिरिजाघरों में सार्वजनिक भागीदारी के अधिकार की माँग की । उन्होंने सभी धर्मों को नकारा था क्योंकि उनकी राय में धर्म ही नारी की गुलामी का प्रमुख कारण था।

सबसे पहले सन् 1857 में अमेरिका में कामगार औरतों ने अपने शोषण के विरूद्ध आवाज़ उठायी थी। 8 मार्च को अपने श्रम केलिए अधिक वेतन मिलने केलिए और अपने काम के घंटे को कम करने केलिए अपने काम बन्द करके उन्होंने सड़कों पर प्रदर्शन किया । प्रथम संगठित इस प्रदर्शन को पुलिस द्वारा कुचल दिया गया था। क्षमा शर्मा का कहना है "विश्व में स्त्रियों का यह प्रथम प्रदर्शन था, जिसे उस समय की ट्रेड यूनियनों ने भी पसन्द नहीं किया । किसी भी प्रकार के समर्थन

के अभाव में यह आन्दोलन पुलिस द्वारा कुचला दिया गया था, पर महिला इतिहास में यह एक अमिट लकीर छोड गया था। महिलाओं के इस प्रथम संगठित प्रदर्शन को ही महिला आन्दोलन की प्रेरणा मानते हुए 8 मार्च सदा केलिए अर्न्तराष्ट्रीय महिला संघर्ष दिवस के रूप में मनाया जाने लगा।"[1] आज भी इस संगठित प्रयास की याद में 8 मार्च को अर्न्तराष्ट्रीय महिला दिवस के रूप में मनाया जाता है।

ब्रिटन के जान स्टुअर्ट मिल अपने समय के प्रसिद्ध दार्शनिक, अर्थशास्त्री एवं राजनीतिक विचारक थे। वे पूँजीवादी आर्थिक सामाजिक ढाँचे की तमाम बुराइयों के मुखर आलोचक थे। उन्होंने सन् 1869 में अपनी पुस्तक 'ओन दि सब्जेक्शन आफ विमन' द्वारा पितृसत्तात्मक व्यवस्था के विरूद्ध आवाज़ उठायी। मिल ने स्त्री के मतदान के अधिकार केलिए भी आवाज़ उठायी। उनका कहना हैः- "जन आस्था के चुनाव के सन्दर्भ में संवैधानिक कानून का कर्तव्य है कि वह मतदान के अधिकार को आवश्यक सुरक्षा सीमाएँ प्रदान करें। लेकिन अगर पुरुषों के सन्दर्भ में सुरक्षा पर्याप्त है, तो महिलाओं के सन्दर्भ में भी किसी अन्य की आवश्यकता नहीं है। जिन शर्तों व सीमाओं के तहत पुरुषों को मताधिकार मिलता है, उन्हीं के तहत महिलाओं को भी मताधिकार न मिलने का अंशमात्र भी औचित्य नहीं है।"[2] द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद नारीमुक्ति आन्दोलन ने और ज़ोर

[1] क्षमा शर्मा – स्त्रीत्ववादी विमर्श : साहित्य और समाज –पृ 175
[2] जान स्टुअर्ट मिल – ओन दि सब्जेक्शन ओफ विमन ((अनुवादक –प्रगति सक्सेना)) –पृ 83

पकडा। सन् 1945 में पेरिस में 'विमेन्स इन्टरनाशनल डेमोक्रेटिक फेडरेश्न' की स्थापना कर सभी देशों की स्त्रियों द्वारा आन्दोलन को विश्व स्तर पर संगठित रूप में चलाने का निश्चय किया गया।

बीसवीं शती के नारीवादी चिन्तको में वर्जिनिया वुलफ का प्रमुख स्थान है। उनका प्रसिद्ध ग्रन्थ ' ए रूम ओफ वन्स ओन' 'फेमिनिस्ट बैबिल' नाम से जाना जाता है। उनका कहना है:- "अगर औरत को कथा कहानी लिखनी है तो उसके पास पैसा होना चाहिए और अपना कमरा होना चाहिए।"[1] इस ग्रन्थ के द्वारा स्त्री-पुरुष समानता केलिए उन्होंने आवाज़ उठायी।

आगे सन् 1949 में फ्रान्स की बुद्धिजीवी एवं सक्रिया राजनैतिक कार्यकर्ता सीमोन द बुआ ने ' द सेकंड सेक्स' को प्रकाशित की। यह पुस्तक एक ऐसे समय में छपी जब अंतराष्ट्रीय स्तर पर महिलाओं के मुद्दों को लेकर कोई नई सफलता नहीं दिख रही थी। उन्होंने पितृसत्तात्मकता के विरूद्ध अपनी पुस्तक की द्वारा आवाज़ उठायी। "सच्चाई यह है कि पितृसत्तात्मक ताकत से पुरुष ने औरत का प्रत्येक अधिकार छीन लिया है ।"[2] सीमोन ने अन्य तमाम चीज़ों के बावजूद स्त्री के अपने शरीर को ही उसकी गुलामी का मुख्य कारण घोषित किया। उन्होंने समाज में स्त्री की अधीनस्थता की स्थिति व्यक्त करके उसमें जागृति लाने का कार्य किया।

---

[1] वर्जिनिया वुल्फ – ए रूम ओफ वन्स ओन (अनुवादक गोपाल प्रथान) – पृ. 16

[2] सीमोन द बोउवर – स्त्री उपेक्षिता (अनुवादक –प्रभा खेतान)पृ 59

1.3.2 महिला आन्दोलन की दूसरी लहर

सन 1960 के दशक में महिला आन्दोलन संबन्धी अनेक सवालों को लेकर, राजनैतिक सक्रियता की एक नई लहर काफी नाटकीय ढंग से उभरी। इस लहर के दौरान महिला मुक्ति को समर्पित कई नए समूह बने। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद तकनीकी - आर्थिक - समाजिक एवं शैक्षणिक क्षेत्रों में अभूतपूर्व प्रगति हुई थी। इसी के साथ यूरोप तथा उत्तरी अमेरिका के देशों में अपूर्व आर्थिक विकास हुआ । इस विकास के कारण श्रम की माँग बढी, और महिलाओं के श्रम की माँग भी बढी । जैसे जैसे महिलाएँ रोज़गार तथा कामकाज की दुनिया में प्रविष्ट हुई, उनकी स्थिति और आत्मबोध में भी बदलाव आए। बीसवीं सदी की शुरूआत से ही घर के बाहर काम करनेवाली महिलाओं की संख्या धीरे धीरे बढ रही थी। 1960 के दशक में महिलाओं के व्यावसायिक एवं शैक्षिक विकल्पों का दायरा धीरे-धीरे बढ रहा था, किन्तु इसके साथ काम के क्षेत्र में महिलाओं के प्रति भेदभाव भी बढा। इससे महिलाओं के प्रति जेंडर अनुसार अन्याय के बारे में जागरूकता बढी और इसके खिलाफ आवाज उठाने लगी। 1960 के दशक में गर्भ निरोधक गोलियों का आगमन से महिलाओं को अपने प्रजनन, स्वास्थ्य और यौनिकता पर स्वयं संचालित करने का अवसर मिला।

सन् 1963 में अमेरिकी लेखिका बेट्टी फ्राइडन ने 'द फेमिनिन मिस्टिक' नामक अपनी पुस्तक द्वारा नारी संबन्धी अपने नये विचार प्रस्तुत किया। उन्होंने परंपरा से कैद करके रखे गये स्त्री के आदर्श स्वरूपों को तोडकर अपने आपको एक

व्यक्ति के रूप में तलाशने का आह्वान किया। आशाराणी व्होरा का कहना है: "बेट्टी फ्राइडन ने अपने व्यापक अध्ययन द्वारा सैकडों तथ्य और आँकडे जुटा कर यह सिद्ध किया कि पुरुष प्रधान समाज ने मनोवैज्ञानिक दबाव डालकर स्त्रियों को वासना-पूर्ति का साधन बनने और माँ, गृहणी तथा रमणी की भूमिकाएँ ही स्वीकार करने केलिए विवश किया है, इसीसे स्त्रियों की मौलिक प्रतिभा कुंठित हुई है, समाज में उच्छृंखलता और अस्थिरता बढी है तथा घर के बाहर कार्यक्षेत्र में नारी के बढते कदम अपनी आधी मंजिल से ही फिर पीछे लौटने लगे है।"[1] बेट्टी फ्रीडन की राय में 'फेमिनिन मिस्टिक' वह रहस्यात्मक स्त्री सुलभ गुण है जिसके कारण महिलाएँ अपने 'उचित स्थान' में यानि कि पत्नी और माँ की भूमिका में घर-गृहस्थी संभालते हुए सफल और संतुष्ट जीवन जी सकती है। यह रहस्यमय स्त्री गुण और इसके साथ की 'स्त्रियोचित स्थान' की अवधारणा समाज में इतनी प्रतिष्ठित और सर्वमान्य थी कि स्वयं महिलाएँ भी इनको सहज स्वीकार ही नहीं आत्मसात भी कर लेती थी। ऐसी स्थिति में जब कुछ महिलाएँ अपनी सीमित भूमिका और सतही जीवन से असंतुष्ट हो उठी, तो उनके पास अपनी व्यथा को व्यक्त करने केलिए शब्द भी नहीं था। यह 'द प्रोबलम देट हैड नो नैम' माना गया, ऐसी असंतुष्ट महिलाओं को आसामान्य या पथभ्रष्ट माना जाता था । स्त्रियों की इस मूक कुण्डा को स्वरबद्ध करने में बेट्टी फ्राइडन का योगदान अत्यन्त महत्वपूर्ण था। उनके कारण स्त्रियोजित भूमिका की रूढिवादी परिकल्पना से निराशित एवं कुंठित महिलाएँ महिला आन्दोलन की राजनीति में उतरीं।

---

[1] आशावाणी व्होरा – नारी शोषण आइने और आयाम –पृ 241

आगे जर्मन ग्रिअर ने अपनी पुस्तक 'दि फीमेल युनक' में स्त्री के लौगिक अधिकारों को स्त्रीत्व की ओट में कैसे नकारा जाता है, इसका विवेचन किया । आगे केट मिलट द्वारा 'सेक्सुअल पोलिटिक्स' की रचना हुई इसमें पुरुष वर्चस्व की लैंगिक राजनीति को स्पष्ट किया गया है। शूलमित्त फयरस्टोन ने 'द डायलेटिस्क आफ सेक्स' द्वारा उग्रवादी नारीवाद का समर्थन किया। उनकी राय में समाज में लैंगिकता के कारण ही अन्याय अत्याचार हो रहा है।

1.3.2 भारतीय नारी

भारतीय स्त्री की स्थिति को समझने केलिए हमें प्राचीनकाल से आधुनिक काल तक की परिस्थिति का अध्ययन करना पडता है। क्योंकि इस अन्तराल में भारतीय नारी की जीवन परिस्थिति में कई उतार-चढाव आए। वैदिककाल में स्त्री और पुरुष दोनों को समान रूप से स्वतंत्रता थी। सामाजिक, धार्मिक क्षेत्रों में उन्हें पूरी सहभागिता प्राप्त थी। स्त्रियाँ उच्च शिक्षा की अधिकारिणी थी। बहुपत्नी विवाह पर नियंत्रण था। विधवा विवाह कर सकती थी।

रामायण महाभारत काल में स्त्रियों के विवाह की आयु घट गई। बहुपत्नी प्रथा का प्रचार हो गया । पतिसेवा और आज्ञापालन स्त्रियों का कर्तव्य हो गया। विधवा विवाह पर प्रतिबन्ध लगाना शुरु किया। पत्नी पर पति का मनमाना अधिकारों की शुरुआत भी हुई।

स्मृतिकाल में नारी की स्थिति और भी निकृष्ट हो गयी। विवाह की आयु और घटकर 8-9 साल माने जाने लगी। स्मृतिकार मनु ने 'मनुस्मृति' की रचना करके स्त्रियों को निकृष्टतम स्तर पर पहूँचा दिया।

मध्यकाल में भारत पर मुसलमानों के आगमन नारी जीवन को अत्यन्त दयनीय बना दिया। बालविवाह, बेजोड विवाह, अनमेल विवाह, पर्दा प्रथा, सती प्रथा, दहेज शोषण आदि के कारण नारीजाति की अवनति होती रही। नौकरी केवल निम्नवर्ग की स्त्रियाँ ही कर सकती थी। इसप्रकार मध्यकाल में स्त्रियों का समस्त अधिकार छीन गये।

1.3.2.1 आधुनिक काल में नारी

सदियों से पुरुषों द्वारा नारी पर की गयी ज्यादतियाँ भारत में नारीमुक्ति आन्देलन का कारण बन गयीं। पर विडंबना यह है कि भारत में सबसे पहले इसकेलिए प्रयास पुरुषों द्वारा ही हुआ। अंग्रेज़ों के प्रभाव से भारत के समाज सुधारकों एवं राजनीतिज्ञों ने नारी की परिवारिक एवं सामाजिक स्थिति सुधारने का प्रयास किया। उन्होंने नारी पर होनेवाले अत्याचारों का घोर विरोध किया। सती-प्रथा, बाल विवाह, अनमेल विवाह, पर्दा प्रथा, अशिक्षा विधवाओं के साथ दुर्व्यवहार आदि के खिलाफ समाज सुधारकों ने ध्यान दिया।

भारत में स्त्री सुधार आन्दोलन का प्रारंभ करने का श्रेय राजा राममोहन राय को प्राप्त है । उन्होंने उस समय समाज में धार्मिक परंपरा के रूप में प्रचलित सती-प्रथा के विरूद्ध आवाज़ उठायी । इसके फलस्वरूप बंगाल प्रेसिडेन्सी द्वारा सती प्रथा को अवैध घोषित किया गया, साथ ही जबरन सती करनेवालों केलिए दण्ड का प्रावधान किया गया । उन्होंने विधवा विवाह का प्रोत्साहन किया और कन्यावध बन्द कराने का प्रयास भी उन्हीं की ओर से हुआ | स्त्री शिक्षा केलिए उन्होंने कठिन प्रयत्न किया। उनकी सुधार भावना के संबन्ध में मीराकान्त का कहना हैः- "महिलाओं की समस्याओं से जुडे समाज-सुधार के कार्य में राजा राममोहन राय को जिस आधार ने प्रेरणा दी, वह था मानवतावादी तार्किक विचारधारा । उन्होंने स्त्री-पुरुष संबन्ध को भी इसी परिप्रेक्ष्य में देखा और यही कारण था कि सती प्रथा के खिलाफ कानून बन जाने पर भी वे संतुष्ट नहीं हुए। उन्होंने बहुविवाह प्रथा के खिलाफ भी आवाज़ उठायी। महिलाओं के संपत्तिगत अधिकारों केलिए भी उन्होंने संघर्ष किया । साथ ही दहेज प्रथा व लड़कियों की बिक्री का भी उन्होंने जमकर विरोध किया। कुल मिलाकर वे मध्ययुगीन रूढियों के विरूद्ध एक नई चेतना लाने केलिए जीवनपर्यन्त सक्रिय रहे ।"[1] उन्होंने सन् 1828 में 'ब्रहमसमाज' की स्थापना की और इसके द्वारा महिला शिक्षा और विधवा विवाह केलिए काफी कार्य किये।

ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ब्रहमसमाज से जुडे व्यक्ति थे । उन्होंने भी बालविवाह, बहुविवाह आदि का विरोध किया । स्त्री शिक्षा और विधवा

[1] मीराकांत – अन्र्तराष्ट्रीय महिला दशक और हिन्दी पत्रकारिता – पृ 63

पुर्नविवाह् को प्रोत्साहन दिया । उनके प्रयत्न स्वरूप सन् 1856 में 'विधवा-पुर्नविवाह सुधार अधिनियम' पारित हुआ । जिसकी वजह् से विधवा विवाह् को कानूनी मान्यता मिल गयी। उनके प्रयत्न स्वरूप कानूनन विवाह् की आयु को बढा दिया गया। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने सन् 1875 में 'आर्यसमाज' की स्थापना करके, बालविवाह्, बहुविवाह्, अनमेल विवाह्, दहेज प्रथा आदि का विरोध किया। नारी शिक्षा केलिए कई स्कूलों एवं कालेजों की स्थापना की। उनके द्वारा लिखित 'सत्यार्थ प्रकाश' महिलाओं केलिए पूजनीय ग्रन्थ है ।

भारत के इतिहास में पहली बार पूना के निवासी महात्मा फुले ने सर्वप्रथम महिलाओं केलिए स्कूल खोला। उन्होंने अपनी पत्नी को सर्वप्रथम शिक्षा दी और उन्हें प्रशिक्षण देकर शिक्षिका बनायी । उन्होंने 'सत्यशोधक-समाज' की स्थापना की, जहाँ पर व्यक्ति को वादा करना पडता था कि वह् बेटी और बेटे को समान रूप से शिक्षित करेगा। उन्होंने विधवाओं के बाल मुड़वाने के खिलाफ संघर्ष किया। उनकी पत्नी श्रीमती सावित्रीबाई ने लडकियों को स्कूल में पढाना शुरू किया। इसकेलिए उन्हें कई अपमान सहना पडा। उन्हीं के कारण आज स्कूलों, कालेजों में इतनी ज़्यादा संख्या में स्त्रियाँ शिक्षा पा रही है।

फुले के 'सत्यशोधक समाज' में कार्य करनेवाली ताराबाई शिदें का योगदान महत्वपूर्ण है । वह् विद्रोही व्यक्तित्ववाली थी। उनकी प्रसिद्ध पुस्तक है 'स्त्री पुरुष तुलना'। उन्होंने इसी पुस्तक में 'स्त्री गृहबंदीशाला में गुलाम है' शीर्षक

से लेख लिखकर सबसे पहले पुरुष प्रधान समाज को खुलकर चुनौती दी । उन्होंने फुले के आन्दोलन को आगे बढाने में सक्रिय योगदान किया।

महिला सुधार तथा उत्थान केलिए प्रयत्न किए महिलाओं में पंडिता रमाबाई (1858-1922) का स्थान सर्वोच्च है। उन्होंने मुबंई में 'आर्य महिला समाज' की स्थापना की । सन् 1890 में मुबंई में हुए कांग्रेस के राष्ट्रीय अधिवेशन में उन्होंने यह प्रश्न उठाया कि यहाँ पर प्रतिनिधि के रूप में स्त्री को प्रवेश क्यों नहीं है । इसका असर जल्दी हुआ, काशीबाई कानेटकर जैसी स्त्री को तब प्रतिनिधि के रूप में लिया गया। उस समय राजनैतिक दृष्टि से यह घटना महत्वपूर्ण थी।जब भारत में शिक्षा के संबन्ध में जांच पडताल केलिए इग्लैंड से हंटर कमीशन बिठाया गया, तब रमाबाई ने स्वयं उनके सामने जाकर महिलाओं की शिक्षा के संबन्ध में बातचीत की और भारत की स्त्रियों के अर्थिक स्वावलंबन केलिए तांत्रिक शिक्षा की माँग की। बाद में उन्होंने देखा कि 'आर्यसमाज' स्त्रियों को मात्र सीता के रूप में प्रतिष्ठित करना चाहता है, अतः उन्होंने हिन्दु-धर्म का त्याग करके ईसाई धर्म स्वीकार किया। कई महिला शैक्षणिक संस्थाओं की शुरुआत पंडिता रमाबाई ने की। डॉ आनन्दीबाई, और डॉ.रख्माबाई ने भी महिलाओं के सुधार केलिए कई कार्य किये। डॉ. रख्माबाई ने उस समय 'टाइम्स आँफ इंडिया में 'भारतीय समाज में स्त्रियों की स्थिति' लिखकर भारतीय स्त्रियों की तस्वीर दुनिया के सामने प्रकट की। उन्होंने डाँक्टर की डिग्री हासिल करके

गुजरात में रहकर महिलाओं और लडकियों को वैद्यकीय सेवा देकर अपना जीवन बिताया।

स्वामी विवेकानन्द ने भी नारी सुधार केलिए प्रयत्न किया । उन्होंने स्त्री स्वाधीनता पर बल दिया। स्त्रियों की दुर्दशा केलिए पुरुषों को ज़िम्मेदार माना । स्त्रियों को सुशिक्षित कराने केलिए बालिका विद्यालय की स्थापना की, जो रामकृष्ण शारदा मिशन, भगिनी निवेदिता बालिका विद्यालय के नाम से प्रसिद्ध हुआ, आज भी वह कार्यरत है।

रवीन्द्रनाथ टैगोर की पुत्री स्वर्णकुमारी देवी ने सन् 1886 में 'साखी समिति' नामक एक महिला संगठन शुरु किया जिसका उद्देश्य विधवा शिक्षा थी। उन्हीं वर्षों में उन्होंने महिला शिल्प मेला द्वारा भारतीय स्त्रियों द्वारा तैयार हस्तशिल्प की बिक्री की गयी। स्वर्णकुमारी देवी की पुत्री सरला देवी घोषाल भी आत्मनिर्भर तथा विद्रोही महिला थी। भारत की स्वतंत्रता प्राप्ति केलिए, स्त्री-पुरुष समान सहयोग केलिए गाँधीजी ने आह्वान किया। उनकी प्रेरणा से सन् 1930 में 'नमक सत्याग्रह' में हज़ारों स्त्रियाँ भाग लिया ।

समाज सुधारकों के इन प्रयत्नों व सेवाओं का गंभीर प्रभाव भारतीय व्यवस्था एवं नारी समाज पर पडा। कई स्त्रियाँ घर से बाहर निकलकर समाज सुधार आन्दोलन एवं राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने लगी । स्त्रियाँ पत्र-पत्रिकाओं का संपादन करने लगी। भीकाजी कामा, ऐनी बेसेंट, सरोजनी नायडू, राजकुमारी

अमृतकौर ,विजयलक्ष्मी पंडित, दुर्गाबाई देशमुख, कमला देवी चाट्टोपाध्याय अरुणा आसफ अली, सुचेता कृपलानी, कैप्टन लक्ष्मी आदि ने उस समय राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लिये।

महिलाएँ धीरे धीरे जागरूक होने लगी और कई महिला संगठनों की स्थापना भी हुई। असहयोग आन्दोलन ने नारी मुक्ति को मुख्य मुद्दा बनाया। कोग्रस ने भी नारी सहभागिकता पर बल दिया। सन् 1917 में एनी बेसेंट काँग्रेस की अध्यक्ष बनी। राधा कुमार का कहना है "उसी वर्ष श्रीमती बेसेंट को काँग्रस का अध्यक्ष चुन गया और वे काँग्रेस की पहली महिला अध्यक्ष बनी।"[1] इसके बाद सन् 1925 में सरोजनी नायडू, सन् 1939 में नालिनी सेन गुप्ता, आदि भी काँग्रस की अध्यक्षा बन गयी। भारतीय स्वाधीनता आन्दोलन स्त्रियों की स्वाधीनता का आन्दोलन बन गया।

बीसवीं शताब्दी महिला जागरण का युग है। आशाराणी व्होरा की राय में "बीसवीं सदी को महिला जागरण का युग कहा जाता है। महिलाओं के संगठित आन्दोलन हर दिशा में हो रहे है। अपने नागरिक अधिकारों केलिए वे लड रही है। समाज और परिवार में सुरक्षित स्थिति केलिए, रोज़गार और आत्मनिर्भरता केलिए महिला कर्मचारियों की आर्थिक सुरक्षा केलिए कानून पास करवाए जा रहे है।"[2] परिवार कल्याण और बालकल्याण की योजनाएँ चलाई जा रही है। राष्ट्रीय

---

[1] राधाकुमार- स्त्री संधर्ष का इतिहास - पृ 108

[2] आशाराणी व्होरा - नारी शोषणः आइने और आयाम -पृ 239

एवं अंतराष्ट्रीय 'महिला वर्ष' भी मनाने लगे और कई तरह की योजनायें चलाने लगी । महिला उत्थान के विशेष कार्यक्रमों केलिए 1975 से 1985 तक अंतराष्ट्रीय महिला दशक के रूप में मनाया गया । आशाराणी व्होरा का कहना है "सन् 1975 के महिला वर्ष के बाद हमने सन् 1976-85 तक पहला तथा सन् 1986-95 तक दूसरा 'महिला दशक' मनाया। इस दौरान विश्व के सभी देशों में महिलाओं केलिए प्रगति के रास्ते तलाश किये गये । उनकेलिए शिक्षण- प्रशिक्षण व रोज़गार के अवसर जुटाये गये। राजनीतिक, प्रशासनिक, सामाजिक क्षेत्रों मे उनकी हिस्सेदारी केलिए जगह बनायी गयी।" [1] इस तरह के प्रयत्नों के फलस्वरूप सन् 1988 में महिलाओं के स्वास्थ्य, शिक्षा और राजनीतिक हिस्सेदारी की विस्तृत योजनाओं के साथ 'राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य योजना' तैयार की। ग्रामीण क्षेत्रों में महिलाओं और बच्चों के विकास से संबन्धित स्कीम DWCRA (ड्वाक्रा) लागू की गई। दहेज के विरुद्ध, बलात्कार के विरुद्ध, घरेलू हिंसा के विरूद्ध कानून तैयार हो गये। पंचायतों में एक तिहाई सीट महिलाओं केलिए आरक्षित करके सन् 1993 में 'पंचायती राज बिल' पेश किया। पंचायतीराज कानून में जनवरी 2000 में किए गए बदलाव के तहत वार्ड सभाओं के आयोजन की व्यवस्था हुई। वार्ड व ग्राम सभाओं में अन्य आरिक्षत वर्गों के साथ महिलाओं के दस प्रतिशत कोरम का निर्धारण भी किया गया। वर्ष 1997 में उच्चतम न्यायालय ने कार्यस्थल पर

---

[1] आशाराणी व्होरा - इक्कीसवीं सदी की ओर (स.सुमन कृष्णकान्त) -पृ 31

महिलाओं का यौन शोषण रोकने केलिए ऐतिहासिक फैसला व दिशानिर्देश किये। इसके परिणामस्वरूप राज्य स्तर पर गृहसचिव के साथ महिला संगठनों की बैठकें महिला उत्पीडन के मामलों की समीक्षा केलिए शुरु की गई। स्थानीय तथा राष्ट्रीय राजनीति में महिलाओं की भूमिका बढाने में कोशिशें अभी भी जारी है।

1.4 नारीवाद के विभिन्न रूप

नारी मुक्ति आन्दोलन प्रबल होने लगा। अनुयायियों व सदस्यों की संख्या में वृद्धि होने लगी, उसी के अनुसार विचार विस्तार पाने लगा। इसी के तहत उसमें नरम, गरम आदि गुटों में नारीवाद बंटने लगे। देश एवं काल के अनुसार गुटों में उतार-चढाव भी दिखाई देने लगे। मुख्यतया उदारवादी, रेडिकल और समाजवादी या मार्क्सवादी नामक तीन श्रेणियों में इसका विभाजन हुआ।

1.4.1 उदार नारीवाद

उदार नारीवाद का बीज सूत्र उदार लोकतांत्रिक विचार पद्धति के उदय के साथ जुडा हुआ है। सामंतवाद के पतन के बाद हुए स्वतंत्र चिन्तन और विचार इसका उद्भव केलिए सहायक हुए, मेरी वुलस्टोन क्राफट, हैरियट टैलर, जान स्टुअर्ट मिल, बेट्टी फ्राइटन आदि उदार नारीवादियों में प्रमुख है। वे प्रत्येक व्यक्ति को समान अधिकार मिलनेवाली सामाजिक व्यवस्था पर विश्वास रखते थे । प्रभा खेतान के अनुसार “उदारवादियों ने ऐसी सामाजिक संरचना करनी चाही थी, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति को महत्व

हो, उन्हें समान सुविधा मिलें। इस महत् उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए इन दार्शनिकों ने पितृसत्तात्मक राज्य संरचना का विरोध तो किया, किन्तु पारिवारिक संरचना का विरोध नहीं किया।"[1]

इस गुट ने मुख्य रूप से स्त्रियों की शिक्षा, व्यक्ति स्वतंत्रता, संपत्ति पर समान अधिकार, काम करने केलिए समान अधिकार, मतदान का अधिकार, वैवाहिक कानून परिष्कार आदि केलिए संघर्ष किया। उदार नारिवादियों की सोच में व्यवस्था का बदलाव एवं पुरुष निराकारण की बात न होने के कारण उदार नारीवाद के प्रचार प्रसार केलिए अनेक पुरुष सहयात्री बन गए। निजी जीवन के स्वास्थ्य, शान्ति एवं सहयोग को उदारवादियों ने प्रमुखता दी। उनके अनुसार पूँजीवादी व्यवस्था में व्यक्ति विकास केलिए निर्मित विभिन्न मार्गों को हर एक स्त्री अपनाना चाहिए और विकसित होना चाहिए। इसप्रकार उदारवादियों ने पूँजीवादी व्यवस्था का विरोध न करके उसमें कुछ सुधार लाने की कोशिश की।

उदार नारीवाद कभी भी मातृत्व और पत्नीत्व की भूमिका को नकारता नहीं। गृहणी और कामकाजी स्त्रियों के व्यक्तिगत जीवन में सामंजस्य की ज़रूरत पर वह ज़ोर देता हैं। उदार नारीवादियों का लक्ष्य घर और बाहर दोनों जगह महिलाओं की निजी पहचान और अस्तित्व का निर्माण करना है।

---

[1] प्रभा खेतान- अतीत होती सदी और स्त्री का भविष्य (स. अर्चना वर्मा)-पृ 182

उदार नारीवाद, स्त्री एवं पुरुषों की बौद्धिक क्षमता को समान मानकर समान अवसर की वकालत करता है। उसके अनुसार समान सुविधाएँ मिलने पर स्त्रियाँ भी प्रत्येक क्षेत्र में पुरुषों के समान कार्य कर सकती हैं । उदार नारीवाद कानून के माध्यम से स्त्रियों की स्थिति में सुधार लाने का विश्वास करता है। सरला महेश्वरी का कहना है - "उदारतावादी राज्य को एक निरपेक्ष संस्था मानते है तथा उनका अभियोग था कि महिलाओं को अन्यायपूर्ण तरीके से प्राचीनकाल से ही राज्य के मामलों से अलग रखा गया, लेकिन यदि इसमें महिलाओं को शामिल किया जाता है तो इससे राज्य का ही भला होगा । इसी समझ के आधार पर उदारवादी नारीवाद का पूरा ज़ोर समान कानूनी और राजनैतिक अधिकारों की माँग पर रहा है ।" [1]भारत के अधिकांश नारीवादी, उदारवादी विचारधारा के पक्षधर थे । इसमें राजाराम मोहन राय, महर्षि कारवे, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, महात्मा गाँधी आदि प्रमुख थे। वे सभी क्षेत्रों में समान अधिकार दिलवाने केलिए कानून बनाना चाहते थे । इसके बल पर समाज में नारी मुक्ति कायम कर सकते हैं , ऐसा वे सोचते थे।

उदारवादी नारीवाद ने महिलाओं की असमानता और अधीनता को रेखांकित किया, मगर जेंडर उत्पीडन की जडों और संरचनाओं का पर्याप्त तरीके से विश्लेषण नहीं किया। इस विचार पद्धति ने घर की निजी दुनिया और व्यक्तियों के सार्वजनिक जीवन में व्याप्त फर्क की प्रचलित धारणाओं पर भी पर्याप्त ढंग से सवाल नहीं उठाया।

---

[1] सरला महेश्वरी - नारी प्रश्न –पृ.41

1.4.2 उग्र नारीवाद

इस गुट ने अपने नाम के अनुरूप पुरुषवर्चस्व के खिलाफ आवाज़ उठाकर अपनी भूमिका निभायी। उग्रवाद का उदय सत्तर के दशक में पाश्चात्य देशों में हुआ था । मुख्य रूप से उन्होंने विवाह की अवधारणा एवं पूँजीवादी संस्कृति के खिलाफ आवाज़ उठायी। उनकी राय में पुरुष वर्ग जो है शोषक है और स्त्री वर्ग शोषित है। केट मिलट, फयरस्टोन आदि उग्रवाद के समर्थक थे।

पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था के विरोध के ज़रिए उन्होंने बताया कि इस व्यवस्था के कारण परिवार, शासन, व्यवसाय, राजनीति, धर्म, ट्रेड यूनियन आदि सभी क्षेत्रों में पुरुषवर्चस्व व्याप्त होगा । पुरुष वर्चस्व के कारण घर और बाहर ताकत की एक शैली आ गयी है। पुरुषवर्चस्व को तोडना ही उग्रवादियों का लक्ष्य था। प्रभा खेतान की राय में "पहली बार नारीवादियों ने यह स्पष्ट किया कि अपने यौन जीवन में स्त्री को किस-किस प्रकार के उत्पीडन एवं हिंसा का शिकार होना होता है । बलात्कार, अश्लील साहित्य, अनैच्छिक मातृत्व तथा जन्म निरोध तथा बाध्यकारी इतरलिंगी कामुकता जैसे मुद्दों को उठाने से यह स्पष्ट हुआ कि यौन जीवन के प्रसंग में स्त्री को पुरुष की इच्छा के अधीन रहना पडता है। तथा इन्हीं संस्थाओं के माध्यम से पुरुष ने अपना वर्चस्व स्थापित किया हुआ है।"[1]

अधिकांश उग्रवादियों ने विवाह, परिवार आदि संकल्पनाओं का निराकरण किया । अपनी प्रगति में बाधा डालनेवाली सारी बातों का पारिवारिक सामाजिक रिश्ता आचार विचार, रहन-सहन, पोशाक आदि सबका विरोध किया । उषा

---

[1] प्रभा खेतान - अतीत होती सदी और स्त्री का भविष्य (स. राजेन्द्र यादव और अर्चना वर्मा) पृ - 186

महाजन का कहना है “नारी मुक्तिवादियों ने नारे लगाना शुरु किए कि विवाह एक विधिमान्य बलात्कार है । उन्होंने तर्क दिया कि विवाह कर एक ही व्यक्ति के साथ जीवन बिताते रहना कोई सद्गुण नहीं है। ये औरतें घरेलू दासता और विधिमान्य बलात्कार से मुक्ति पाना चाहती थी ।”[1] वे समलैंगिकता पर सोचने लगी।

प्रमुख उग्रवादी नारीवादी थी शूला मित्त फयरस्टोन । उन्होंने परिवार को एक वित्तीय संस्था माना क्योंकि अपने को संरक्षण मिलने के बदले में स्त्री को पुरुष की इच्छाएँ तृप्त करने और संतानों की प्रसूती करनी पडती है । विवाह, परिवार आदि को वे सामाजिक बुराइयों का प्रत्यक्ष कारण मानती हैं ।

उग्रवादीयों ने यौन उत्पीडन को औरत की गुलामी का प्रमुख कारण माना । यौन विषय पर कई सिद्धांत गढे गये । कुछ तो उन्मुक्त सेक्स में मुक्ति का दर्शन किया, तो अधिकांश ने सेक्स के नकारात्मक प्रभावों पर ज़ोर दिया । उनकी राय में सेक्स तो पुरुष की हिंसा, स्वायत्तता के हनन और पशुत्व के चिह्न आदि रूप में थे । इसलिए उन्होंने पुरुष की प्रभुता से स्त्री को बचाने केलिए पुरुष के साथ होनेवाली यौन संपर्क को ठुकराने लगा । पुरुष शत्रू है, पुरुष के साथ यौन संपर्क करनेवाली महिलाएँ उस शत्रू की सहयोगी हैं, इस सिद्धांत के आधार पर समलैंगिकता की बात सोचने लगी । लेसबियन सोसईटी और लेसबियन राइटस की चर्चायें होने लगीं।

---

[1] उषा महाजन – बाधाओं के बावजूद नई औरत – पृ 15

रेडिकल नारीवादियों ने हिंसा, गर्भ नियंत्रण और यौनिकता पर विचारोत्तेजक समीक्षाएँ प्रस्तुत की। सन् 1970 में संयुक्त राष्ट्र अमरिका में नौकरीशुदा माँओं के बच्चों की देखभाल केलिए पूर्ण दिवसीय केन्द्र, स्वेच्छा से गर्भपात, शिक्षा व रोजगार के समान अवसर, इत्यादि मुद्दों को रेडिकल नारीवादियों ने उठाया। उग्रवादियों ने सौंन्दर्य प्रतियोगिताओं का विरोध किया। उन्होंने नारीदेह को विज्ञापन बनानेवाला जनसंचार माध्यमों पर भी आक्रमण किये।

1.4.3 सामाजवदी/मार्क्सवादी नारीवाद

मार्क्स के भौतिकवादी जीवन दर्शन के आधार पर नारी की स्थिति केलिए जो विचार किया वही मार्क्सवादी नारीवाद नाम से जानने लगा। मार्क्स ने समाज में शोषितों की स्थिति के सन्दर्भ में नारी की स्थिति की भी चर्चा की। मार्क्सवादी नारीवाद ने नारी की मुक्ति के सवालों को सर्वहारा की मुक्ति के प्रयासों से जोडकर देखने का प्रयास किया|

एंगलस प्रमुख मार्क्सवादी नारीवादी है। उनके विचार को व्यक्त करनेवाली पुस्तक सन् 1884 में रचित ‘ द ओरिजिन आफ फेमिली प्राइवेट प्रोर्पटी एंड द स्टेट है। इसमें उन्होंने नारी की बदहालत की विस्तृत चर्चा की हैं और नारी की गुलामी का मुख्य कारण उसकी आर्थिक विवशता को माना है। परिवार में अर्थ पुरुष के हाथ में ही है, इसलिए नारी की स्थिति मजदुरिन जैसी है। एंगलस का कहना है “ आधुनिक वैयक्तिक परिवार नारी की खुली और छिपी

हुई घरेलू दासता पर आधारित है और आधुनिक समाज वह समवाय है जो वैयक्तिक परिवारों के अणुओं से मिलाकर बना है। आज अधिकतर परिवारों में कम से कम संपत्तिशाली वर्गों में, पुरुष को जीविका कमानी पडती है और परिवार का पेट पालना पडता है। इसी से परिवार के अन्दर उसका वर्चस्व कायम होता है और उसको किसी कानूनी विशेषाधिकार की आवश्यकता नहीं होती । परिवार में पति बुर्जुआ होता है, पत्नी सर्वहारा की स्थिति में होती है" [1] एंगेलस के अनुसार नारी की मुक्ति तब तक संभव नहीं जब तक महिलाएँ घरेलू काम छोडकर घर के बाहर मजदूरी मिलनेवाले काम को नहीं स्वीकारती ।

मार्क्सवादी नारीवादियों ने पितृसत्तात्मक व्यवस्था को समझने और बदलने का प्रयास किया । उनका मानना हैं कि पूँजीवाद और पितृसत्ता एक दूसरे को मजबूती प्रदान करते हैं । स्त्री के घरेलू श्रम पुरुष और पूँजीवाद दोनों को लाभ पहूँचाता है । महिलाओं को सार्वजनिक उत्पादन से बाहर कर दिया जाता है । जिसके कारण वह घर की निजी दुनिया में घरेलू कामों में बँधकर रह जाती है । उनका मानना हैं कि महिलाओं का उत्पीडन मूलत: परिवार में उनकी परंपरागत स्थिति के कारण होता है।

नारी प्रश्न के वर्गीय आधारों को उद्घाटित करते हुए मार्क्सवादी नारीवादियों ने यह स्पष्ट किया कि निजी संपत्ति और वर्गीय समाज के संघटन की प्रक्रिया शुरु होने के साथ ही स्त्री की दासता की शुरुआत हुई है । पूँजीवादी समाज नारी को निकृष्टतम कोटि की गुलाम मानता है। उसमें स्त्री का यौन शोषण होता

---

[1] फ्रेडरिक एंगेलस – द ओरजिन ऑफ फेमिली प्राइवेट प्रोपटी एडं द स्टेट(अनुवादक नरेश नदीम) पृ 81

है, और स्त्री को विभिन्न नरकीय घरेलु दास्ता का शिकार बनाता है। इसलिए मार्क्सवादी स्त्रियों की समस्याओं को खत्म करने केलिए पूँजीवादी व्यवस्था को खत्म करने की माँग करता है । मार्क्स एवं ऐंगलस के विचार के संबन्ध में कात्यायनी का कहना है "मार्क्स- ऐंगलस ने यह स्पष्ट किया कि स्त्री मुक्ति की दिशा में पहला कदम यह होगा कि स्त्री मज़दूरों की वर्ग चेतना को उन्नत किया जायें, सामाजिक राजनीतिक जीवन में उनकी भागीदारी लगातार बढायी जाये और उन्हें मज़दूर वर्ग के क्रान्तिकारी आन्दोलनों में शामिल किया जाये ।"[1] मार्क्स और एंगलस के बाद लेनिन ने भी नारी प्रश्न पर मार्क्सवादी चिन्तन को आगे बढाया। उनका विचार था कि स्त्रियों केलिए पूर्ण स्वतंत्रता हासिल किए बिना सर्वहारा अपने पूर्ण स्वतंत्रता नहीं हासिल कर सकते ।

मार्क्सवादी आलोचना अपने सैद्धांतीकरण में सीमित है क्योंकि पूरा विमर्श पुरुष द्वारा स्त्री के यौन उत्पीडन की तुलना में पूँजी को ही ज़्यादा उत्पीडक और दोषी मानता है। सामाजिक तथा सांस्कृतिक या यौन उत्पीडन को महज आर्थिक शोषण का प्रतिबिंब मानता है । मार्क्सवादी नारीवाद ने महिलाओं के परिवारिक श्रम की भूमिका को अनदेखा कर दिया। सार्वजनिक उत्पादन पर ध्यान केन्द्रित करने के कारण घर के भीतर किये जानेवाले श्रम के महत्व और आर्थिक मूल्य को नकारा दिया गया।

---

[1] कात्ययनी - दुर्ग द्वारा पर दस्तक पृ 96

1.4.4 नारीवाद के अन्य रूप

हाल ही में नारीवाद ने कई नई अवधारणाओं को उठाया है और ये विचारधाराएँ बिलकुल अलग अलग परिकल्पनाओं और पहलुओं को प्रतिबिंबित करती हैं। इसमें अश्वेत नारीवाद नस्ल आधारित शोषण को नज़र अन्दाज़ करती है। अराजकतावादी नारीवाद एक ऐसी विचारधारा है जो अराजकतावाद के अधिनायकवाद विरोधी तर्क में आस्था रखता है । पर्यावरणीय नारीवाद महिलाओं को प्रकृति पर्यावरण और पृथ्वी के प्रति चिंताओं के साथ जोडता है । 'वुमनिसम' युरोप और अमेरिका के ब्लैक महिलाओं की विचारधारा थी, उन्होंने नारीवाद के सिद्धातों से असहमत होकर इसका प्रचार किया था । नारीवाद का चौथा लहर पोस्ट मोडेण फेमिनिज़म या पोस्ट फेमिनिज़म नाम से जाना जाता है ।

1.5 साहित्य और स्त्रीवाद

साहित्य समाज का दर्पण है । समाज में जो कुछ बदलाव आता रहता है, उसका असर साहित्य पर भी होता रहता है । पाश्चात्य सभ्यता के प्रभाव एवं शिक्षा की वृद्धि के साथ बीसवीं सदी में कई स्त्रियाँ अपनी अस्मिता की तलाश में शब्द को अपना हथियार बनाने केलिए तैयार हुई । धीरे-धीरे वे अभिव्यक्ति की ताकत पाने लगीं ।

स्त्रीवाद का जन्म पुरुषवर्चस्ववाद के विरोध में हुआ था। अर्थात् यह वाद पितृसत्ता केलिए गंभीर चुनौती बन रहा। भारत की स्त्रियाँ प्राचीनकाल से ही पुरुषवर्चस्व की छत्रछाया में जी रही थी। पर स्त्रीवाद का व्यापक प्रचार ने सभी

स्तर की स्त्रियाँ को जागृत किया। राकेश कुमार का कहना है :- “स्त्री विमार्श ने ही स्त्रियों के भीतर यह चेतना पैदा की कि उनको वाणीहीन, स्वत्वहीन क्यों किया जा रहा है? उनका स्वतंत्र अस्तित्व क्यों नहीं है? परिवार का अनुशासन उन्हें ही क्यों अनुशासित करता रहा है? परिवार स्त्री का खुला दमन क्यों करते है?” स्त्रियाँ आर्थिक धरातल पर आत्म निर्भर होकर भी परिवार में दबी कुचली क्यों है? क्या आर्थिक स्वतंत्रता ने उन्हें मानसिक तौर पर स्वतंत्र बनाया है? स्त्री विमर्श में ऐसे अंसख्य प्रश्न है जिनमें स्त्री मुक्ति का सन्देश छिपा है।“[1] इस प्रकार हिन्दी साहित्य ने निश्चय ही स्त्रीवाद के ज़रिए समाज में हलचल मचायी।

साहित्य के प्रभाव से स्त्रियाँ गुलामी की असंख्य बेडियों की पहचान करने लगी । उन्हें मालुम हुआ कि पूँजी के स्वामित्व से वंचित रहना ही उनकी अधीनस्थता का प्रमुख कारण है । स्त्री साहित्यकारों ने साहित्य के माध्यम से स्त्रियों के यौन शोषण एवं लिंग भेद के खिलाफ अभियान शुरु किया, साथ ही परंपरावादियों को धक्का पहूँचाया। साहित्य के प्रभाव से सभी स्त्रियाँ देह और नैतिकता से जुडे सवालों पर सोचने लगी कि नैतिकता लिंग केन्द्रित क्यों है? अर्थात् देह की पवित्रता, मर्यादा, शील, नैतिकता इत्यादि स्त्री केलिए क्यों ज़रूरी है? इसप्रकार स्त्री विषयक विभिन्न समस्याओं की अभिव्यक्ति साहित्य द्वारा हुई।

[1] राकेश कुमार –नारीवादी विमर्श –पृ 60-61

1.5.1 स्त्री साहित्य और स्त्रीवादी साहित्य

स्त्रीवाद के सन्दर्भ में सबसे प्रचलित दो शब्द है स्त्री साहित्य और स्त्रीवादी साहित्य । जगदीश चतुर्वेदी का कहना है :- 'स्त्री साहित्य', वह है जो स्त्री रचित है । स्त्री रचित होने के कारण ही उसे 'स्त्री साहित्य' की कोटि में रखा जाता है । किंतु 'स्त्रीवादी साहित्य' स्त्री परुष दोनों का लिखा हो सकता है । यह ऐसा साहित्य है जो स्त्री के हितों एवं स्त्रीवादी राजनीति का पक्षधर होता है। 'स्त्री साहित्य' की तुलना में 'स्त्रीवादी साहित्य' व्यापक परिदृश्य को समेटता है।"[1]

स्त्रीवादी साहित्य स्त्री चेतना, यौनशोषण, लिंगभेद के सवालों के साथ साथ दलित, आदिवासी जैसे उपेक्षित लोगों के वर्ण एवं वर्ग संबन्धी प्रश्नों को भी उठाता है। स्त्री साहित्य में होनेवाली रचनाएँ विभिन्न विषयों पर होने के बावजूद भी साहित्य की मुख्यधारा में उसे सम्मानजनक दर्जा नहीं मिली । क्योंकि साहित्य के क्षेत्र में भी पुरुष वर्चस्व ने अपना आधिपत्य स्थापित किया था। साहित्य के क्षेत्र में हो रहे पुरुषवर्चस्व के बारे में तसलीमा नसरिन का कहना है :- "दोष दरअसल कविता का नहीं, किसी यौन विषयक शब्द का भी नहीं बल्कि रचयिता के लिंग का है । रचयिता यदि स्त्री है तो गुदगुदी कुछ ज़्यादा ही होती है। लेकिन यदि पुरुष है तो कोई गुदगुदी नहीं, बल्कि सब कुछ बहुत ही श्लील और संयमित लगता है।"[2] रचना के क्षेत्र में लिंग भेद की राजनीति अब भी कायम है।

---

[1] जगदीश चतुर्वेदी – स्त्री अस्मिता साहित्य और विचारधारा (सं सुधा सिंह) –पृ 132

[2] तसलीमा नसरिन –नष्ट लडकी : नष्ट गद्य – पृ 126

स्त्री लेखन एकदम हाशिए में पड जाने का मुख्य कारण प्रचलित वर्चस्ववादी भाषा है। पुल्लिग केन्द्रित भाषा की परंपरा ही हिन्दी में प्रचलित है, जो स्त्री अनुभव को व्यक्त करने में असमर्थ हो रही है । इसलिए अधिकांश लेखिकाएँ आजकल स्त्री केलिए निजी भाषा खोजने की बातें करती हैं।

स्त्रीवादी साहित्य में पुरुष और स्त्री दोनों द्वारा स्त्री पर लिखे गये साहित्य को देखा जा सकता है । पर कट्टर स्त्रीवादी लेखिकाएँ पुरुष द्वारा लिखे गये साहित्य को मानती नहीं । रमणिका गुप्ता का कहना है "दरअसल जब औरत भोगा हुआ सच लिखती है तो उसमें एक अनुभूति की प्रमाणिकता आती है - पुरुष जब लिखता है तो वह हमदर्दी का लेखन होता है। वह कल्पना का सहारा लेता है पर अनुभूति की ईमानदारी और सच्चाई भोगे हुए सच में ही होती है। उसमें जीवन्तता होती है।"[1] अधिकांश लेखिकाएँ स्वानुभूति पर ही बल देती है।

हिन्दी साहित्य में पुरुष लेखकों द्वारा स्त्री समस्याओं पर गंभीर रचनाएँ हुई है। अधिकांश लेखिकाएँ उस बात से इनकार करती नहीं। अनामिका का कहना हैः- "यह मानते हुए हमें कोई गुरेज नहीं कि बहुत - सा स्त्री लेखन कमज़ोर, कच्चे प्रतिक्रियावाद का नतीजा है, और यह भी की 'एडोजेनी' प्रदत्त परकायाप्रवेश की बडी सिद्धि के कारण बालजाक, टॉलस्टाय, चेखव, शरतचन्द्र और विश्व के अन्य पुरुष लेखकों ने भी स्त्री चेतना का इतना सटीक वर्णन किया है कि उस पर अलग से चर्चा होनी चाहिए।"[2] वे पुरुष लेखन को पूर्ण रूप से तिरस्कार करती नहीं।

---

[1] रमणिका गुप्ता – स्त्री विमर्श : कलम और कुदाल के बहाने –पृ 79

[2] अनामिका – कविता में औरत -पृ.17

1.5.2 हिन्दी स्त्रीवादी लेखिकाएँ

हिन्दी साहित्य में प्रथमतः स्मरणीय लेखिकाओं के रूप में मीरा भाई, सुभद्रकुमारी चौहान, महादेवी वर्मा आदि के नाम उल्लेखनीय हैं । महादेवी का महत्व इसलिए है कि स्त्री समस्याओं को लेकर उन्होंने 'श्रृखला की कडियाँ' नामक निबन्ध संग्रह की रचना की । निबन्ध उन्होंने जन्म से अभिशप्त, जीवन से सन्तप्त किन्तु, अक्षय वात्सल्य, वरदानमयी भारतीय नारी को समर्पित किया।

हिन्दी साहित्य में स्त्रियों का रचना-संसार एक व्यापक आयाम ले रहा है । कथाकार और कवयित्री के रूप में बहुत लंबी सूची है। बहुत अधिक लेखिकाओं ने स्त्री समस्याओं पर कई रचनाएँ की हैं। कृष्णा सोबती, चित्रा मुद्गल, मृदुला गर्ग, प्रभा खेतान, मैत्रेयी पुष्पा, जया जादवानी, राजी सेठ, रमणिका गुप्ता आदि ने कथा साहित्य के श्रेष्ट योगदान दिया। कविता के क्षेत्र में नब्बे के दशक में अनामिका, कात्यायनी, नीलेश रघुवंशी, गगन गिल, सुनिता जैन, अर्चना वर्मा, अनिता वर्मा, रमणिका गुप्ता, इन्दु जैन, निर्मला गर्ग, सविता सिंह, चन्द्रकलात्रिपाठी, सावित्री डागा, वीरा, स्वाती सूद, संध्या गुप्ता, आदि ने नारी संबन्धी विभिन्न समस्याओं पर कविताएँ रचीं । नब्बे के दशक के संबन्ध में सुधा सिंह का कहना हैः- "नब्बे के दशक में स्त्रीवाद ने स्त्रीशोषण के संरचनात्मक कारणों की खोज पर ध्यान केन्द्रित किया, समाजिक हायरार्की, सामाजिक वैषम्य और खासकर लिंगभेद के सवाल पर केन्द्रित किया । इसी क्रम में 'बायनरी-

अपोजीशन' के सवालों पर भी गौर किया। साथ ही स्त्री के शरीर का नए सिरे से मूल्यांकन किया।"[1] इनमें कात्यायनी, नीलेश रघुवंशी, अनामिका और अनिता वर्मा का योगदान विशेष ध्यान देने योग्य हैं।

निष्कर्ष

स्त्रीवाद स्त्री की स्वतंत्रता और समानता पर बल देनेवाली विचारधारा है । विभिन्न विद्वानों ने भिन्न-भिन्न परिभाषाएँ नारीवाद के सन्दर्भ में दी है । पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था को तोडना, सेक्स जेंडर को अलग अलग करके देखना, नारी की परंपरागत मानसिकता में परिवर्तन लाना, नारी की विभिन्न समस्याओं पर विचार करना, नारी को मानव के रूप में प्रतिष्ठित करना, सार्वजनिक निजी भेद को दूर करना आदि नारीवाद का मुख्य उद्देश्य है।

नारीमुक्ति आन्दोलन ही नारीवादी विचारधारा का मूल आधार है । इसका प्रादुर्भाव पश्चिम में हुआ था। सर्वप्रथम 17 वीं सदी में ईसाई सन्यासिनी जुआना ने पुरुष के समान मानवाधिकार केलिए आवाज़ उठायी । फ्रान्स की क्रान्ति और औद्योगिक क्रान्ति ने समाज के हर वर्गों को प्रभावित करने के साथ ही नारी जाति को भी प्रभावित किया, मेरी वुलस्टोन क्राफट, जान स्टुअर्ट मिल, सीमोन द बोउवर आदि ने नारी अधिकारों केलिए आवाज़ उठायी। आन्दोलन के दूसरे लहर में बेट्टी फ्राइटन जर्मन ग्रिअर आदि ने भी स्त्री के लैंगिक अधिकारों केलिए आवाज़ उठायी।

[1] सुधा सिंह - ज्ञान का स्त्रीवादी पाठ पृ 99

नारी मुक्ति आन्दोलन ने साठ और सत्तर के दशकों में विभिन्न धाराओं में बाँट गया । जिनमें उदार नारीवाद, उग्र नारीवाद एवं समाजवादी-मार्क्सवादी नारीवाद सबसे प्रमुख है। उदार नारीवाद का बीज सूत्र लोकतांत्रिक विचार पद्धति के साथ जुडा हुआ है । उग्रवादियाँ तो विवाह, परिवार जैसी संकल्पनाओं का निराकरण करनेवाली थी। मार्क्सवादी नारीवादियों ने समाज के अन्य शोषित वर्गों के समान नारी की स्थिति को भी माना । इसके अलावा नारीवाद की अन्य कुछ विचारधारायें भी प्रचलित हो गई, जिनमें अश्वेत नारीवाद, अराजकतावादी नारीवाद, पर्यावरणीय नारीवाद, वुमनिज़्म, पोस्ट फेमिनिज़्म आदि प्रमुख है।

भारतीय नारी की स्थिति की जाँच करें तो वैदिक काल में उसकी स्थिति ऊँची थी । पर रामायण-महाभारत काल, स्मृतिकाल से मध्यकाल तक आते ही उसकी स्थिति अत्यन्त दयनीय हो गयी। पर आधुनिक काल में अंग्रेज़ों के प्रभाव से अनेक समाज सुधारकों द्वारा नारी को सुधारने का प्रयास हुआ । बीसवीं सदी के उत्तर काल तक आते-आते नारी की स्थिति में बहुत अधिक प्रगति हुई।

साहित्य के क्षेत्र में स्त्री और पुरुष दोनों द्वारा स्त्री समस्याओं पर रचनाएँ हुई । अधिकांश लेखिकायें पुरुष की रचना को स्त्रीवादी रचना मानने केलिए तैयार नहीं । आज स्त्रियों का रचना संसार एक व्यापक आयाम ले रहा है । कहानी, उपन्यास, नाटक, निबन्ध, आत्मकथा, कविता आदि साहित्य के सभी विधाओं पर रचनाएँ कर रही हैं ।

.........ꕥ.........

दूसरा अध्याय

हिन्दी कविता में स्त्री चेतना का विकास

हिन्दी कविता में स्त्री चेतना का विकास

आधुनिक मनुष्य, विषय का अवबोध केलिए सदा इतिहास का सहारा लेता है । हिन्दी में कई इतिहासकारों ने हिन्दी साहित्य के इतिहास संबन्धी पुस्तकें लिखी है । पर स्त्री काव्य परंपरा को खोजने का प्रयास बहुत कम विद्वानों ने ही किया है । मिश्रबंधुओं ने अपने 'मिश्रबंन्धुविनोद' में हिन्दी के कुछ परम प्रधान कवयित्रियों का उल्लेख मात्र किया। मुंशी देवी प्रसाद ने राजस्थान में हस्तलिखित ग्रन्थों की खोज करके उनके आधार पर 'महिला मृदुवाणी' नाम से पुस्तक लिखी । इस पुस्तक के बारे में सुमन राजे का कहना है:- "आधे इतिहास की यह पहली किताब है । "[1] इसके बाद ज्योति प्रसाद निर्मल ने 'स्त्री कवि कौमुदी(1931)' की रचना की । श्री रामशंकर शुक्ल रसाल ने 'हिन्दी साहित्य का इतिहास' और 'स्त्री कवि कौमुदी' दोनों की रचना की । सन् 1933 में गिरिजादत्त शुक्ल और ब्रज भूषण शुक्ल ने हिन्दी काव्य की कोकिलाएँ शीर्षक से कवयित्रियों की आलोचना प्रस्तुत की । इसके बाद श्री चतुरसेन शास्त्री ने अपने 'हिन्दी भाषा और साहित्य का इतिहास' में 'स्त्री कवयित्रियाँ नामक एक अध्याय की रचना की । पर हिन्दी साहित्य में नारी लेखन को लेकर एक समग्र इतिहास ग्रन्थ लिखने का श्रेय सुमन राजे को ही प्राप्त है । अपने 'आधा इतिहास' द्वारा उन्होंने साहित्येतिहास में पहली बार वैदिक ऋषिकाएँ ,बौद्ध थेरियाँ ,प्राकृत गाथाकार, संस्कृत कवयित्रियाँ और नव्य भारतीय भाषाओं की भक्त संत कवयित्रियाँ आदि सबके लेखन को ढूँढ निकालने का प्रयास किया |

[1] **सुमन राजे - हिन्दी साहित्य का आधा इतिहास - 61**

2.1 हिन्दी कविता में नारी चेतना

साहित्यिक क्षेत्र में स्त्रियों ने प्राचीनकाल से ही कार्य करने का प्रयास किया था | विश्व का प्राचीनतम उपलब्ध निबद्ध ग्रन्थ ऋग्वेद इसका नमूना है | यह ग्रन्थ मंत्रों का संकलन है | ये मंत्र किसी विशेष अवसर पर, किसी विशेष देवता का स्तुतिगान या प्रार्थना के रूप में लिखे गये थे | सूक्ते लिखनेवाले ऋषिकाओं को विभिन्न मण्डलों में विभाजित किया गया था | सबसे अधिक ऋषिकाएँ दसवें मण्डल में सम्मिलित थी | ममता, ब्रह्मवादिनी रोमशा, लोपमुद्रा, घोषा, इन्द्राणी,उर्वशी, श्रद्धा कामायनी आदि प्रमुख ऋषिकाएँ थीं |

ऋग्वेद के बाद स्त्री लेखन का स्पर्श थेरी गाथा में देख सकते है |पाली भाषा में रचित खुद्दक निकाय के अंतर्गत आनेवाले दो महत्वपूर्ण ग्रन्थ है थेर गाथा और थेरी गाथा | थेरी गाथा लगभग सौ थेरियों का पाँच सौ बाईस गाथाओं का संकलन है | ये थेरियाँ समाज के विभिन्न तबके की थी, जिन्होंने भिक्षुणी बन अपने जीवन के संचित अनुभवों को इन गाथाओं में गाया है। खेमा, सुमना आदि राजकुमारियाँ थी तो विमला, अम्बाली आदि वेश्याएँ थी।

इसके बाद प्राकृतकाल में कई महिलाओं ने कविताएँ लिखी। उनकी प्राकृत कविताओं का संकलन है 'गाथा सप्तशती' इनमें लगभग सोलह कवयित्रियों द्वारा सात सौ गाथाएँ संकलित है। इन्होंने धार्मिक विषय से हटकर लौकिक विषय पर

ही अपना ध्यान दिया । उनकी कविताएँ मुख्य रूप से श्रृगाररस पूर्ण थीं । इसके संबन्ध में सुमन राजे का कहना है "सप्तशती का सबसे अधिक महत्व इस तथ्य में है कि इतिहास में प्रथम बार कवयित्रियाँ शुद्ध लौकिक कविताओं को लेकर अपनी उपस्थिति दर्ज कराती है।"[1] प्राकृतकालीन कवयित्रियों में प्रमुख थी रोहा, चन्दपुट्टिका, पृथिवी, रेवती आदि ।

संस्कृत साहित्य में भी कवयित्रियों द्वारा अपनी उपस्थिति दर्ज की गयी । सुभद्रा, इन्दुलेखा, मारुला आदि संस्कृत कवयित्रियों ने डेढ सौ पद्य लिखकर अपनी उदात्त प्रतिभा का परिचय किया ।

भक्तिकाल के समय समाज में नारी की हालत बहुत बुरी थी | बाल विवाह और सती प्रथा व्यापक हो गयी थी | उस समय भक्ति की दो धाराएँ प्रचलित थी :- सगुण भक्ति और निर्गुण भक्ति | निर्गुण संतों में चरणदास की शिष्याएँ थीं सहजोबाई और दयाबाई | ये भी निर्गुण काव्य की रचना करती थी | सहजोबाई की 'सहजोप्रकाश', दयाबाई की 'दयाबोध' आदि प्रमुख निर्गुण काव्य रचनाएँ है |इसके साथ पद्मावती,पार्वती, मुक्ताबाई, इन्दुमती आदि अन्य निर्गुण कवयित्रियाँ थीं |

---

[1] **सुमन राजे - हिन्दी साहित्य का आधा इतिहास - पृ.**57

सगुण भक्ति में विष्णु के दो अवतार राम और कृष्ण को लेकर काव्य रचनाएँ होती थी । कृष्ण की सगुण उपासना नारी प्रवृत्ति के अनुकूल थी । उस समय नारी मन ने कृष्ण के विविध रूपों से आत्मीयता का अनुभव किया । इसके अलावा व्रजभाषा के मधुर रसपूर्ण, भाव गम्य गुण स्त्रियों केलिए विशेष आकर्षक रहे । कृष्णकाव्य में कृष्ण की बाललीलाओं तथा अपने यौवनकाल के प्रेमलीलाओं का ही वर्णन है। मीराबाई कृष्णभक्त कवयित्रियों में सबसे प्रमुख थी । ताज बेगम कृष्ण काव्य की रचना करनेवाली मुसलमान कवयित्रि थी । अन्य प्रमुख कृष्णकाव्य की कवयित्रियाँ हैं सुंदरकुवारी बाई, छत्र कुवारी बाई, प्रतापबाला, वृषभन कुंवारी तथा चंद्र सरती आदि।

प्रतापकुवांरी बाई रामकाव्य परंपरा में आनेवाली प्रमुख कवयित्रि है । 'रामचन्दनाम महिमा', 'रामगुण सागर', 'रामप्रेम सुख सागर' आदि उनकी प्रमुख रचनाएँ हैं । बाघेली विष्णु प्रसाद 'कुवारी' भी प्रमुख रामभक्त कवयित्रि थीं । रूपमती बेगम, शेख रंगरेजन, प्रवीणराय पातुर आदि रीतिकाल में श्रृंगाररसपूर्ण रचना करनेवाली कवयित्रियाँ थी ।

आधुनिक काल में नारी की हालत में परिवर्तन आ गया । क्योंकि इस काल में अनेक समाज सुधारकों एवं साहित्यकारों द्वारा नारी उत्थान का प्रयास किया हुआ । इस काल में खडीबोली में काव्य रचना का प्रारंभ भी हुआ । उस समय राजरानी बुंदेलबाला, सरस्वती देवी तथा ज्वालादेवी ने खडीबोली में काव्यरचना करके अपने काव्य कौशल का परिचय दिया । ओज और वीरत्व का भाव उनकी कविताओं की विशेषतायें थीं ।

महादेवी वर्मा छायावादी चतुरस्तंभ की एकमात्र कवयित्रि थी । प्रणय और वेदना भरी सुन्दर काव्य लिखकर उन्होंने अपनी काव्यानुभूति का परिचय कराया । उस समय के अन्य प्रमुख कवयित्रि थी सुभद्राकुमारी चौहान ।

शकुंत माथुर अज्ञेय द्वारा संपादित 'दूसरा सप्तक' के एकमात्र प्रमुख कवयित्रि थी। 'तीसरा सप्तक' में कीर्ति चौधरी और 'चौथा सप्तक' में सुमन राजे भी शामिल थीं । 'सप्तक' के अलावा कुछ कवयित्रियों ने भी उस समय सुंदर रचनाएँ की । विद्यावती कोकिल, कमला रत्नम, सुमित्राकुमारी सिन्हा, शकुंतला सिरोठिया, दिनेशनंदिनी डालमिया, विद्यावती मिश्र, कंचनलता सब्बरवाल, चंद्रकुमार सोनरेक्सा, चंद्रमुखी ओझा 'सुधा' , कमला मधोक, माधवीलता शुक्ल, स्नेहलता स्नेह, मालती शर्मा, सुभद्रा खुराना, विजयलक्ष्मी विभा, विद्या विंदु सिंह, रचना शर्मा आदि उस समय के प्रमुख कवयित्रियाँ थीं । समकालीन कविता के पहले दौर में आनेवाली प्रमुख कवयित्रियाँ स्नेहमयी चौधरी, चंपा वैद, रमणिका गुप्ता, प्रभाखेतान, अर्चना वर्मा, मोना गुलटी आदि हैं । नब्बे के दशक आते ही इस क्षेत्र में कई कवयित्रियों का आगमन हुआ । कात्यायनी, अनामिका, गगन गिल, सुनीता जैन, नीलेश रघुवंशी, अनिता वर्मा, मीरा आदि कवयित्रियों की कतार लंबी है । इसके संबन्ध में अनामिका का कहना है :- "कितनी विचित्र है यह काव्ययात्रा! रेलगाडी भक्ति युग से चलती है तो सीधा महादेवी पर रुकती है......... फिर एक एक मिनट केलिए वहीं कहीं जंजीर खींचकर रोकी जाती है और नब्बे के बाद तो हर दूसरा स्टेशन की प्लाटफॉर्म हो ।"[1] नब्बे के दशक में काव्य क्षेत्र में कवयित्रियों की अभूतपूर्व संभावनाएँ हुई ।

---

[1] **अनामिका - समकालीन भारतीय साहित्य सुशील गंगापाध्याय (सं) वर्ष 32 मार्च-अप्रैल 2012 अंक 160 -पृ141**

2.2 नब्बे की पूर्ववर्ती कवियित्रियों की कविताओं में नारी चेतना

पूर्ववर्ती कविताओं में भी हम नारी चेतना देख सकते है | समाज में हर काल में बदलाव आता रहता है उसी प्रकार काल के अनुसार कविताओं में भी नारी चेतना का स्वर हम देख सकते है | परंपरागत रूढियों को तोडकर या घर की चारदीवारी के बाहर आने की स्त्री की आकांक्षा को पहली बार इन कवयित्रियों ने ही किया था | उनके द्वारा प्रज्वलित नारी चेतना का विकास अब भी समकालीन कविताओं में जाहिर हुआ है | वैदिककालिन साहित्य से लेकर अस्सी के दशक तक की कविताओं पर प्रकाश डालने पर उसके विकास की क्रमिक स्थिति का परिचय प्राप्त होता है |

2.2.1 ब्रम्हवादिनी रोमशा

भारतीय साहित्य परंपरा में पहली बार ब्रह्मवादिनी रोमशा ने अपनी रचना द्वारा पुरुष वर्चस्व के खिलाफ आवाज़ उठायी । वे ऋगवेद के प्रथम मण्डल की ऋषिका थी । संपूर्ण शरीर में घने रोमों के कारण सब इनकी उपेक्षा करते थे । पर वह अपनी क्षमता पर गर्व करनेवाली अभिमानी औरत है :-

> “आगधिता परिगाधिता वा काशीकेव जगहे ।
> ददति महा यादुरो याशुनॉ भोज्य राता ।
> उपोपज में परा मृश मा मे द भ्राठी मन्यथा ।
> सर्वहमासी रोमशा गंधरिणा निवाविका “[1]

---

[1] सुमन राजे - हिन्दी साहित्य का आधा इतिहास - पृ 68

(हे पतिराजन, जैसे पृथ्वी राज्यधारणा एवं रक्षा करनेवाली होती है वैसे ही मैं प्रशंसित रोमोवाली हूँ। मेरे सभी गुणों को विचारो। मेरे कामों को अपने छोटा न करो)

यह सूक्त द्वारा रोमशा अपनी तुलना पृथ्वी से करके नारी गरिमा की वर्णन करती थी। इसके संबंध में सुमन राजे का कहना है : " संभवत: यह पहला लिखित प्रमाण है जब किसी स्त्री ने अपनी क्षमता का समान अधिकार प्राप्त करने केलिए आवाज़ उठायी है।"[1] अर्थात रोमशा के शब्दों में स्त्री-पुरुष समानता की भावना ही छिपी है |

2.2.2 सुमंगलमाता थेरी

सुमंगलमाता थेरी की पहचान उनके पुत्र के नाम से होती थी, अर्थात् उनकी अपनी कोई स्वतंत्र पहचान नहीं थी। उनका पुत्र प्रसिद्ध भिक्षु सुमंगल के नाम से ही वह जानी जाती थी। उनका पति छाता बनानेवाले था,पति उसके साथ कितनी अवहेलना करता था, किस तरह का व्यवहार करता था, थेरी बनकर वह किस प्रकार मुक्त हो गयी इन सब तथ्यों का ज्ञान इन पंक्तियों से होता है।

"अहो
मैं मुक्त नारी
मेरी मुक्ति कितनी धन्य है

[1] **सुमन राजे - हिन्दी साहित्य का आधा इतिहास -पृ.69**

पहले मैं मूसल लेकर ज्ञान कूटा करती थी
आज उससे मुक्त हुई
मेरी दरिद्रावस्था के छोटे-छोटे बर्तन
जिनके बीच मैं मैली कुचली बैठती थी
और मेरा निर्ल्लज पति मुझे उन छातों से भी तुच्छ समझता था
जिन्हें वह अपनी जीविका केलिए बनाता था "[1]

इस काव्य के संबन्ध में सुमन राजे का कहना है कि "इसके द्वारा अंकित पूर्वानुभव चित्र इतने अधिक वास्तविक है कि आधुनिक लगता है "[2] | यहाँ एक तत्कालीन नारी का वास्तविक जीवन चित्र ही दृष्टिगत होती है |

2.2.3 मीराबाई

मीराबाई का पूरा जीवन दु:ख भरा था । अपने बचपन में ही उसे माँ नष्ट हो गयी। कम उम्र में ही उसकी शादी मेवाड राजकुमार से हुई । पर पति भी जल्दी नष्ट हो गयी । इसलिए उसे जीवन से ही विरक्ति हो गयी । इसके फलस्वरूप उन्होंने आध्यात्मिक पतिदेव के रूप में कृष्ण का वरण किया ।

मेवाड में सांमती मर्यादा की चारदीवारी के भीतर स्त्रियों को भक्ति, अर्थात् सत्संग एवं पूजापाठ की अनुमति थी । मीरा ने असहाय, पीडित नारी के स्वर को भक्ति के द्वारा प्रस्तुत किया । माधव हाडा का कहना है:- "मीरा के समय

---

[1] **सुमन राजे -हिन्दी साहित्य का आधा इतिहास - पृ 99**
[2] **सुमन राजे -हिन्दी साहित्य का आधा इतिहास -पृ 99**

भक्ति को लौकिक स्वीकृति मिल गयी थी । एक असहाय और पीडित वंचित स्त्री का विद्रोह भक्ति के हठ में बदलकर लोक में स्वीकार्य और मान्य हो गया । सांमती दमन से त्रस्त जनसाधारण केलिए यह हठ असाधारण और आकर्षक था । ”[1]

मीरा बाई , उस समय की सामाजिक स्थिति से अत्यधिक पीडित थी । उस समय के सामाजिक व्यवहार में स्त्री स्वतंत्र नहीं थी । सबसे पहले मीरा ने अपने काव्यों के माध्यम से नारी पराधीनता के विरुद्ध आवाज़ उठायी । पूनमकुमारी का कहना है “ भक्तिकाव्य जहाँ घोषित रूप से भक्ति के धरातल पर समाज में हमेशा से हाशिए पर रखे गए लोगों का पक्षधर है वही मीरा की कविता सदियों से हाशिए पर रखी गयी स्त्री की वास्तविक स्थिति का बयान करती है ।”[2]

‘मीरानी गरबे’, ‘मीरा के पद’, ‘राग सोरठ के पद, ‘रास गोविंद’, ‘नरसीजी का मोहरे’, ‘गीता गोविंद की टीका’ आदि मीराबाई की प्रमुख रचनाएँ हैं । उनके ये पद तत्कालीन सामाजिक प्रथाओं का खुला दस्तावेज़ है । मध्यकालीन समाज में पुरुषवर्चस्ववादी व्यवस्था कायम थी, नारी की स्थिति अत्यंत दयनीय थी । नारी घर के चारदीवारी में बन्दी थी । सदियों से स्त्रियों को अपनी सत्ता, संपत्ति और प्रतिष्ठा से वंचित रखा गया था ।विधवा जीवन भी अत्यंत दयनीय थी । समाज में पर्दा प्रथा, सती प्रथा आदि प्रचलित थी ।

---

[1] माधव हाडा - समकालीन भारतीय साहित्य जनवरी- फरवरी 2010 - पृ 141

[2] पूनम कुमारी - स्त्रीचेतना और मीरा का काव्य - पृ.82

घर के चारदीवारों के बंधनों को तोडने की इच्छा उनके पदों में देख सकते हैं । चितौड में मीरा के स्वतंत्र व्यक्तित्व का स्वीकार नहीं हुआ । उन्हें एक विधवा राजपुतानी के रूप में अपने अस्तित्व केलिए सशक्त संघर्ष करना पडा । मीरा को सदा सास, ननद, देवर, पंडित-पुरोहित जगत् सबकी कडवी वाणी सुननी पडी । सभी बंधनों को तोडने की इच्छा उनके मन में रही । इस इच्छा के कारण उन्होंने कहा कि मैं हरि के बिना जी नहीं सकती । सास लडती है, ननद खिजती है, पहरा बिठला दिया जाता है, ताला जड दिया जाता है, ताकि मीरा बाहर न जाय...........

"हेली म्हासू हरि बिन रह्यो न जाय
सास लडे मेरी ननद खिजावै, राणा रह्या रिसाय
पहरो भी राख्यो, चौकी बिठारयौ ताले दिया जडाय "[1]

इसप्रकार मीरा द्वारा तत्कालीन नारी जीवन के वास्तविक अनुभवों को शब्दबद्ध करने का प्रयास ही हुआ है । उनके पदों में उनकी ही व्यथा नहीं अपने समय की असंख्य नारियों के दुःख व्यथा का ही चित्रण हुआ है ।

पुरुषवर्चस्व की चुनौती मीरा के काव्यों में देख सकते हैं । लोकलाज को तोडने की इच्छा भी मीरा ने प्रकट की है । वे राणा को चुनौती देते हुए कहती है :-

"लोकलाज कुलकण जगत् की, दइ बहाय जस पानी
अपने घर का परदा कर लें, मैं अबला बौरानी "[1]

---

[1] **देशराजसिंह भाटी - मीराबाई और उनकी पदावली -पृ 216**

मीरा स्वयं को अबला कहकर व्यंग्य रूप में राणा से बताती है कि बावली अबला होने के कारण उसकी इज़्जत की कोई परवाह नहीं है पर राणा की पत्नी जो है ,इज़्जत वाली है , राणा जैसे पति की पत्नी है उसका ख्याल करना है | इसके संबंध में मैनेजर पाण्डेय का कथन है :- "यहाँ एक सजग स्त्री स्वर सुनाई देता है । जिसमें आक्रोश की अनुगूँज है, किसी पीडित स्त्री की चीख या पुकार नहीं । इससे यह भी स्पष्ट हैं कि संकल्प और आस्था के साथ अपनी अस्मिता और स्वतंत्रता केलिए सघर्षशील अबला भी पुरुष प्रभुत्व केलिए चुनौती बन सकती है।"[2] स्त्री होने के नाते कई विषम परिस्थितियों से गुज़रती मीरा ने अपने पदों द्वारा युगों से उपेक्षित नारी केलिए संघर्ष किया । मीरा के पद भक्ति और विद्रोह का समन्वय है ।

2.2.4 राजाराणी देवी

सन् 1900 के बाद कई कवयित्रियाँ राजघरानों के भीतर एवं बाहर सक्रिय रही । राजाराणी देवी उनमें प्रमुख थी । उनका नाम तो सती संयोगिता थी, पर उसका काव्य बिलकुल उसके नाम को सार्थक बनानेवाला न था । अपने समकालीन स्त्रियों को, अपने को भाग्यहीन समझनेवालों को जाग्रत करने का प्रयास उन्होंने किया ।

> "देवियो ! क्या पतन अपना देखकर नेत्र से आँसू निकलते है
> नहीं ? भाग्यहीना स्वयं को क्या लेखकर, पाप से कलुषित
> हृदय जलते नहीं ?

---

[1] देशराज सिंह भाटी - मीरा बाई और उनकी पदावली - पृ 211

[2] मैनेजर पाण्डेय - भक्ति आन्दोलन और सूरदास का काव्य - पृ 41

क्या न अब कुछ देश का अभिमान है ?

खो गयी सुखमय सभी स्वाधीनता

हो रहा कितना अधिक अपमान है ?

समुद इसको कौन सकता है बता "[1]

सती संयोगिता की रचना के बारे में सुमन राजे का कहना है " हिन्दी कविता में संभवत: यह पहला अवसर है जब किसी कवयित्रि ने प्रत्यक्ष भाव से स्त्रियों का आह्वान किया हो "[2] निश्चय ही संयोगिता की पंक्तियाँ अपने समकालीन स्त्रियों को जाग्रत करनेवाली थी ।

2.2.5 सुभद्राकुमारी चौहान

बचपन से सुभद्राजी विद्रोह ही अपनाती थी । अशिक्षा, अंधविश्वास, जातपॉत , पर्दाप्रथा आदि रूढियों के प्रति बचपन से ही कविता लिखकर अपना विद्रोह प्रकट करती थी । राष्ट्रप्रेमी सुभद्राजी के काव्य विषय के मूल तत्व अपने पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय जीवन से लिये गये थे । वे स्वतंत्रता सेनानी थी । इसलिए कई वीरोचित गीत लिख कर स्वतंत्रता सेनानियों को प्रेरणा दी । ओमप्रकाश शर्मा का कहना है "साहित्य के माध्यम से इन्होंने देशसेवा की उत्कट आंकाक्षा प्रकट की और व्यावहारिक रूप से स्वतंत्रता संग्राम की अग्रणी नेता बनी ।"[3] उनकी कविताओं से प्रेरणा पाकर कई नव युवक-युवतियों ने स्वतंत्रता संग्राम में भाग लिया ।

---

[1] **सुमन राजे - इतिहास में स्त्री -पृ 25**

[2] **वहीं :- पृ. 25**

[3] **ओमप्रकाश वर्मा - समकालीन महिला लेखन - पृ 141**

'त्रिधारा', 'मुकुल' और 'बुंदेले हरबोलों के मुँह' सुभद्राजी के प्रमुख काव्य संकलन है । सुभद्राजी ने अपनी कविताओं के द्वारा अपने अधिकारों के प्रति नारी को सजग करने का प्रयास किया ।

सुभद्राजी के समय भारत में स्वतंत्रता आंदोलन चल रहा था । वे सदा अपनी कविताओं के द्वारा स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने केलिए स्त्रियों को आह्वान करती रही । 'विजयदशमी' कविता में वे पुरुषों को चुनौती देती हुई कहती है, यदि पुरुष भीरू है तो अबला नारी देश में घोर युद्ध चलाने केलिए तैयार है । उनकी इच्छा है पन्द्रह करोड असहयोगिनियाँ ब्रहमाण्ड को दहला दें और भारत की लक्ष्मी को लौटाने केलिए लंकाकांड रचा दें :-

"सबल पुरुष यदि भीरू है तो हमको दे वरदान सखी
अबलाएँ उठ पडे देश में, करे युद्ध घमसान सखी
पंद्रह कोटि असहयोगिनियाँ, दहला दें ब्रहमांड सखी
भारत- लक्ष्मी लौटाने को रच दें लंका काण्ड सखी ।"[1]

सुभद्राजी के भीतर देश की स्वतंत्रता की तडप रही थी । वे राणी लक्ष्मीबाई की वीरता का वर्णन करके उसी प्रकार वीर होने केलिए आह्वान करती है । साथ ही अनेक नवयुवक-युवतियों से गुलामी की ज़जीर तोडने का आह्वान करती है, 'झॉसी की राणी' कविता इसकेलिए उदाहरण है :-

---

[1] **सुभद्राकुमारी चौहान - मुकुल -पृ 93**

"खूब लडी मर्दानी वह तो
झॉसीवाली रानी थी " [1]

इस प्रकार लिखकर औरत की बहादूरी को जन-जन तक पहुंचाने का काम सुभद्राजी ने किया।

2.2.6 महादेवी वर्मा

छायावादकालीन कवयित्री महादेवी वर्मा की कविताएँ नारी के दु:ख दर्द की खुला दस्तावेज़ है। नारी चेतना भरी उनकी सृजनात्मकता पद्य तक सीमित न रही। नारी विषयक उनके विचारों का गहरा चित्रण पद्य से अधिक गद्य में ही हुआ है। उनका निबंध संकलन 'श्रृखला की कडियाँ' इसकेलिए उत्तम उदाहरण है। यह नारी विषयक अठारह निबन्धों का संकलन है। इसके सबंध में कृष्णदत्त पालीपाल का कहना है :- "श्रृखला की कडियाँ लिखी ही इसलिए गई कि वे भारतीय नारी का समाज सच सामने ला सके। आज से पचास-साठ वर्ष पहले का भारतीय समाज अपनी विद्रूपताओं, विकृतियों के साथ 'दस्तावेज़' की तरह उपस्थित है। नारी यातना का सामाजिक इतिहास आज भी हमारे लिए अतीत कम वर्तमान 'ज़्यादा' है।"[2] समाज के बदलने पर भी शोषण जारी है।

नारी विषयक अपने दृष्टिकोण महादेवी जी ने अपने काव्य संकलन 'दीपशिखा' की भूमिका में भी व्यक्त किया है। वे कहती हैं कि "स्त्री के जीवन के

[1] **सुभद्राकुमारी चौहान - मुकुल -पृ 68**
[2] **कृष्णदत्त पालीवाल - नवजागरण और महादेवी वर्मा के रचनाक्रम : स्त्री विमर्श के स्वर - पृ. 9**

तार-तार को जिसने तोड कर उलझा डाला है, उसके अणु अणु को जिसने निर्जीव बना दिया है, उसके संसार को जो धुल के मोल लेती रही है, पुरुष की वही लालसा आज भी नारी केलिए विश्वरत मार्गदर्शिका न बन सकेगी “[1] नारी यातना की उत्तरदायी के रूप में वे पुरुष को मानती है।

महादेवी जी के समय में, समाज में स्त्रियाँ अस्वतंत्र थीं , वे अशिक्षित थीं, और घर की चारदीवारी में बन्द भी । अपना कहने केलिए उन्हें एक घर भी नहीं था, घर का स्वामित्व उनके पति को था । नारी की इस निसहायवस्था का चित्रण उनके काव्यों में देख सकते हैं । महादेवी जी के ‘मैं नीर भरी दु:ख की बदली’ कविता में अपने को बदली से तुलना करके बताती है कि इस विस्तृत आकाश में नारी केलिए अपना एक कोना भी नहीं है । अर्थात् न इतिहास में है, न समाज में । वह थोडे दिन केलिए महज इस्तेमाल की वस्तु है ।

“मैं नीर भरी दु:ख की बदली
विस्तृत नभ का कोई कोना
मेरा न कभी अपना होना
परिचय इतना इतिहास यही
उमडी कल थी मिट आज चली “[2]

यहाँ महादेवी जी अपनी नहीं, सभी स्त्रियों की हालत बता रही है । अस्मिता की पहचान न होने का संकट यहाँ उभरकर आयी है ।

---

[1] **महादेवी वर्मा - दीपशिखा (भूमिका) - पृ 41**

[2] **महादेवी वर्मा (सं निर्मला जैन) - महादेवी साहित्य (सांध्यगीत) - पृ 273**

सदियों से नारी घर के चारदीवारी में बंदी रही । जब उसे इस बन्धन का एहसास होता है, तब वे युग से घिरी दीवारों से टकाराती है । अत्यंत विनय के साथ अपने को स्वतंत्र होने की इच्छा प्रकट करती है :-

"कीर का प्रिय आज पिजंर खोल दो
हो उठी है चंचु छूकर
तीलियाँ भी वेणु सस्वर
वंदिनी स्पंदिन व्यथा ले
सिहस्ता जड मौन पिजंर"[1]

इन पक्तियों के संबन्ध में कृष्णदत्त पालीवाल का कहना है "महादेवी की काव्यानुभूति में पराधीनता से मुक्ति केलिए पिजंरे में बन्द तोते की बेचैनी है ।"[2] जिसप्रकार पिंजरे में बंद चिडिया तडपती रहती है, उसीप्रकार घर के चारदीवारी में बन्द नारी भी तडपती रहती है ।

2.2.7 विद्यावती कोकिल

स्वतंत्रता सेनानी कवयित्रियों में विद्यावति कोकिल का नाम प्रमुख है । वे किशोरावस्था में ही गाँधीजी के प्रभाव में आकर राष्ट्रीय गीत एवं कविताएँ लिख रही थी । स्वतंत्रता आंदोलन में भी उन्होंने भाग लिया और वे कई बार जेल भी गयी । उनके संबन्ध में आशाराणी व्होरा का कहना है :- " भारतीय नारी की सामाजिक रूढियों को उन्होंने निर्भय होकर तोडा था । तमाम तरह के राष्ट्रीय,

---

[1] **महादेवी वर्मा (सं निर्मला जैन) - महादेवी साहित्य (सांध्यगीत) - पृ 282**

[2] **कृष्णदत्त पालीवाल - नवजागरण और महादेवी वर्मा के रचनाक्रम : स्त्री विमर्श के स्वर - पृ.20**

सामाजिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक आयोजनों में उनकी सक्रिय भागीदारी रही ।"[1] उनकी काव्यचेतना पर अरविंद दर्शन की भी छाप पडी थी । उनका सर्वाधिक लोकप्रिय संकलन है 'अंकुरिता' ,'सुहागिन', 'पुर्नमिलन' आदि । नारी मन की स्वतंत्रता एवं बंधनों को तोडने की इच्छा को अपनी कविताओं में विद्यावती ने स्थान दिया । उनकी 'साधना' कविता इसका उदाहरण है।

"आज जल उठा एकाकीपन
तोडो मेरी कारा तोडो
घाव बन गया यह दुराव अब
खोलो मेरे बंधन खोलो
एक बार जी भर कर निष्ठुर !
मैं मानव को प्यार करूँगी । "[2]

भारतीय नारी की गृहस्थ जीवन के वर्णन करने के साथ ही उन्होंने परमतत्व से तादात्म्य की अनुभूतियों को भी स्थान दिया था ।

2.2.8 शकुन्त माथुर

नयी कविता की प्रथम कवयित्री शकुन्त माथुर मानव जीवन की यथार्थ स्थितियों और विडंबनाओं को गहनता एवं समग्रता के साथ चित्रण करनेवाली कवयित्रि है ।

---

[1] **आशाराणी व्होरा - स्वतंत्रता सेनानी लेखिकाएँ -पृ** 109

[2] **विद्यापती कोकिल - स्त्री काव्यधारा (संकलन-संपादन- जगदीश चतुर्वेदी -पृ** 194

सन् 1951 में अज्ञेय द्वारा संपादित 'दूसरा सप्तक' के अलावा 'चाँदनी चूनर, 'अभी कुछ', 'लहर नहीं टूटेगी' आदि उनका अन्य काव्य संकलन है । आधुनिक भारतीय जीवन के बृहत्तर सामाजिक यथार्थों को नारी मन की सहजता के साथ चित्रण करने में वे अग्रणी थीं । नारी जीवन को गृहस्थी में सीमित रखने में वे असंतुष्ट थीं । उनका विचार था :-"नारी का सुख केवल उसकी घर-गृहस्थी तक ही सीमित हैं | यह मैं नहीं जानती गृहस्थी के साज सॅवर के बाद भी वह पूरा संतोष नहीं पाती ,उसे लगती है, जैसे वह अपूर्ण है |"[1] वे घर के बाहर नारी उपस्थिति होने का आह्वान देती हैं । उनका कहना है:-

"तुमने
ऊपर से नीचे गिराया
तुमने
मेरे सत्य को झूठ ठहराया
तुमने
मेरे विश्वासों को
भ्रम का आवरण पहनाया
तुमने मेरी पूर्णता को नग्न किया
तुमने
विरोधी तत्व बन
मेरे जड को मग्न किया
और
मैं जी उठी"[2]

---

[1] शकुंत माथुर - दूसरा सप्तक (सं.अज्ञेय)- पृ30
[2] शकुंत माथुर - अभी और कुछ -पृ 33

शकुंत माथुर जी के समय में अधिकांश स्त्रियाँ अपने जीवन घर गृहस्थी में बिता रही थी । वह घर की चारदीवारी में कैद थी । उससे मुक्त होने का प्रयास उसकी ओर से न होती थी । वह अपने को कमज़ोर मानकर, स्वतंत्र होने का मार्ग स्वयं बन्धकर अपने को कोसती रहती थी । माथुर जी ने नारी जीवन की इस बदहालत की ओर इशारा करती है :-

"मैं इतना कमज़ोर क्यों हूँ
जो आगे बढा हुआ कदम
मोड लेती हूँ
जहाँ से शुरू हुई भी
अपने खुले हुए मार्ग
स्वयं बन्द कर
अपने ही को कोसती रहती हूँ
और चहार दीवारी में
होली सी जलती रहती हूँ ।[1]

यहाँ नारी मन की हीनता भाव को दूर करके, उसकी अस्मिता की पहचान कराने की कोशिश कवयित्री करती है ।

2.2.9 कीर्ति चौधरी

कीर्ति चौधरी तीसरे सप्तक की एकमात्र कवयित्री है । कविता संबन्धी अपनी विचार उन्होंने तीसरे सप्तक के वक्तव्य में व्यक्त किया है । उनका कहना है

[1] **शकुंत माथुर -लहर नहीं टूटेगी - पृ** 42

“कविताएँ सच यह है कि अधिकतर ऐसी रही है जिन्हें मन में बॉध कर रखना संभव न हो सका । उनको कह डालने का अपराध मुझे जाने अनजाने में हो गया है| “[1] ‘खुले हुए आसमान के नीचे’ उनका एकमात्र काव्य संकलन है। जिसमें उन्होंने पुल्लिंग में लिखने का अपना शौक स्पष्ट किया है । नारी मन की रागात्मक अनुभूतियों के साथ प्रेमी की निसहायावस्था का वर्णन भी हुआ है ।

प्रेम एक विशिष्ट प्रकार की अनुभूति है । प्रेम में प्रेमी-प्रेमिका को सुखद अनुभव के साथ साथ कई मुसीबतों का सामना करना पडता है । उनको कई प्रकार के संघर्ष भी झेलना पडता है । विशेषकर प्रेमिका को। कभी उसे अपने प्रेम में सफलता महसूस नहीं होती । प्रेम संबंधी कई प्रकार के प्रश्न उनके मन में जन्म लेते है | उनकी कविता तुझसे नेह लगाया उसका उत्तम निदर्शन है |

“ सॅग सॅग कितने दिवस बिताए
सुख दु:ख के अनगिनती चित्र बनाए रॅग रॅग
आह ! दु:ख की एक मार ने
सब बिसराया
क्या पाया यदि मैंने तुझसे नेह लगाया“[2]

प्रेम ने सुख-दु:ख, बदल बदलकर आता रहता है | प्रेमी और प्रेमिका को दोनों हालतों से गुज़रना पडता है |

---

[1] **कीर्ति चौधरी - तीसरा सप्तक (वक्तव्य) -पृ** 34

[2] **कीर्ति चौधरी - खुले हुए आसमान के नीचे - पृ 67**

2.2.10 सुमन राजे

सुमन राजे चौथे सप्तक के एकमात्र कवयित्री है । वे नाट्य लेखन एवं नाट्य रूपांतरण में अधिक व्यापृत थी । ‘सपना और लाशघर’, ‘उगे हुए हाथों के जंगल’, ‘यात्रादंश’ आदि उनके काव्य संकलन है ।

समाज में नारी की बदहालत पर सुमन राजे अत्यंत दु:खी थी । उसे व्यक्त करने केलिए उनकी तुलना बैल से करती है । वे व्यंग्य करती है कि औरत तो महँगी नहीं, पर बैल महँगा । बैल केवल भूसा ही खाता है, पर औरत केलिए जूठन ही अधिक है ,इतना नहीं औरत , बैल और गाय दोनों का काम भी करती है| ‘मनुपुत्र के नाम पर एक खुली चिट्ठी’ कविता की पंक्तियाँ देखिए

“खाता है भूसा लेकिन औरत तो
जूठन से ही हट्टी –कट्टी बनाती है
बैल सिर्फ बैल होता है
औरत एक साथ दोनों काम करती है
बैल का भी और गाय का भी”[1]

सुमन राजे ने पुराण में नारी पर जो शोषण हुआ है, उसपर अपना विद्रोह प्रकट किया है । आदर्श राजा राम ने जब सीता का परित्याग किया , उस पर वे अपना विद्रोह प्रकट करती हैं । ‘यात्रादंश’ कविता में मर्यादा पुरुष राम सीता पर धर्म के नाम पर जो धोखा देता है उसका वर्णन यों करती है :-

---

[1] **सुमन राजे** - **यात्रादंश** -**पृ** 62

“छली गई सीताओं को
लौटाना भी धर्म है
पाकर अग्नि को सौंपना भी
फिर गर्भ की कर त्यागना
भी धर्म ही तो है
क्या होता है ऐसा
कि
रामराज्यों में काने
धोबी की चलती है अग्नि
साक्षी वैदेही छली
जाती है “[1]

इस तरह परंपरा और इतिहास पर प्रश्न चिह्न लगाती है ।

2.2.11 कुसुम कुमार

कुसुम कुमार मूलत: नाटककार है । वे जीवन को अनुभूति, संवेदना और विचार के विभिन्न धरातलों पर ग्रहण करनेवाली कवयित्री भी है । ‘रास्ते भर जंगल’ उनका प्रसिद्ध काव्य संकलन है ।

नारी समस्याओं को लेकर उन्होंने कविताएँ रची है । विशेषत: नारी शोषण को लेकर । उनमें दहेज के नाम पर होनेवाला शोषण अत्यंत जघन्य है । रोज समाचार पत्रों में दहेज संबन्धी हत्या व आत्महत्या के समाचार पाये जाते हैं

[1] **सुमन राजे** - **यात्रादंश** -**पृ** 5

। दहेज की कमी के कारण ससुराल में आत्महत्या करने को मजबूर अबला नारी का चित्रण करती है ‘दस मन दहेज में, नामक कविता में -

“ मैं हँसू
तुम हसो
जब्त पर
जब पर
अखबार की ताज़ा खबर पर
गदम चाहिए था
सीतल के ससुराल वालों को
दस मन
दहेज में
वह नहीं लाई
और भगवान के पास बुलाई गई
अपने ही हाथों ।“[1]

दहेज प्रथा की बुराइयों को वे यों अभिव्यक्ति देती हैं ।

2.2.12 स्नेहमयी चौधरी

भारतीय नारी का सच्चा चित्रण करनेवाली कवयित्री है ‘स्नेहमयी चौधरी’ । ‘एकांकी दोनों’ उनके प्रसिद्ध काव्य संकलन है । उसमें मुख्य रूप से घर और अहाते में बन्द भारतीय नारी का चित्रण ही हुआ है ।

[1] **कुसुम कुमार - रास्ते भर जंगल - पृ** 83

घरेलू औरत का जीवन यातनापूर्ण है सुबह से रात तक वह घर के काम करती ही रहती है। वह सदा काम करके अपने सभी दु:खों को सहती है। सुबह होते ही वह धान कूटती है, धूप आते ही अरगनी में चादर सुखाती है। और शाम होते ही अपने बीमार बच्चे की सेवा करती है। 'वह औरत' कविता में इसका चित्रण है :-

"वह औरत
चाहे कब से जीवित है
सुबह कूटती है धान दोपहर
धूप की अरगनी में
सुखाती है चादर
शाम को पोंछती रहती है
अपने बीमार बच्चे के
मुँह से निकलती लार
और बुनती रहती है
अनंत विचारों का ताना-बाना "[1]

घरेलू औरत की यातना भरी ज़िन्दगी का यथार्थ यहाँ खुलता है।

2.2.13 प्रभा खेतान

प्रभा खेतान अस्सी के दशक की अत्यन्त संवेदनशील कवयित्रि है। 'अपरिचित उजाले', 'सीढियाँ चढती हुई मैं', 'एक और आकाश की खोज',

[1] **स्नेहमयी चौधरी** - **परिवर्तन(काव्य संकलन)** -पृ 34

'कृष्णधर्मी मैं', 'हुस्नबनो और अन्य कविताएँ', 'अहल्या' आदि अस्सी के दशक के उनके प्रसिद्ध काव्यसंकलन है । उनकी अधिकांश कविताओं की मूल संवेदना प्रेम है । प्रेम में वियोग पक्ष का चित्रण अधिक हुआ है । उन्होंने अपनी कविताओं द्वारा पितृसत्तात्मक समाज की स्त्री विरोधी मानसिकता का चित्रण किया है ।

पितृसत्तात्मक समाज में पुरुष सदा नारी को अपना अधीन रखना चाहता है । 'तुम चाहते हो' कविता में पुरुषवर्चस्व के इस मनोभाव का पर्दाफाश किया गया है ।

"तुम चाहते हो
मैं तुम्हारे गमले का फूल बनूँ
उगूँ तुम्हारे बरौनियों के सूरज को देख
तुम चाहते हो
मैं बनूँ तुम्हारे ड्राइंग रूम का कालीन
पर्दे, सोफा या बैड कवर
फैली रहूँ बिस्तर पर "[1]

यही दृष्टिकोण ही परंपरा से समाज में पुरुष द्वारा नारी के प्रति कायम है । पुरुष, अपने इच्छा को समझकर उसकी पूर्ति करनेवाली नारी को ही चाहता है ।

अहल्या के मिथक को लेकर प्रेभा खेतान ने नवीन वैचारिक दृष्टि से कविता रची है | इसमें अहल्या की कारुणिक कथा के ज़रिए परित्यक्ता के दु:खी जीवन की

---

[1] **प्रभा खेतान - अपरिचित उजाला - पृ** 25

ओर संकेत किया गया है | संवेदनशील राम ने आत्मीय भाव से अहल्या का उद्धार किया | कवयित्री का विचार है कि आज के संवेदनशून्य समाज में नारी के द्वारा राम की प्रतीक्षा करना व्यर्थ है | इसलिए कविता द्वारा कवयित्री अपने अस्तित्व और अस्मिता के प्रति स्वयं सजग एवं सतर्क होने का संदेश देती है |अपनी समस्याओं केलिए स्वयं समाधान ढूढने का उपदेश देती है |

2.3 पूर्ववर्ती कवियों की कविताओं में नारी चेतना

आदिकालीन और मध्यकालीन कवि नारी के प्रति उपेक्षा भाव ही रखते थे | आदिकालीन सिद्ध नाथापंथियों ने अपने काव्यों में नारी को साधना में बाधा उत्पन्न करने वाली चीज़ के रूप में चित्रित किया था | भक्तिकाल के कवियों ने उन्हें विविध रूप में चित्रित किया |सूफी कवियों ने उन्हें ईश्वर का प्रतीक माना | संत कवियों ने उन्हें माया समझकर उनसे दूर रखने का उपदेश दिया |सगुणभक्त कवियों ने उनका आदर्श रूप प्रस्तुत किया | पर उनको कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं दिया नारी का आदर्श उदात्त रूप सूर की राधा और तुलसी की सीता में देख सकते है | सूर की गोपियाँ नारीमार्यादा का निर्वाह करते हुए अपने हृदय पटल पर केवल कृष्ण को स्थान देती है उसी प्रकार तुलसी की कौसल्या और सूर की यशोधा में मातृत्व की कल्पना भी साकार हो उठी है| रीतिकाल में नारी को मात्र भोग विलास का उपकरण माना गया |इसा काल के कवियों ने मनोरंजन केलिए

स्त्री शरीर का अश्लील वर्णन करते रहे | घनानंद , बिहारी आदि कवियों द्वारा प्रेयसी की वियोगावस्था का चित्र अंकित किया गया है |

हिन्दी कविता के आधुनिका काल में सामाजिक , राजनैतिक स्तर पर हुए पुर्नजागरण और राष्ट्रीय आन्दोलन से बहुत अधिक प्रभावित हुई | कवि के नारी प्रति दृष्टिकोण में बदलाव आया | भारतेंदु ने नर और नारी समानता केलिए आवाज़ उठायी |इसके लिए उन्होंने 'बालबोधिनी' नामक पत्रिका का भी संपादन किया |भारतेंदु कालीन कवियों ने अपनी कविताओं में नारी को रूढियों अंधविश्वासों एवं कुरीतियों से मुक्त कराने की कोशिश की|

2.4 बीसवीं सदी के कवियों की कविताओं में नारी चेतना

हिन्दी साहित्य के इतिहास में आधुनिक काल में नारी भावना एक मोड लेती है | क्योंकि इस काल में वह युग की आवश्यकतानुरूप पुरुष के साथ युग पथ चलकर प्रत्येक क्षेत्र में अपना योगदान दे रही है | इस समय के कवि वस्तुत: राजनैतिक एवं सामाजिक गतिविधि से अभीभूत नारी के व्यक्तित्व से परिचित है | ऊर्मिला, कैकेयी, सीता , पार्वती, राधा, यशोधरा आदि नारी चरित्रों को भी इस युग में मनोवैज्ञानिक पीठिका पर उभारकर प्रस्तुत किया गया है | इन कवियों ने समाज में स्त्रियों की दशा सुधारने केलिए हुए आंदोलनों से प्रभावित होकर ,मध्ययुगीन संकुचित नारी भावना का परित्याग कर, उदार दृष्टिकोण अपनाया |

2.4.1 महावीर प्रसाद द्विवेदी

महावीर प्रसाद द्विवेदी नारी के प्रति स्वस्थ, सामाजिक दृष्टि के पक्षधर थे, साथ ही वे अश्लीलता के प्रचंड विरोधी भी थे ।रीतिकालीन कवियों ने नारी को भोग की वस्तु बतलाकर उसके व्यक्तित्व को हीन बनाया था । इसके फलस्वरूप नारी की सामाजिक हैसियत खतरे में पडी थी । पर द्विवेदी जी इसके प्रति अपने समकालीन रचनाकारों को सचेत किया और नारी सौंन्दर्य और श्रृंगार रस का गलत एवं मनमाने उपयोग करने केलिए कवियों को दोषी ठहराया । उन्होंने श्रृंगार के शिष्ट वर्णन को ही वाँछनीय माना।

नीतिवादी, मर्यादावादी समाज सुधारक होने के कारण द्विवेदी जी को नारी के मर्यादा और गरिमा का पूरा ख्याल था । परिणामस्वरूप द्विवेदी युगीन नारी अपने बहुआयामी सामाजिक स्वरूप में प्रकट हुई। द्विवेदी जी के कठोर अनुशासन के कारण साहित्य के क्षेत्र में भी अभूतपूर्व परिवर्तन हुआ और उनके प्रयासों के फलस्वरूप नारी के प्रति रचनाकारों की दृष्टि आदर्शात्मक एवं सुधारात्मक हो गयी ।

द्विवेदीजी की अधिकांश कविताएँ अनूदित थी ।पर अनूदित रचनाओं में भी नारी समस्याएँ उभरकर आयीं ।नारी की सामाजिक हैसियत, शिक्षा, विधवाओं की दशा, बाल-विवाह, दहेज प्रथा आदि विषयों को कविता का आलंबन बनाया ।

सामाजिक सुधारक होने के कारण द्विवेदीजी ने सामाजिक कुरितियों का घोर विरोध किया । उन्हें मालूम था कि दहेज जैसी सामाजिक कुरीतियों के

दुष्परिणाम को भुगतने केलिए नारियाँ अभिशप्त होती है । इसलिए 'ठहरौनी'शीर्षक कविता में वे इसका पर्दाफाश करते हैं :-

"लड़के के विवाह में कहिए मोलतोल क्यों करते हो ?
इस काले कलंक को हा हा ! क्यों अपने सिर धरते हो ?
जिनके नहीं शक्ति देने की क्यों उनका धन हरते हो ?
आकर उच्च सुयश-सीढ़ी पर क्यों इस भाँति उतरते हो ?"[1]

इस प्रकार द्विवेदी जी नारी उत्थान केलिए आजीवन प्रयत्नरत रहे । नारी संबंधी उनकी सजगता के कारण उन्हें प्रासंगिक कहना समीचीन है । करुणाशंकर उपाध्याय का कहना है :"आज प्रचार माध्यमों के ज़रिए सस्ते मनोरंजन के नाम पर नारी को रीतिकाल से भी ज़्यादा, कामुक, अश्लील और नग्न रूप में प्रस्तुत किया जा रहा है और आज जब मॉडल जूते तक का विज्ञापन पूर्णत: नग्न होकर कर रहे हैं तथा इस काम में नारियाँ भी बढ़-चढ़कर हिस्सा ले रही है तो मानना पडता है कि हमारे समाज में रीतिकाल से भी ज़्यादा खतरनाक धुन लगता जा रहा है । साथ ही जब अश्लीलता को लेकर भारतीय संसद में भी बेचैनी व्यक्त की जा रही है तो आचार्य द्विवेदी जैसे व्यक्तित्व की प्रासंगिकता असंन्दिग्ध हो जाती है । उनकी भूमिका स्वत: प्रमाणित हो जाती है ।"[2]

---

[1] महावीर प्रसाद द्विवेदी – महावीर प्रसाद द्विवेदी रचनावली (संकलन संपादन- भारत यायावर) - पृ240

[2] **करुणा शंकर उपाध्याय - आधुनिक कविता का पुर्नपाठ - पृ 23**

2.4.2 मैंथिलीशरण गुप्त

गुप्त जी ने मुख्यत: अपनी रचनाओं में समाज की उपेक्षित नारियों की भावनाओं को वाणी दी है । उन्होंने पुराण की ऊर्मिला, यशोधरा, कैकेयी, द्रौपदी, शूरपणखा आदि द्वारा नारी की असीम व्यथा को आदर्शात्मक ढंग से चित्रित करने का प्रयाय किया । साथ ही नारी पर हो रहे अत्याचार के विरोध में आवाज़ भी उठायी ।

सरस्वती पत्रिका में महावीर प्रसाद द्विवेदी जी के 'कवियों की ऊर्मिला विषयक उदासीनता' नामक लेख से प्रेरित होकर गुप्त जी ने ऊमिला को नायिका बनाकर 'साकेत'महाकाव्य की रचना की । ऊर्मिला एकाएक उपेक्षिता से नायिका के पद पर आसीन हो गयी । गुप्तजी ने ऊर्मिला के चरित्र का उद्घाटन चेतना संपन्न अधिकार ग्रस्त नारी के रूप में किया । करुणाशंकर उपाध्याय का कहना है :- " वर्तमान उत्तर आधुनिक विमर्श तथा स्त्री विमर्श के दौर में ऊर्मिला के चरित्र का पुनर्पाठ अथवा पुनर्विश्लेषण युग की माँग है ।"[1] साकेत में उर्मिला के व्यक्तित्व को गुप्तजी ने बौद्धिक परिपक्वता एवं व्यावहारिक दृष्तिकोण से संपन्न बनाया है । ऊर्मिला-लक्ष्मण के आदर्श दाम्पत्य जीवन के संयोग और वियोग पक्षों की सुंदर झाँकी भी की है । साकेत के नवं सर्ग में प्रिय के विरह में रहते समय वह बहुत बौद्धिक दिखाई पडती है |कवि ऊर्मिला के ज़रिए नारी को जैविकता के साथ प्रस्तुत करता है |

---

[1] **करुणा शंकर उपाध्याय - आधुनिक कविता का पुर्नपाठ - पृ 25**

“कम्बल ही सम्बल है अब तो,

ले आसन भी आज पुनीत

आया यह हेमन्त दया कर

देख हमें सन्तप्त- सभीत “[1]

यहाँ ऊमिला के ज़रिए गुप्त जी ने नारी मन के अनंत भावों को पर्दाफाश किया है | गुप्तजी ने यशोधरा को भी विचार क्रान्ति के प्रतीक के रूप में चित्रित किया है| यशोधरा अबला का प्रतीक न होकर शक्ति का प्रतीक बनकर आती है |वह स्वाभिमान औरत है | उनके पति उसे अपने मार्ग का बाधा समझकर चुप चाप चले गये थे |यह उसके मन में बहुत आघात पहूँचाता है |

“सिद्धि हेतु स्वामी गये, यह गौरव की बात,

पर चोरी चोरी गये,यही बडा व्याघात

सखि वे मुझसे कहकर जाते

कह , तो क्या मुझसे वे अपनी पथ बाधा ही पाते

मुझको बहुत उन्होंने माना,

फिर भी क्या पूरा पहचाना ?”[2]

यशोधरा यहाँ जागृत एवं स्वाभिमान नारी के रूप में प्रकट हुई है |

---

[1] **मैथिली शरण गुप्त -साकेत -पृ 305**

[2] **मैथिलीशरण गुप्त - यशोधरा - पृ 26**

2.4.3 जयशंकर प्रसाद

छायावादी कवि प्रसाद ने नारी का चित्रण दया, ममता, अगाध विश्वास, त्याग, करुणा, बुद्धि आदि की प्रतिमूर्ति के रूप में किया । उन्होंने अपनी कविताओं द्वारा नारी की खोई हुई अस्मिता एवं गरिमा को पुन: प्रतिष्ठित करने का गंभीर प्रयास किया । उनके सैकडों नारी चरित्र इसका उत्तम निदर्शन है । प्रसाद की नारी चेतना के संबन्ध में करुणाशंकर उपाध्याय जी का कहना है :- "आधुनिक काल में नारी शिक्षा और चेतना के चलते भारतीय नारी व्यक्तित्व के नये आयाम उद्घाटित हुए । यदि बंगला में शरतचंद्र चट्टोपाध्याय के साहित्य में नारी जीवन के तमाम पहलुओं की विशिष्ट अभिव्यक्ति हुई तो हिन्दी में जयशंकर प्रसाद के साहित्य में उसे अभिनव दीप्ति और गरिमा प्राप्त हुई । प्रसाद की नारी चेतना एक गहरे सांस्कृतिक धैर्य पर अवलंबित है जिसमें प्रतिरोधी चेतना बहुत नवीन तथा तलस्पर्शी है |"[1]

प्रसाद के स्त्री पात्रों में सबसे सशक्त एवं प्रसिद्ध पात्र 'प्रलय की छाया' की कमलावती,कामायनी की ईडा आदि है । प्रसाद की 'कामायनी' हिन्दी के नायिका प्रधान महाकाव्य है । कामायनी के नायिका पात्र श्रद्धा में नारी के सारे सद्‌गुणों का समुच्चय है । वह प्रसाद की सर्वोत्तम नारी सृष्टि है | उसमें प्रसाद के सारी नारी चरित्रों के सद्‌गुणों का समन्वय देखा जा सकता है | प्रसाद ने उसे मानवीय सद्प्रवृत्तियों तथा सद्भावों के प्रतीक के रूप में चित्रित किया | वह पुरुष की प्रेरक शक्ति एवं उसे साँतवना देनेवाली है ? :-

---

[1] **करुणाशंकर उपाध्याय - आधुनिक कविता का पुनर्पाठ - पृ 75**

"दया,माया समता, लो आज
मधुरिमा लो, अगाध विश्वास
हमारा हृदय-रत्न-निधि स्वच्छ
तुम्हारे लिए खुला है पास | "[1]

नारी सौन्दर्य वर्णन में प्रसादजी अग्रणी थे | उनका सौन्दर्य वर्णन अतीन्द्रीय, वायवी एवं काल्पनिक थी | प्रसादजी ने कामायनी में श्रद्धा का जो सूक्ष्म वर्णन किया है यह इसका उत्तम निदर्शन है | कवि श्रद्धा के नील-परिधान में से अधखुले सुकुमार अंग की तुलना मेघवन में खिले हुए बिजली के गुलाबी रंग से करते है :-

"नील परिधान बीच सुकुमार
खुल रहा मृदुल अधखुला अंग
खिला हो ज्यों बिजली का फूल
मेघवन बीच गुलाबी रंग |"[2]

नारी की सूक्ष्म एवं अनंतरमणीय चित्र खींचना प्रसादजी की विशिष्ट कला है | इसप्रकार करके कवि ने सौन्दर्य को अनिवर्चनीयता प्रदान की है |

2.4.4 सुमीत्रानंदन पन्त

पंत के छायावादी काव्यों में नारी का महिमामयी प्रेरणादायी रूप का चितंण देख सकते है | नारी के श्रेयसी सहचरी, माँ आदि विभिन्न रूपों का चित्रण

---

[1] **प्रसाद - कामायनी (श्रद्धा सर्ग) - पृ 67**
[2] **प्रसाद -कामायनी ((श्रद्धा सर्ग) - पृ 56**

उन्होंने किया | उच्छ्वास, ग्रंथी भावि पत्नी के प्रति आदि उनकी नारी प्रेम संबंधी कविताएँ है | पंत ने अपनी प्रगतिशील कविताओं में पुरुष द्वारा नारी को मात्र वासना तृप्ति का उपकरण मानने की प्रथा का विरोध किया | पंत का विचार था कि नारी सदियों से बंदिनी के रूप में जी रहने के कारण उसे अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व नष्ट हो गया है | वे अपनी 'नारी' कविता में पुरुष द्वारा घर की कैद में बंद रखे नारी को मुक्त कराने का आह्वान करते है :-

"मुक्त करो नारी को, मानव
चिरबंदिनी
नारी को
युग-युग की बर्बर काया से
सजननी सखी,प्यारी को |"[1]

पंत नारी को मानवी की पूर्ण रूप देकर समाज के आवश्यक अंग के रूप में उसे प्रतिष्ठित करना चाहते है| पुरुषवर्चस्ववाले समाज में यह विचार प्रचलित है कि नारी मात्रं वासना तृप्ति का साधन है | समाज में प्रचलित इस धारणा का खडन करने का प्रयास पंत द्वारा हुआ | स्त्री को पुरुष समान अधिकार दिलाने केलिए उन्होंने 'नारी' कविता में आवाज़ उठायी |

"योनि नहीं है रे नारी, वह भी मानवी प्रतिष्ठित
उसे पूर्ण स्वाधीन करो,वह रहे न नर पर अवंलबित |"[2]

---

[1] **पंत - युगवाणी -पृ 64**
[2] **पंत - ग्राम्या -पृ 85**

कवि का मन नारी को योनि मात्र स्वीकार नहीं करता | कवि उसकी पूर्ण स्वाधीनता केलिए समाज से अनुरोध करते है| पंत ने अपनी कविताओं द्वारा नारी संबधी अवधारणा को निजी व स्वतंत्र सोच की भूमि दी है| उन्होंने स्त्री-पुरुष समानता का समर्थन करके नारी को ऊँचे स्थान पर प्रतिष्ठित कराने की कोशिश की है |

2.4.5 सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला

निराले की काव्य में नारी के अनेक रूप उपलब्ध है | उन्होंने काव्यों में मुख्य रूप से ग्रामीण एवं निम्न वर्गीय नारी का चित्रण किया है | उनकी कविता 'वह तोडती पत्थर' की मज़दूरिन भारतीय मज़दूर स्त्री का प्रतिनिधित्व करती है | गर्मी भरी दोपहर में भी अपने कर्म में मग्न मज़दूर स्त्री का चित्रण कवि यों करते है :-

"वह तोडती पत्थर
कोई न छायावार
पेड वह जिसके तले
बैठी हुई स्वीकार
श्याम तन, भर बैधा यौवन
नत नयन प्रिय कर्म रत मन
गुरू हथोडा हाथ, करती बार-बार प्रहार
सामने तरु मालिका अट्टालिका "[1]

---

[1] **निराला - अनामिका - पृ 71**

श्रमरत इस मज़दूरिन के सवाभिमान में मार खाकर भी न रोने की क्षमता है | उसकी उंगुलियों के सितार से झकार निकलती है | जिसका राग बडा ही विचित्र है |

निराला भारतीय समाज की विधवा की बदहालत में अत्यन्त दु:खी थे | क्योंकि समाज में कहीं भी उन्हें सम्मानित स्थान नहीं था, सब कहीं वे उपेक्षित थी | विधवा की यह दशा कवि के हृदय को मथती है, वह अपना सारा आक्रोश दैवी विधान परा उडेल देता है :-

"यह दु:ख वह जिसका नहीं कुछ छोर है
दैव अत्याचार कैसा घोर और कठोर है !
क्या कभी यों वे किसी के अश्रु जल ?
या किया करते रहे सबको विकल "[1]

यहाँ कवि समाज में स्त्री के उपेक्षित दु:खी रूप का चित्रण करके उनके प्रति सहानुभूति व्याक्त की है |

2.4.6 नरेन्द्र शर्मा

नरेन्द्र शर्मा अत्यधिक भावुक सहृदय कवि है | उनकी 'द्रौपदी'कविता नारी की महत्व को उद्घोषित करनेवाली है | वे पौराणिक पात्र द्रौपदी से प्रभावित हो

[1] **निराला -निराला ग्रथावली (सं.ऑंकार शरद) - पृ 77**

गये थे | कविता की भूमिका में उनका कहना है "सिद्ध यह हुआ कि द्रौपदी जितनी प्राचीना है, उतनी ही नवीना भी | कहा जा सकता है कि द्रौपदी नारी-शक्ति का एक शाश्वत नित्य-नवीन निरन्तर प्रतीक है |"[1] उनका विचार था कि नारी के आत्मोसर्ग द्वारा ही नर का जीवन सार्थक और सफल होता है | वह दु:ख की आग में जलकर पुरुष के पथ को प्रशस्त करती है |

"दहनशक्ति से मूल्य चुकाती
नारी, नर की जय का !
है नारी की सहनशक्ति में
संस्थित केतु विजय का "[2]

नरेन्द्र शर्मा ने द्रौपदी को एक ऐसी नारी के रूप में चित्रित किया है जो पुरुष केलिए प्रेरक शक्ति है साथ ही साथ उसका दिशा निर्देश भी करनेवाली है |

2.4.7 नागार्जुन

प्रगतिशील कवि नागार्गुन की कविताओं में मुख्य रूप से नारी के प्रति सम्मान व प्रतिष्ठा का भाव है | उनके काव्य संकलन 'तालाब की मछलियाँ', 'प्यासी पथरायी आँखें', 'रत्नगर्भा' आदि अधिकांश कविताएँ नारी पर केन्द्रित है | शूर्पणखा, अहल्या, रेणुका, शकुंतला ,सीता आदि नारी चरित्रों पर किये गये

---

[1] **नरेन्द्र शर्मा - द्रौपदी (भूमिका) - पृ 16**
[2] **नरेन्द्र शर्मा - द्रौपदी -पृ 70**

अत्याचारों पर भी उन्होंने कविताएँ रची | इन प्राचीन कथा प्रसंगों को आधुनिक संदर्भ में व्याखायित करने में वे सफल निकले है | नागार्जुन ने अपनी 'भूमिजा' कविता में राम द्वारा सीता परित्याग को नारी के प्रति अत्याचार के रूप में चित्रित किया है | उनकी राय में सीता की भू समाधि शोषण से मुक्ति का चरम है | कविता में सीता, युग परिवर्तन की कल्पना करती है | यह कविता नारी पुरुष दोनों केलिए मर्यादा, न्याय, विद्या, विवेक और बुद्धि समान होने की बात पर बल देती है |

"नर-नारी में मर्यादा का बोध
सम-सम होंगे, सम-सम होगा न्याय
सम-सम होंगे विद्या बुद्धि विवेक
टिक सकता है क्योंकर वहाँ प्रवाद
जाग्रत होगी वहाँ परख की आँच |"[1]

यहाँ नागार्जुन सीता द्वारा स्त्री पुरुष समानता का आह्वान करते हैं |\

2.4.8 धर्मवीर भारती

नए कवि धर्मवीर भारती नारी को पुरुष की सहकर्मिणी व सहयोगिनी मानने के पक्षधर थे | अपने काव्यों द्वारा वे नारी की सामाजिक स्थिति को

---

[1] **नागार्गुन - भूमिजा -पृ 67**

सुधारने में बराबर लगे रहे | वे नारी को पुरुष के समकक्ष मानने में विश्वास रखते थे | उन्होंने अपने प्रबन्ध काव्य 'कनुप्रिया' में राधा को एक नये व्यक्तित्व के साथ प्रस्तुत किया | | राधा को विलासिनीरूप में चित्रित न करके इतिहास निर्माण में सहयोगिनी एवं प्रतीक्षारत के रूप में चित्रित किया | राधा ने कृष्ण के साहचर्य को उसके अनेक क्षणों में पूरी तन्मयता के साथ जिया है | कृष्ण के साथ तन्मयता से जीती राधा पूरा विश्वास के साथ कहती है :-

"पर इस सार्थकता को तुम मुझे
कैसे समझाओगे कनुर
शब्द शब्द शब्द
मेरे लिए सब अर्थहीन है
यदि वे मेरे पास बैठकर
मेरे रुखे कुंतलों में ऊगलियाँ उलझाए हुए
तुम्हारे कॉपते अधरों ये नहीं निकलते "[1]

इसप्रकार कनुप्रिया में धर्मवीर भारती ने राधा को आधुनिक नारी के रूप में चित्रित किया है |

[1] **धर्मवीर भारती - कनुप्रिया - पृ 16**

2.4.9 भारत भूषण अग्रवाल

अग्रवाल जी की ‘अग्निलीक’ नारी मुक्ति पर ज़ोर देनेवाली लंबी कविता है | इसमें सीता के ज़रिए नारी के अपराजिता रूप प्रस्तुत करती है | प्रस्तुत कविता पुरुष की महत्वाकांक्षा केलिए दबी जानेवाली स्त्री की दर्दनाक कथा बताती है | इस में सीता स्वाभिमानी साहसी स्त्री है जो अपमान के सामने भी अपराजेय भाव से खडी है | वह अपने अधिकारों से सचेत होकर उसकेलिए समाज से संघर्ष करती है | सीता के हर शब्द पितृसत्तात्मक समाज पर प्रहार करनेवाले है | जब राम सीता को बुलावा भेजता है, तब वह उबल पडती है | पर वह अपनी पवित्रता किसी के सामने सिद्ध करना नहीं चाहती | वह वाल्मिकी से कहते कहती हैं कि वह पागल नहीं,बल्कि पूरे होश में ही बताती है कि

“यह ऑसू नहीं है गुरुदेव, ये अंगारे है
यह मेरे जीवन की आग है
जो मेरे भीतर धधक रही है |”[1]

पुरुष की महत्वाकांक्षा की रक्षा केलिए कुचली दी जानेवाली नारी तथा उसकी विद्रोही चेतना द्रष्टव्य है | सीता के हर एक शब्द पुरुषवर्चस्ववाले समाज पर प्रहार करनेवाले है |

[1] **भारत भूषण अग्रवाल - अग्निलीक - पृ 44**

2.4.10 रघुवीर सहाय

रघुवीर सहाय स्त्री के खिलाफ बनती सामाजिक साजिशों को पहचाननेवाले कवि थे | स्त्री जाति की बदहालत पर वे दु:खी थे| उन्होंने अपनी ‘पढ़िए गीता’ कविता में पढ़ी लिखी नारी की विवशता का चित्रण किया है | नारी की योग्यता और प्रतिभा जिसप्रकार निष्फल हो जाती है | उसका वर्णन व्यंग्यात्मक शैली में करते हैं:-

“ पढिये गीता
बनिये सीता
फिर इन सबने लगा पलीता
किसी मूर्ख को ही परिणीता
निज घर बार बसाईये
होय कटीली
ऑखें गीली
तडकी सीली, तबीयत ढीली
घर की सबसे बडी पतीली
भर कर भात पसाइये |”[1]

रघुवीर सहाय नारी को पूर्ण समग्रता के साथ प्रस्तुत करनेवाले कवि थे | उनकी ‘नारी’ कविता में नारी का चित्रण इसप्रकार किया गया है :-

---

[1] रघुवीर सहाय - रघुवीर सहाय की प्रतिनिधि कविताएँ (सं सुरेश शर्मा) - पृ 20

"नारी बिचारी है
पुरुष की मारी है
तन से क्षुधित है
मन से मुदित है
लपककर झपककर
अन्त में चित है "[1]

इसप्रकार नारी जीवन की अनिवार्य पीडादायक स्थितियों को अतिरंजित किये बिना वे उनके प्रति अपनी करुणा का परिचय देते हैं | भारतीय समकालीन समाज की स्त्री की यथार्थ स्थिति रघुवीर के काव्यों में देख सकते हैं |

निष्कर्ष

साहित्य के इतिहास परखने पर यह ज्ञात होता है कि साहित्यिक क्षेत्र में स्त्रियों ने प्राचीन काल से ही कार्य करने का प्रयास किया था | ऋग्वेद सूक्तें लिखनेवाले, ब्रह्मवादिनी रोमशा, थेरी गाथा के सुमंगलमाता थेरी आदि उस समय के प्रमुख लेखिकाएँ थी | भक्तिकाल में मुख्य रूप से मीराबाई ने अपनी रचनाओं द्वारा नारी अस्मिता एवं स्वतंत्रता केलिए संघर्ष किया | आधुनिककाल में महादेवी वर्मा, विद्यावती कोकिल, सुभद्राकुमारी चौहान, शकुंत माथुर, कीर्ति चौधरी, सुमनराजे, कुसुम कुमार, स्नेहमयी चौधरी आदि की रचनाओं में तत्कालीन समाज के नारी जीवन की झाँकी देख सकती है |

[1] **रघुवीर सहाय -राघुवीर सहाय के प्रतिनिधि कविताएँ (सं सुरेश शर्मा):- पृ 39**

आधुनिककाल के प्रारंभ में कवियों द्वारा भी नारी समस्याओं पर प्रकाश डाली | ये कवियों तत्कालीन समाज की नारी की दशा से अत्यधिक दु:खी थे | उन्होंने अपने उदार दृष्टिकोण के द्वारा, स्त्रियों की दशा सुधार ने केलिए अपने काव्यों द्वारा प्रयत्न किया | इसकेलिए उन्होंने पुराण नारी चरित्रों की सहायता ली | महावीर प्रसाद द्विवेदी, मैथिलीशरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद, निराला, पंत, धर्मवीर भारती , भारत भूषण अग्रवाल, रघुवीर सहाय,नरेंद्र शर्मा आदि इस समय की कतार लंबी है| इन सब कवियों ने नारी को समाज के आवश्यक अंग समझकर उसे प्रतिष्ठित करने का प्रयास भरपूर ही किया है |

.........൬൙.........

तीसरा अध्याय

नब्बे के दशक की कवयित्रियों की कविताओं में शोषण के विभिन्न आयाम

नब्बे के दशक की कवयित्रियों की कविताओं में शोषण के विभिन्न आयाम

स्त्री परिवार एवं समाज की असली धुरी है| इस धुरी को छिपाकर, दबाकर रखा जाता है और उसी समयउसी के आधार पर परिवार व समाज आगे बढ़ रहा है| इस तरह की यात्रा में स्त्री कहीं प्रत्यक्षत: नहीं दिखाई देती है, हर कहीं पुरुष का चेहरा ही दिखाई देता है| स्त्री का उपांतीकरण करता आ रहा है| आधुनिक स्त्री इसकी पहचान करने लगी है| इसके पीछे आधुनिक शिक्षा तथा संसार के विभिन्न नारीवादी आन्दोलन के साथ भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन एवं नवोत्थान की भूमिका भी है| इस प्रकार प्राचीन काल से लेकर समाज के भीतर एवं बाहर जारी नारी शोषण के इतिहास की सही पहचान उसे प्राप्त हुई|साथ ही पुरुष वर्चस्व के नाना प्रकार के तंत्रों-षडयंत्रों, जिसके ज़रिए वह स्त्री को गुलाम बनाके आ रहा था, उसे खोलने में स्त्री सफल भी हुई |

नारीवादी आन्दोलन और उससे उपजे गये नारीवादी विमर्श का प्रमुख दायित्व था सदियों से नारी को पुरुष के अधीन में रखती आ रही जटिल संरचना को ढूँढ निकालना| उमा चक्रवर्ती का कहना है- “ चूंकि नारीवादी अध्ययन एक नया क्षेत्र है इसलिए नारीवादी विमर्श का लगभग पहला काम यही था कि महिलाओं को अधीन करनेवाली जटिल संरचना को पहचाना जाए और उसे एक उचित नाम दिया जाए| इसप्रकार, बीसवीं सदी के आठवें दशक के मध्य से

नारीवादी विशेषज्ञों ने पितृसत्ता शब्द का प्रयोग कियाऔर उसे विशिष्ट अर्थ में पारिभाषित करना शुरू किया |"[1] तब से लेकर साहित्य और समाज में 'पितृसत्ता' शब्द व्यापक होने लग|

'पितृसत्ता' का तात्पर्य पुरुष की सत्ता है| अर्थात् ऐसी व्यवस्था जिसमें पुरुषों का स्त्रियों पर वर्चस्व रहता है और वे उनका शोषण और उत्पीडन करते रहते है |पितृसत्ता के संबंध में प्रभाखेतान का कहना है:-" पितृसत्ता एक सामाजिक घटना है, हज़ारों साल से चली आई ऐसी व्यवस्था है, जिसमें स्त्री की अधीनस्थता सर्वविदित है|पितृसत्ता ने स्त्री को अपने ज्ञान की वस्तु बनाया उसे साधन के रूप में प्रयुक्त किया, उसके नाम, रूप, जाति, गोत्र सब अपने सन्दर्भ में पारिभाषित किए|"[2] इस प्रकार पितृसत्ता नारी को घर की चारदीवारी में सीमित करने का, उसको विकास में बाधा डालने का, उसके प्रति समाज में भेदभावपूर्ण रवैया उत्पन्न करने का मार्ग खोला |

जहाँ पूँजी होती है, वहाँ वर्चस्व कायम रहता है| यही पितृसत्तात्मक व्यवस्था का भी आधार है| पितृसत्तात्मक व्यवस्था हमारे समाज में पनपने का प्रमुख कारण पूँजी है, जो पुरुषके अधीन है| इस व्यवस्था में पूँजी या संपत्ति का हस्तांतरण पिता से पुत्र यानि सिर्फ पुरुषों के बीच होता था| परंपरासे भारतमें

---

[1]उमा चक्रवर्ती :- नारीवादी राजनीति संघर्ष एवं मुद्दे -पृ.1 (सं.साधना आर्य), निवेदिता मेनोन, जिनी लोकनीता)

[2]प्रभा खेतान :- औरत अस्तित्व और अस्मिता (भूमिका पृ.14) सं.अरविंद जैन

उत्तराधिकार कानून ही कायम था| उत्तराधिकार कानून के ज़रिए केवल पुरुषों को पूँजी मिलती रहती थी| उत्तराधिकार केलिए पुरुष को वैध विवाह करना था| वैध संतान के नाम पर विवाह करके पुरुषने स्त्री शरीर पर स्वामित्व स्थापित किया| यौनिकता पर नियंत्रण के साथ पुरुषों को स्त्रियों की उत्पादक या श्रमशक्ति पर नियंत्रण प्राप्तहो गया| इस प्रकार उत्तराधिकार कानून के माध्यम से पूँजी और पूँजीके आधार पर घर-समाज, संपत्ति, शिक्षा, कानून आदि सभी क्षेत्रों पर पुरुषों ने कब्जा कर दिया|

3.1 परिवार में पुरुष की संप्रभुता

परिवार समाज का लघु रूप है| यह मनुष्य के सामूहिक जीवन का आधार स्तंभ है| विभा देवसरे का कहना है: “परिवार मोटे तौर पर, दो या दो से अधिक व्यक्तियों की उस इकाई को कहा जाता है जिसमें विवाह, रक्त संबंध ,दत्तक ग्रहण (गोद लेने) या सहमति के आधार पर आपस में एक दूसरे से जुडकर साथ रहें| संयुक्त राष्ट्र संघ के घोषणा पत्र के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को अपना परिवार बनाने का अधिकार है| परिवार के हर सदस्य के सुख दु:ख, देखभाल और सुरक्षा का दायित्व भी उसी परिवार पर होता है|”[1]सामाजिक नियमों, परंपराओं,आदर्शों एवं मूल्यों के आधार पर ही परिवार रूपी संस्था का संचालन होता है| और परंपरागत पारिवारिक रिश्तों के आधार पर ही सामाजिक मर्यादाओं का निर्धारण होता है|

[1]विभा देवसारे :- स्वागत है बेटी -पृ13

भारतीय परिवार व्यवस्था के केन्द्र में पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था है| अर्थात् परिवार में सर्वश्रेष्ठ होने का गर्व और आमदनी का नियंत्रक होने के कारण परिवार के सभी मामलों में फैसला लेने का अधिकार पुरुष को है| वहाँ नारी की उपस्थिति अस्थायी और गौण है| स्त्री पुरुष असमानता की शुरुआत परिवार से ही होती है| इस सन्दर्भ में कात्यायनी का कहना समीचीन है कि "इतिहास के पीछे की ओर चले एक विवाह प्रथा की स्थापना के साथ ही एक ओर जहाँ मानव सभ्यता के उच्चतर, अधिक वैज्ञानिक, नैतिक मूल्यों का जन्म हुआ, वहीं पुरुष द्वारा स्त्री को दास बनाये जाने की शुरुआत भी यहीं से हुई| धीरे-धीरे स्त्री एक सजीव, पारिवारिक संपत्ति में रूपांतरित होती चली गई|"[1] स्पष्ट है कि परिवार ही नारी शोषण का प्रथम जगह है|

अणु परिवार की तुलना में संयुक्त परिवार औरत केलिए कहीं अधिक दमनकारी अनुभव देता है| अर्थात् संयुक्त परिवार व्यवस्था में पारिवारिक बन्धन, और पितृसत्ता कहीं अधिक दृढ़ होती है | आजकल अणु परिवार व्यवस्था अधिक प्रचलित है| यह व्यवस्था भी पूँजीके आधार पर ही खडी है | पूँजीपति पति अपनी पत्नी को उत्पादन के एक औजार के रूप में ही देखता है|

नारी जागरण के फलस्वरूप नारीवादी समझ गयी कि परिवार से ही नारी का शोषण सबसे पहले शुरू होता है |क्योंकि वहाँ पुरुष वर्चस्व के दवाब में नारी

---

[1]कात्यायनी:- दुर्ग द्वार पर दस्तक -पृ.42

को जन्म से मृत्यु तक रहना पडता है | इस घरेलू गुलामी से नारी को मुक्त कराना नारीवादियों का प्रमुख दायित्व था| इसके लिए कात्यायनी एक नये पारिवारिक ढाँचे का सुझाव करती है: प्रश्न परिवार को बचाने का नहीं, एक उच्चतर नैतिक, सौन्दर्यात्मक उदात्त धरातल पर मानवीय प्रेम की प्राण प्रतिष्ठा का है, एक ऐसी सामाजिक कोशिका के निर्माण का है जिसमें स्त्री पूर्ण स्वावलंबन और स्वतंत्र अस्मिता के आधार पर, घरेलू गुलामी के सभी रूपों से मुक्ति पाकर, सामाजिक उत्पादन की प्रक्रिया में बराबर की भागीदारी करते हुए जिसे चाहे प्यार कर सके और पा सके|”[1]कात्यायनी स्पष्ट रूप में यह कहना चाहती है कि परिवार का आधार प्रेम और समानता पर निर्भर होना चाहिए | जहाँ स्त्री अपनी स्वतंत्रता एवं व्यक्तित्व को बनाये रख सकती है |

नब्बे के दशक की हिन्दी कवयित्रियों ने नारी के पारिवारिक बदहालत पर कई कविताएँ रची हैं | परिवार के नारी के, विभिन्न रूपों को उन्होंने अपने काव्य विषय बनाया| गृहस्थी के झंझट में दम घुटती नारी, दोहरी जिम्मेदारियाँ उठानेवाली कामकाजी नारी आदि सब उनकी कविताओं में मौजूद है |

3.1.1 गृहस्थी के झंझट में नारी

परिवार के भीतर और बाहर स्त्री और पुरुष भिन्न-भिन्न काम करते रहते हैं| लेकिन परिवार के भीतर पुरुष की अपेक्षा स्त्री के ऊपर बहुत बड़ी

---

[1]कात्यायनी:- स्त्री परंपरा और आधुनिकता -पृ.149(सं.राजकिशोर)

ज़िम्मेदारियाँ हैं| परिवार में उसे पुत्री, बहन, पत्नी, माता आदि विभिन्न भूमिकाएँ निभानी पडती है| बच्चों को जन्म देना, उसका पालन-पोषण करना, पति और अन्य बंधु जनों की सेवा करना ,घर को साफ करना, भोजन तैयार करना आदि पितृसत्ता द्वारा निर्धारित उसके दायित्व है| इस श्रम विभाजन को उसकी जैविक संरचना से कोई संबन्ध नहीं है| केवल गर्भधारण की प्रक्रिया ही प्राकृतिक है | आशाराणी व्होरा का कहना है:- “उसकी भूमिका केवल गृह-कार्यों तक सीमित हो गई | गृह में भी माँ और गृहिणी के नाते ही ,उसकी विशिष्ट भूमिका मानी गई| बच्चों का प्रसव और पालन पोषण तोप्रकृति से ही स्त्रीत्व से संबद्ध है | गृह-कार्य का निर्वाह उसके जिम्मे सामाजिक व्यवस्था की देन है | लेकिन मध्यकाल से लेकर अभी हाल तक स्त्रियों की यही भूमिका मान्य रही |वे चाहे खेतों में काम करें या कारखानों में अथवा सफेदपोश नौकरियों में, आज भी उनकी यह कार्यकारी भूमिका गौण है, माँ और गृहिणी की भूमिका प्राथमिक और अनिवार्य|”[1] यानी परिवार के भीतर के सारे का सारा काम स्त्री को खुद करना पड़ता है, बाहर स्त्री और पुरुष समान काम करने पर भी |

बचपन से लेकर मृत्यु तक के नारी का जीवन अपने मायके और ससुराल को सहेजते-सहेजते समाप्त होता है| घर की चारदीवारी के भीतर उसका ऐसा शोषण होता है जिसका वजन स्त्री तो अनुभव करती है, लेकिन धीरे-धीरे होने के

[1]आशाराणी ब्योरा :- नारी शोषण आईने और आयाम -पृ.19

कारण उसकी गंभीरता का एहसास नहीं महसूस करती है | नीलेश रघुवंशी की ‘हंड़ा‘ कविता इस तथ्य का पर्दाफाश करती हैं| शादी के दौरान युवती द्वारा लाए हंडा में उसका पूरा जीवन समाहित है | लाते वक्त उसमें कोमल सुन्दर सपने थे, लेकिन धीरे-धीरे उन सपनों की जगह घर के सामान स्थान ग्रहण करते है| इस प्रकार उसके मन से सपने, अरमान आदि गायब होकर घर का भार स्थान पाता है और उसका जीवन भी उस पुराने हंडे के समान हो जाता है | स्त्री का जीवन परिवार के भीतर, घर के चारदीवारी के भीतर, परिवारवालों केबीच लुढ़कता रहता है |

“हंड़ा है, आज भी जीवित है उसमें
ससुराल और मायके का जीवन
बची है उसमें अभी
जीवन की गन्ध
बची है स्त्री की पुकार
दर्ज है उसमें
किस तरह सहेजती रही वह घर|
टूटे न कोई
बिखरे न कोई
बचे रह सकें मासूम सपने
इसी उधेडबुन में
सारे घर में

लुढ़कता फिरता है हंडा “[1]

यहाँ शादीशुदा स्त्री के जीवन यथार्थ को एक फैंटसी में कवयित्री पेश करती है | विनय विश्वास का कहना है “ हंडे का घर भर में लुढ़कता फिरना स्त्री जीवन का शोकगीत है ”[2] परिवार केलिए, घरवालों केलिए समर्पितनारी जीवन यहाँरेखांकित है|

अनामिका की ‘स्त्री’ परिवार के झंझट में फॅस गयी नारी की सृजनात्मक शक्ति का परिचय करनेवाली कविता है | अनामिका ने नारी की तुलना विराट पृथ्वी से करके दूसरों केलिए अपने जीवन समर्पित करनेवाली औरत का चित्रण किया है | वह औरत रात के अंधेरे में सारे शहर चुप होने के बाद, चौके के बर्तन धुल चुकने के बाद भी खुद को ही सानती रहती है | सारा ताप झेलती पृथ्वी के समान अपने वजूद कीआग को सहती हुई, वह परिवार केलिए स्वयं को माँडकर सानती है | फिर भी वह पृथ्वी-सी खुश हैं:-

“सारा शहर चुप है
धुल चुके हैं सारे चौकों के बर्तन
बुझ चुकी है आखिरी चूल्हे की राख भी
और वह अपने ही वजूद की ऑच के आगे
औचक हडबडी में

---

[1]नीलेश रघुवंशी :- घर निकासी :-पृ.37
[2]विनय विश्वास :- आज की कविता :- पृ.158

खुद को ही सानती
खुद को ही गूँधती हुई बार-बार
खुश है कि रोटी बेलती है जैसे पृथ्वी“[1]

यहाँ कवयित्री नारी जीवन के कारुणिक यथार्थ को रेखांकित करती है |

नारी की अदम्य शक्ति का परिचय करानेवाली यह कविता उसके घरेलू जीवन की असलियत का पर्दाफाश भी करती है | परमानन्द श्रीवास्तव के शब्दों में “ इसी ‘औचक हड़बडी’ में फँसा है स्त्रीका सब कुछ- देह ,मन, घर, प्रसव,सारा दु:ख, सारा संघर्ष, सारा खटराग, अन्तर्जीवन और अन्त: सत्व | अनामिका की कविता इस ठोस वास्तविक दुनिया में स्त्री के अनन्त दु:खों की एक असमाप्त कथा है |”[2]

अनामिका की ‘दरवाज़ा’ कविता भी सदियों से खुद को पीड़ा देनेवालों केलिए जी रही नारी का चित्रण करती है |अलसुबह से रात देर तक लगातार वह अपनी गृहस्थी के बखेडों में फँसी रहती है| जितना उसका शोषण होता रहता है, उतना वह उसकी सेवा करती रही है |

“मैं एक दरवाज़ा था
मुझे जितना पीटा गया
मैं उतनी ही खुलती रही”[3]

---

[1]अनामिका :- बीजाक्षर -पृ.26
[2]परमानन्द श्रीवास्तव :- कविता का उत्तर जीवन -पृ.176
[3]अनामिका :- अनुष्टुप :-पृ.46

परिवार में नारी के ऊपर बहुत बड़ी ज़िम्मेदारियाँ हैं| अपने कर्तव्यों का पालन करके वह एक गठरी में तब्दील हो जाती है, जिसे परिवार के हर सदस्य अपनीअपनी इच्छा के अनुसार खोलकर चुन लेते हैं| गायत्री महेश्वरी की “औरत” कविता में इसका चित्रण है |

“औरत सबन्धों दर सबन्धों
के भार में दब कर
विभिन्न कोष्ठकों में जीती हुई
एक दूसरे में संक्रमण करती हुई
पीठ पर लादे हुए
अपने कद से बड़ी
कर्तव्यों की गठरी
स्वयं एक गठरी में तब्दील हो जाती है
जिसे बाँधकर जब जी चाहे
खूँटी पर लटका दिया जाता है
और जरूरत पड़ने पर हर सदस्य खोलकर बीन लेता है
अपनी अपनी सुविधा”[1]

स्त्री की अपनी जिन्दगी नहीं, अपनी अस्मिता नहीं | वह इस समाज के अन्यों केलिए जीने को मज़बूर होती है | उसका दिशा-निर्देश पुरुष द्वारा होता है|

---

[1]गायत्री महेश्वरी :- आजकल मई 1991 -पृ.21

3.1.2 कामकाजी नारी की स्थिति

आजकल की नारी शिक्षा के कारण अपनी स्थिति के बारे में जागरूक हो गई है|| वह कामकाजी होकर अपने पैरों पर खडी होने लगी है| आज वह परिवार के आर्थिक स्थिति को मजबूत बनाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान देने लगी है | किन्तु पितृसत्तात्मक समाज में उसे अपेक्षित सम्मान नहीं मिलता है| अत: वह आर्थिक रूप से भी स्वतंत्र जीवन नहीं जी पाती | सुभाष सोतिया का कहना है :- "आधुनिक औरतों ने अर्थोपार्जन करने में सक्षम हो जानेके कारण पुरुषों के समान आर्थिक क्षमता भले ही प्राप्त कर ली हो, परंतु उन्हें परिवार तथा समाज में उसके अनुरूप सम्मान आज भी नहीं मिला है| उन्हें व्यावसायिक ज़िम्मेदारियों के साथ-साथ घर-गृहस्थी का दायित्व पहले की तरह ही निभाना पड़ता है| पत्नी की शिक्षा, योग्यता और आर्थिक क्षमता कैसी भी हो, अब भी पति ही घर-परिवार का स्वामी माना जाता है और स्त्री को गौण तथा अधीनस्थ का दर्जा दिया जाता है|"[1]इस स्थिति में परिवर्तन अनिवार्य है|

आजकल के पुरुष अपनीपत्नी को पढ़ी लिखी देखना चाहता है, पर घर में सहनशील, पति परायण पत्नी के रूप में देखना चाहता है| वह केवल घर की आय बढ़ाने के उद्देश्य से ही उसे नौकरी करने देता है| कात्यायनी के शब्दों में "पति उसे शिक्षित और आधुनिक देखना-दिखाना चाहता है,अपनी मित्र मण्डली को प्रभावित करना और जलाना चाहता है,पर यह नहीं चाहता कि, वह उसकी

---

[1]सुभाष सोतिया :- स्त्री अस्मिता के प्रश्न -पृ.13

इच्छाओं की सीमारेखा लांघकर पुरुष से (या यहाँ तक कि स्त्री से भी) स्वतंत्र संबन्ध बनाये|वह यह तो चाहता है कि ,घर का बोझ हल्का करने केलिए पत्नी कमाये, पर यह नहीं चाहता हैं कि ,वह अपने दफ्तर या कारखाने में स्वतंत्र रिश्ते बनाये| यंत्र मानव की तरह वह बस पैसे कमाये और आज्ञाकारी सुशीला पत्नी की तरह समय से घर आ जाये|"[1] याने स्त्री के ऊपर से पुरुषकी छाया हटती नहीं, जिसे हटाना स्त्री चाहती है|

आज की नारी परिवार और कामकाज में संतुलन स्थापित करने की कोशिश कर रही है| उसकी हालत दो नावों पर पैर रखे व्यक्ति जैसी है| दोहरी ज़िम्मेदारियाँ उठाती नारी का चित्रण करती है रंजना की 'चीख पड़ूँ में'

"सबको विदा कर
खुद होती हूँ तैयार
और भागती हुई सी
पहुँचती हूँ दफ्तर
तो चीखता है बॉस
मिसेज क..........आज फिर लेट
पर जोहन में घूमता है घर
पूरे दिन करती हूँ काम
ताला ठीक से बंद हुआ था या नहीं
दूध-फ्रिज में रख दिया था न..........."[2]

---

[1]कात्यायनी -दुर्ग द्वार पर दस्तक -पृ43-44
[2]रंजना - स्त्री : मुक्ति का सपना (सं कमला प्रसाद)- पृ 167

कामकाजी युवती अपने परिवार और बच्चों को लेकर सदा चिंतित है | अपने परिवार और इच्छाओं के आगे वह अपनी निजी छोटी-छोटी इच्छाओं को दबाकर रखती है | इस तरह की कामकाजी नारी का चित्रण नीलेशजी ‘अपडाउनर्स’ कविता में यों करती हैं-

“भीतर ही भीतर कसमसाती है उनकी बेबस इच्छाएँ
सूर्य की तरह पीछा करती है बच्चों की अधजगी मुस्कान
पहुँचते हैं जब कभी वे देर से घर
पूरा घर कोसता है साथ उनके ट्रेन को
ट्रेन की खडखड और प्रतीक्षा
प्लेटफॉर्म की रोशनी में
छिपा है उनके घर का अँधियारा |”[1]

आर्थिक सुरक्षा केलिए अपनी सारी इच्छाओं को दबाकर काम करनेवाली नारी के मन में सदा अपने परिवार एवं बच्चों की चिन्ता है |

नीलेश रघुवंशी की कविता ‘एक आशंका के साथ’ भी अपने परिवार केलिए सुबह से शाम तक काम करती गर्भवतीयुवती का चित्रण करती है| अन्य गर्भवतियों की तरह अपने घर में सेब-फल-मेवा खाते बैठे बिना, अपने परिवार की आर्थिक सुरक्षा केलिए वह काम पर जाती है:-

[1]नीलेश रघुवंशी :-घर निकसी -पृ.53

"चाहती है वह भी और औरतों की तरह
सेब फल और मेवा खाते रहना
इच्छा है उसकी भी
बुनते हुए स्वेटर बुनती रहे कुछेक सपने
घुलाये जाती है उसे
जन्म देने की चिन्ता
वक्त समीप है
किसी भी क्षण आ सकता है
एक नन्हा मेहमान"[1]

यहाँ अपनी शारीरिक थकावटों एवं मांगों को अनदेखा करनेवाली स्त्री का चित्र है, जो दर्शकों के मन में करुणा अवश्य जगाता होगा|

3.1.3 वेतनहीन नौकरानी

पितृसत्तात्मक व्यवस्था सदा नारी को अपने अधीन में रखना चाहती है|व्यवस्था नारी पर कई तरह के दायित्व सौंपती है| सुधा सिंह का कहना है "घर में यदि नौकर-नौकरानी काम करें तो वह सेवा क्षेत्र में आता है, लेकिन गृहणी करें तो यह उसका दायित्व है, जिसकेलिए उसे कोई पैसा या सम्मान नहीं मिलता|पति के आनंद के क्षण को सृजित करना, बच्चों को स्वस्थ सुन्दर तरीके से पालना, घर की तमाम ज़िम्मेदारियाँ संभालना और नाते रिश्तेदारियाँ निभाना-ये सब गृहणी के दायित्व में शामिल हैं"[2] याने परिवार एवं समाज में स्त्री और पुरुष दोनों के लिए समान न्याय व्यवस्था नहीं है|

---

[1]नीमेश रघुवंशी:- घर निकासी -पृ.68
[2]सुधा सिंह :- ज्ञान का स्त्रीवादी पाठ -पृ.56

कमलकुमार की 'पत्नी' कविता घर में नारी की बदहालत का चित्रण करती है| दुधारू गाय के समान उसका जीवन भी सदा दूसरों केलिए समर्पित है |

"तुम कारपाट की तरह
बिछी रहो
परदे की तरह
लटकी रहो
शैडलियर सी
उजागर रहो
फ्रेम में जडी अनुकृति (किसी बड़े कलाकार की)
बढ़ाती रहो ड्राइंग रूम की शोभा
तुम कितनी सुशील हो
धर्मपरायण हो
मेरी पत्नी हो दुधारू गाय हो|"[1]

अपने आग्रह को समझकर उसकी पूर्ति में जीवन बितानेवाली स्त्री को ही पुरुष चाहता है|

घर गृहस्थी के चक्कर में फंसी नारी की हालत एक ऐसी मनपसंद सुशील नौकरानी जैसी है जिसकी न कोई छुट्टी है, न कोई वेतन | वह पूरे जीवन में बेटी, बहन, प्रेमिका, पत्नी, माँ जैसे विभिन्न रूपों में दिखाई पड़ती हैं और सुबह से रात तक काम में लीन रहती है| बिना किसी शिकायत के , इसका चित्रण करती है संज्ञा सिंह 'एक ही जन्म में'|

[1]कमल कुमार :-गवाह :-पृ.52

"बेटी बहन प्रेमिका पत्नी हर रूप में
हर रूप में
एक मनपसन्द नौकरानी
बिना तनख्वाह की
बिना सुबहवाली एक रात
जिसे काटते हुए
मरना पड़ता है सौ सौ बार
एक ही जन्म में|"[1]

यहाँ नारी की तुलना बिना तनख्वाहवाली नौकरानीसे करती है| घर के सारे काम करनेवाली नारी के संबन्ध में विनय विश्वास का कहना है "अधिकांश स्त्रियाँ घर का कामकाज करती नहीं, निपटाती हैं| घर में रहने की कीमत चुकाती हो जैसे लगातार | स्वस्थ रहते जीवन में छुट्टी का एक भी दिन नहीं | वे कामकाज निपटाती हैं, निपटाती ही रहती है| कभी किस्तों में, कभी एकमुश्त"[2] पूरे जीवन में नारी की यही हालत है|

3.1.4 यांत्रिक संबंधों में दम घुटती नारी

स्त्री और पुरुष का शारीरिक आकर्षण और सेक्स एक जन्मजात प्रवृत्ति है| सेक्स को मान्यता विवाह देता है | क्योंकि सामाजिक नियमों और मर्यादाओं में विवाहोपरांत ही सेक्स संबन्ध को मान्यता प्राप्त होती है, पर आजकल वास्तविक

---

[1]संज्ञा सिंह :- साक्षात्कार सितंबर 1992 पृ.67
[2]विनय विश्वास:- आज की कविता -पृ.156

स्त्री-पुरुष संबंधों की यांत्रिकता गौर करने की बात है|कात्यायनी की राय में " पुरानी रागात्मकता समाप्त हो रही है और पति-पत्नी रिश्तों तक में बेगानापन घुल चुका है| पति-पत्नी के बीच के यौन संबन्ध भी अस्सी फीसदी मात्र में वैधिक वेश्यागमन और सामाजिक मान्यता प्राप्त बलात्कार ही है"[1] नारी को अन्य कामों के समान सेक्स भी कभी यांत्रिक लगता है|

कभी-कभी नारी केलिए घरेलू थकावट इतना अधिक होता है कि प्रेम और संभोग भी उसके लिए अनचाहे हो जाते हैं|यौन संबंधा में तन और मन का सामंजस्य अनिवार्य है| इससे वंचित नारी सेक्स का सही आस्वादन नहीं कर पाती |अर्चना वर्मा की कविता 'दिनचर्या' इस सन्दर्भ में गौर करनेलायक है| इसमें अपने सुहाग के अभिमान को भर आने केलिए अपने पारिवारिक जीवन को विघटन से बचाने केलिए, कर्तव्य और प्यार का ठप्पा लगाकर अपने थके देह को पति के सामने समर्पित करनेवाली नारी का चित्रण करती है:-

"आज भी उसने
थकी हारी देह को
स्वागतमें सजाया
आज भी
इस दैनिक धिक्कार पर
कर्तव्य और अधिकार
और प्यार का
ठप्पा लगाया

[1]कात्यायनी:- दुर्ग द्वार पर दस्तक : पृ 44

फिर एक बार बचाया
भूकंप से अपना संसार
आज भी उसने नहीं पूछा
आखिर कहाँ है अंत
और सुहाग के अभिमान से
भर आई|"[1]

यदि पति-पत्नी के यौन संबंधों में कोई रागात्मकता नहीं होती है तो वह केवल यांत्रिक बन जाती है |कविताइस तथ्य का पर्दाफाश करती है |

3.1.5 बनाई गई स्त्री

पारिवारिक माहौल में बच्चों के पालन पोषण की प्रक्रिया ऐसी है, जो लिंगों के बीच कुछ विशेष भिन्नताओं को स्थापित और पुष्ट करती है | अर्थात् बचपन से ही लड़कों और लडकियों को जेंडर भेद के अनुरूप व्यवहार करना, कपडे पहनना, खेलना आदि सिखाये जाते हैं| यह प्रशिक्षण निरंतर होता है और यह बहुत सूक्ष्म होता है| इस प्रकार बच्चों को विशेष जेंडर के अनुरूप सांचे में ढ़ालने का प्रयास परिवार द्वारा होता है|तसलीमा नसरिन की राय में " मुख्य रूप से पारिवारिक जीवन का अभ्यास कराने केलिए अभिभावक लड़कियों केलिए गुडिया और खेलने के बर्तन आदि खरीद देते है, और लड़कों केलिए खरीद कर लाते है वैसे खिलौने जो चावी भरते ही तेज़ी से दौड़ने लगते है|"[2] औरत का निर्माण बचपन से ही समाज के द्वारा किया जाता है |

---

[1] अर्चना वर्मा :- लौटा है विजेता -पृ.15-16

[2]तसलीमा नसरिंब:- नष्ट लड़की नष्ट गद्य -पृ.65

लड़की को, परिवार यह उपदेश देता रहता है कि उसे अपने भाई से प्रतियोगिता नहीं करनी चाहिए,उसका ध्यान करना चाहिए | उससे कभी भी समानता की अपेक्षा नहीं रखनी चाहिए, अपने कम सुविधाओं में संतुष्ट रहना चाहिए |कभी भी शिकायत नहीं करनी चाहिए | जन्म से लेकर लडकी पर हो रहे अन्याय के बारे में आशाराणी व्होरा का कहना है कि “ जिस क्षण से भारतीय लड़की धरती पर सांस लेती है,उसकी भविष्य ज़िंदगी का स्वरूप निश्चित होने लगता है |‘हाय लड़की आ गई’ की तर्ज पर शोक सभा प्रारंभ हो जाती है| आगंतुक बधाई देने और खुशी मनाने के बजाय कन्या शिशु के माता-पिता से सहानुभूति जताने लगते हैं | लड़की के मनोविज्ञान की नींव यहीं से पडती है | आगे उसके लालन पोषण में भी कदम पर कदम उसे यह अहसास कराया जाता है कि वह लड़की है, इसलिए अपने भाई (लड़के) से कुछ नीचे दर्जे पर है, हीन है|”[1]पालन पोषण में होनेवाले भेदभाव ही लड़की के मन में हीनताबोध की उत्पत्ति का कारण बन जाते हैं| यह हीनताबोध भविष्य में भी उसका पीछा करता है|इसलिए सीमोन द बाउवर का कहना ठीक लगता है कि औरत को औरत होना सिखाया जाता है |

---

[1]आशाराणी व्होरा :- नारी शोषण :आइने और आयाम -पृ.24

लड़कियों द्वारा विचारों की अभिव्यक्ति पितृसत्तात्मक समाज को हमेशा अखरती है | उनके अनुसार लडकियों को मौलिक आविष्कार नहीं करना चाहिए| उन्हें व्यवस्था द्वाराबनायी गयी कामकाज जैसे घर को संभालना, स्वेटर बुनना आदि करना चाहिए नीलेश रघुवंशी की 'कविता लिखनेवाली लड़की' इस तथ्य का उद्घाटन करती है:-

" जब कभी कविता लिखती है लड़की
कहा जाता है सीखो मशीन चलाना
सिलो कपडे बुनो स्वेटर
मत बुनो शब्द मत बनो कवि
यह सब फिज़ूलखर्ची है वक्त की|
रहो लड़कियों की तरह
मत घूमो सड़कों पर मत लो बहसों में हिस्सा
सीखो पहले घर के सारा काम काज
और इन सबसे बच जाये समय
तो कर लेना कविता-वविता भी|"[1]

पितृसत्तात्मक व्यवस्था सदा समाज में अपना वर्चस्व कायम रखना चाहता है |प्रस्तुत कविता इस न्याय व्यवस्था के उल्लंघन की ज़रूरत पर भी बल देती है |

[1]नीलेश रघुवंशी :- घर निकासी :- पृ.24

व्यवस्था तथा परंपरागत मान्यतायें सदा नारी के मार्ग में रुकावट पैदा करती हैं| नीलेश रघुवंशी की 'सत्रह साल की लड़की'कविता भी लड़की के निर्माण करती इस व्यवस्था की ओर इशारा करती है| नीलेश जी बताती हैं कि व्यवस्था बचपन से ही नारी को यह प्रशिक्षण देती है कि लड़की का सुख घर की चारदीवारी के भीतर है |लड़की के मन में यह विचार डाल देती है कि उसका जीवन अठारह होने और घर बसाने केलिए मात्र है| बनाई गई लड़की अठारह का सपना मात्र देख सकती है |

चंपा वैद की कविता 'क्योंकि तुम लड़की हो' भी लड़का- लड़की भेदभाव की ओर इशारा करती है| जिस प्रकार परिवार लड़का और लड़की को अलग-अलग साँचे में ढाल देता है, उसका वर्णन नीलेश जी की भांति चंपा जी भी करती है|

"तुम थक जाती हो
घर का काम करते
चौका बरतन कपड़े से निपट
तुम खेलना चाहती हो
अमीर लड़कियों के साथ
अपने से आधे वजने के भाई को उठाये
उसे चुप कराती हो
माँ जब केला देती है
पहले भाई को फिर तुमको थोडा-सा

तुम कुछ नहीं बोलती

क्योंकि तुम लड़की हो

पीठ पर चढ़ा एक हाथी |”[1]

परिवार ही वह जगह है जहाँ लिंग- भेद का पाठ या लड़का- लड़की भेदभाव का प्रशिक्षण होता है| सावित्री डागा की कविता ‘औरत की आत्मकथा’ इसकी ओर इशारा करती है| लड़की का जन्म सबको दु:ख देता है, पर लड़के का जन्म सबको खुशी परिवार लड़के केलिए कलम देता है, पर लड़की केलिए झाड़ू|

“ भाईके जन्म पर बजाई गई थाली

मेरे जनमते ही विधाता कोदी गई मन ही मन गाली

बचपनमें भाई के हाथ में थमाई गई

जीवन विधायिनी कलम

और मेरे हाथ में रास्ता बुहारने की झाड़ू|”[2]

परिवार में लड़की का स्थान कींकर जैसे है| शशि शर्मा की कविता ‘कींकर’ इसको दर्ज करती है| जिस प्रकार कींकर बिना पानी से, बिना छाया से बडी हो जाती है, उसी प्रकार बिना सहेजकर भी लड़की बडी हो जाती है

[1]चंपा वैद :- स्वप्न में घर -पृ.11

[2]सावित्री डागा :- मधुमती जून1992   पृ.99

" तुम तो कींकर हो
पानी दो न दो
छाया दो न दो
अतृप्त इच्छओं सी
बढ़ती हो जाओगी
औसारे में दूध उबालती
दादी ने कहा था
और वह
हाथ में छाछ का गिलास लिए टुकुर टुकुर
दूध पीते भय्या को देखती रही|"[1]

इसी तरह नारी हमेशा उपेक्षित है और बिना किसी के सहारे स्वंय आगे बढ़ती है | नारी जीवन का वास्तविक दस्तावेज़ यहाँ प्रस्तुत है |

3.2 स्त्री मात्र एक देह

यौन शोषण और यौन उत्पीडन समाज का घृणास्पद अपराध है| यह अपराध पुराने समाज से लेकर समाज में कायम है| पर आजकल इसका स्वरूप बदला है| कात्यायनी के शब्दों में " नारी के शोषण के रूप बदलने के ही साथयौन शोषण व यौन उत्पीडन का स्वरूप भी बदलता रहा है| सामंती समाज में वह विलासिता और उपभोग की सामग्री मात्र थी| आज वह इसके साथही 'कमोडिटी'

---

[1]शाशि शर्मा:- मौसम से कह दो :-पृ.14

और निकृष्टतम कोटि की उजरती गुलाम भी बना दी गयी है”[1] अश्लील शाब्दिक अभिव्यक्ति, अश्लील चित्र दिखाना, असभ्य व्यवहार, शारीरिक संपर्क, भोग की माँग, आदि को यौन उत्पीड़न का उपक्रम कहा गया है | यौन उत्पीडन से पीडित अधिकांश स्त्रियाँ, बिना विद्रोह करके चुपचाप सहकर समाज में जीने केलिए विवश हो जाती हैं| क्योंकि विवाद का विषय बनने पर उसे परिवार एवं समाजसे भी उपेक्षा का साक्षात्कार करना पड़ता है| उसे नौकरी से हाथ धोना तथा घोर मानसिक यातना से जूझना पड़ती है| केरल में कुछ साल पहले बस में हुए यौन उत्पीड़न से पी ई उषा नामक स्त्री ने विद्रोह किया था | इसके फलस्वरूप उसे परिवार एवं नौकरी दोनों नष्ट हो गये | पितृसत्तात्मक समाज सदा नारी को दबाता रहता है, इसका निदर्शन है उषा की हालत |

बलात्कार स्त्री पर होने वाला जघन्य अपराध है | बलात्कार के मुख्य आधार के रूप में स्त्री की विशिष्ट शारीरिक संरचना को ही मानता है | अर्थात् पुरुष को स्त्री के सक्रिय न होने पर भी उसके शरीर से भोग संभव है| अत: पुरुष असहमत तथा संघर्षशील स्त्री से भी ज़बरदस्ती से भोग कर सकता है | स्त्री की असहायता एवं विवशता के कारण बलात्कार की संख्या आज बढ़ रही है |पुरुष द्वारा स्त्रीको काम वासना की पूर्ति के साधन मानने तथा औरत की इच्छा को निरर्थक समझने की परंपरागत दृष्टि हमारे समाज में अब भी बरकरार है|

---

[1]कात्यायनी:- दुर्ग द्वार पर दस्तक -पृ.36

आजकल बलात्कार ने विकराल रूप ले लिया है | दो साल की बच्ची से लेकर अस्सी साल की बूढ़ी तक आज बलात्कार की शिकार हो रही है | पिता, भाई, पडोसी ,मामा, नाना, दादा, शिक्षक, डाक्टर, वकील आदि समाज के सभी स्तरों के लोग आज बलात्कारी की सूचि में आते हैं | हर दिन मीडिया में आनेवाले बलात्कार संबंधी समाचार सुनकर बेटीवाले माँ-बाप तनाव- भरी ज़िन्दगी जी रहे हैं | इसी कारण से वे, बेटी से ज़्यादा अपने को बेटा पैदा होने की कामना करते हैं| फलस्वरूप भ्रूण हत्याएँ व्यापक हो रही हैं|

आजकल बलात्कार करनेवालों में ग्यारह बारह साल के किशोर बालक भी है | इसका मुख्य कारण आधुनिक जीवन सन्दर्भ है | अरविन्द जैन का कहना है " सिनेमा से समाचारों तक में स्त्री के सेक्सीकरण से किशोरों में सेक्स के प्रति आकर्षण भी बढ़ रहा है और अपराधिक प्रवृत्तियाँ भी| चालीस प्रतिशत किशोर अपराधी यौन अपराधों के दोषी है|"[1]यौन हिंसा व्यापक होने में मोबइल फोण, इंटरनेट, टेलिविज़न, अश्लील साहित्य, अश्लील पत्रिकाएँ आदि की मुख्य भूमिका है | समाज में इन सबकी बढोत्तरी के अनुरूप यौन हिंसा में भी बढ़ोत्तरी हुई है |

आजकल पोनोग्राफी का प्रचार प्रसार औरतों के प्रति यौन हिंसा बढ़ाता है| पोनोग्राफी एक ऐसा विमर्श है जो हमारी कामुक इच्छाओं को जगाता है|

---

[1]अरविन्द जैन :- स्त्री: मुक्ति का सपना

सामान्य सभ्य व्यवहार में वर्जित कल्पनाओं, दृश्यों और भाषा के प्रयोग इसमें किया जाता है |आजकल इंटरनट और मोबइलफोण के ज़रिए पोनोग्राफी का व्यापक प्रचार हो रहा है | इससे पुरुषों पर यौन उत्तेजना पैदा होती है | शराब और अन्य नशीले पदार्थों का व्यापक उपयोग भी यौन इच्छओं को बढावा देता है |

जब एक नारी यौन शोषण का शिकार हो जाती है, उसका प्रभाव उसके पूरे जीवन पर होता है| समाज के किसी कोने से भी उसे सहानुभूति नहीं मिलती, बल्कि अपराधी के रूप में उसे देखी जाती है | उत्पीडित नारी के प्रति समाज संवेदनहीन दृष्टिकोण ही रखता है| अपना शेष जीवन मानसिक वेदना, भय, असुरक्षा, और अविश्वास के बीच उसे बिताना पड़ता है| केरल में हाल ही में हुए परवूर उत्पीड़न का मुकदमा' की शिकार 14 साल की लड़की ने मुख्यमंत्री को जो पत्र भेजा था, उसकी कुछ पक्तियाँ इस प्रकार है " दो वर्षों में अभियुक्तों से अनुभव किये मानसिक पीड़ा से अधिक पीड़ामैं मुकदमे के दौरान महसूस करती हूँ|अभियुक्तों के वकील मुझसे क्या-क्या पूछते है? मैं ही यहाँ कैद होती जाती हूँ, मुझे नाश किये लोग कोर्ट से ज़मानत लेकर आराम से जीते हैं|"[1] ये लडकी समाज की अन्य लडकियों की प्रतिनिधि भी है |

---

[1]सुचित्रा प्रियादर्शिनी :- मातृभूमि 2014 जुलाई 30

3.2.1 बलात्कार रूपी अत्याचार

नारी जीवन पर बलात्कार का आघात बहुत बड़ा है| उसका प्रभाव नारी के पूरे जीवन में होता है| शारीरिक एवं मानसिक पीडा के साथ भय, असुरक्षा, आदि भी उसके जीवन में छा जाती है| अनिता वर्मा ने 'बलात्कार जिसके साथ हुआ' में बलात्कृत नारी का अत्यंत दयनीय चित्र खींचा है| बलात्कारी की साँसे उसे तूफान जैसे लगती है | शिकार स्त्रीके बुरे घृणित अनुभवों को कवयित्री यों शब्दबद्ध करती है:-

" वह हममें से एक थी
जिसकी सॉसे आती थी थम थम तूफान बन
एक भारी पहाड़ सीने पर चढ़ बैठता था
सन्नाटे में परत चीखें थी, क्योंकि घटना बीत चुकी थी
वह दिन से डरती थी रात की तरह
और रात जानवर सी रेंगती थी वहाँ रुधिर में
दीवारें दहशत बन टूटती थी
वह चुप थी जैसे ज्वालामुखी |"[1]

बलात्कार नारी जीवन को पूर्ण रूप से बरबाद करता है| विनय विश्वास का कहना है :- "बलात्कार स्त्री की गुलामी का शिकर है | वह उसपर अकेली होती है | इस एहसास के साथ कि वह खुद भी अपनी नहीं हो सकती | कोई भी उसके

[1]अनिता वर्मा :- साक्षात्कार - मार्च 1999 -पृ.37

साथ कुछ भी कर सकता है| वह कुछ नहीं कर सकती | उसे गुलाम बनाए रखनेवाला वातावरण उसके साथ अलग से बलात्कार करता है|"[1] स्त्री के लिए यह अंधेरे गुफे से अकेली यात्रा के समान नहीं, बलात्कार से उसे कभी भी मुक्ति नहीं मिलती है|

हमारे देश में हर साल हज़ारों बच्चियों, स्त्रियों और लड़कियों को अंगुवा किया जाता है | ज़्यादातर लड़कियाँ यौन शोषण की शिकार होती रहती है | नन्ही सिसकियों, खून और वीर्य से सने उनके चेहरे भीड में अपनी फैली आँखों से रिश्तों की तलाश करते हैं| ताकि उनकी रक्षा करनेवाले कोई उसके बीच में हो | इसी उम्मीद के साथ वीणा सिन्हा 'पाँच साल की उम्र में अंगवा हुई औरत' में इसका दर्ज करती है |

"लिगों की चट्टानों के बीच
मिलते हैं
दुधिया हंसी और
नन्हीं सिसकियों के
जीवश्म
फिर भी
खून और वीर्य से

---

[1] विनय विश्वास :- आजा की कविता :- पृ.143

सने चेहरों की

भीड में

रिश्तों की तलाश करती

जाती है

फैली ऑखों से

पाँच साल की उम्र में

अंगवा हुई औरतें |"[1]

गुडियों के साथ खेलनेवाली नन्ही बच्चियों के साथ बलात्कार के मामले लगातार बढ़ती रहती है | जब वह बलात्कृत हो जाती है, उसका प्रभाव उसके पूरे जीवन पर होता है | जिसप्रकार बलात्कृत नन्ही बच्ची अपनी माँ को तसल्ली देती है, अनामिका की कविता ' केरल की एक लोकधुन पर आधारित ' में

" मानो ना अम्मा, दी, बिल्कुल दी, ... जल्दी तो हार नहीं मानी

थोडा सा खून बहा, उसके छपाके से बॉबी के फूल रंग गए

ओ अम्मा,ओ अम्मा

मत रोओ लेकिन कि

एक छपाका खून ही तो था

वो फिर से बन जाएगा|"[2]

---

[1]वीणा सिन्हा :- साक्षात्कार जनवरी 1999 पृ.60

[2]अनामिका -कविता में औरत -पृ 101

3.2.2 परिवार की इज़्जत को बचाती लड़कियाँ

आजकल ग्यारह-बारह साल की लड़कियों के यौन शोषण में वृद्धि हुई है | पर अपने साथ होनेवाले अत्याचार के बारे में किसी से बोलने की हिम्मत तक उसमें नहीं | परिवार की भलाई तथा इज़्जत केलिए वह इन जघन्य अत्याचारों को सह लेती है | चंपा वैद की कविता 'ग्यारह साल की लड़की' में ऐसी एक लड़की का चित्रण करती है जो भय के कारण अपनी शारीरिक एवं मानसिक पीड़ा को सबसे छिपाकर रखती है

"लडके उसकेबालों को चूमते हैं
उसकी स्कर्ट खींच
उसे झूला झूलने को फुसलाते है
उसकी नंगी टांगो को पकड़ते है
लड़की आँखें दिखाती कदम तेज करती है
अपने फूट रहे उरेजों को दोनों हाथों से ढ़कती
माँ की डाँट से काँपती
अपने छोटे भाई के साथ सो जाती है |"[1]

लड़कियों को इस स्थिति से बचाने केलिए आजकल विद्यालयों में यौन शोषण की शिकार लड़कियों को 'काउनसिलिग' दिया जा रहा है | जिससे उसका मानसिक तनाव एवं हीनता ग्रंथी कम हो जाए |

---

[1]चंपा वैद :- स्वप्न में घर -पृ.10

3.2.3 देह व्यापार की यंत्रणा

देह व्यापार स्त्री अपनी मर्जी से नहीं विवश होकर करनेवाली प्रवृत्ति है | कानून की नज़र में स्त्री की इच्छा से होनेवाला शारीरिक संबंध बलात्कार नहीं है | गरीबी और असुरक्षा के कारण कभी-कभी स्त्री को अपनी देह बेचनी पडती है | स्त्री का देह व्यापार विश्व के सभी देशों में, सभी कालों में विभिन्न रूपों में दिखाई पडा है | भारतीय समाज में परंपरागत वेश्यावृत्ति का धंधा, आज कॉल गर्ल्स के रूप में सामने आया है | दक्षिण भारत में प्रचलित देवदासी प्रथा भी, धर्म के आड में रहे देह व्यापार है |भारतीय समाज में पहले तो देह व्यापार काफी चोरी छुपके होता था, पर आजकल ऐसा नहीं है | वेश्यावृत्ति के धंधे को पर्यटन उद्योग भी प्रोत्साहन दे रहा है | कुछ वर्षों से देह व्यापार को कानूनी मान्यता देने की मॉग उठाने लगी है | वेश्याओं का संगठन बनाने का प्रयास भी हो रहा है|

छोटी उम्र की लड़कियाँ भी आज देह व्यापार के चंगुल में फॅस रही हैं | अनामिका की कविता 'चौदह बरस की दो सेक्स वर्कर्स' कहती है :-

"अंकल, तुम भारी बहुत हो
अच्छा एक चॉकालेट खिला दो
अंकल, तुमहारे भी बेटी है?

अच्छा, बोलो उसका क्या नाम?

वह भी मेरे जैसी मज़ेदार है क्या, बोलते|"[1]

यहाँ एक ओर साधारण सा प्रश्न है तो दूसरी ओर उन 'अंकलों' का असली चेहरा उतारने वाला है |

3.3 धर्म नैतिकता और स्त्री स्वत्व

धर्म अध्यात्मिक शाक्ति पर अटूट विश्वास का नाम है | वह मनुष्य को पूर्णता एवं सन्मार्ग की ओर ले जाएगा ऐसा कहते है | आज वह संस्था बन गया है, या यों कहिए कि उसका संस्थाकीकरण हुआ है | संस्था बनने पर वह अधिकार केंद्र बन जाएगा | धर्म अपने अनुयायियों को डराके रखने का कार्य करता आ रहा है | इसलिए लोग धर्म भीरू हो गए है | धर्म भीरू लोगों का शोषण करना आसान है |यहाँ स्त्री ही अधिक धर्मभीरू हो गई है, जिसका शोषण धर्म कई मार्गों से करता आ रहा है |

अधिकाश धर्म और धार्मिक आचार स्त्री को हीनतर स्थिति में रखते है | वरेणा भारतीय समाज सदा अपने पति को परमेश्वर मानकरउनकी सेवा करने की शिक्षा लड़कियों कोबचपन से ही देती थीं आज उसका अनुकरणसमाज के अन्य तबके केलोग भी करने लगे है | पति की दीर्घायू केलिए विभिन्न व्रतों को पालन

---

[1]अनामिका :- कविता में औरत -पृ.125

की शिक्षा भी दी जाती थी |इस प्रकार पति की दासता करते रहने की शिक्षा अपने धर्म से ही स्त्री को मिलती थी | संतोष श्रीवास्तव का कहना है :- "आज विश्व में जितने भी धर्म हैं...... हिंदू, इस्लाम, कैथोलिक, जैन, बौद्ध, सूफी, यहूदी, सिक्ख आदि सभी के संस्थापक पुरुष है, स्त्री नहीं, न ही स्त्री, धर्म की संचालिका है| न वह पूजा-पाठ, कथा, हवन करानेवाली पंडित है, न मौलवी है पादरी | वह केवल पतिव्रता धर्म का पालन करने इस संसार में जन्मी है, इस धारणा के साथ कि ,जिस घर में जन्मी, वहाँ से उसकी डोली उडेगी और जिस घर में ब्याही वहाँ से अर्थी| डोली से अर्थी तक की इस यात्रा में स्त्री कई-कई बार मरी है पर उफ करने का अधिकार उसे नहीं है | पुरुष सदा नारीको अपनी झूठी धार्मिकता एवं संस्कारों का आवरण ओढ़कर वह नारी से श्रेष्ठ ही बना रहना चाहता है|"[1]धर्मके नाम पर स्त्रीके ऊपर सभी धर्म बहुत अधिक शोषण और अत्याचार करते रहते है |

दक्षिण भारत में धर्म का आश्रय लेते हुए नारी को देवदासी का रूप दिया गया था| नारी के यौवन को देवमूर्ति के सामने प्रस्तुत किया जाता था| देवता का प्रतिनिधि राजा और पूजारी भी उसका उपभोग करते थे | इसप्रकार धार्मिक दृष्टि से नारी को भ्रष्ट किया जाता था और धर्म की आड में व्यभिचार को प्रोत्साहन दिया जाता था |इसके संबंध में आशाराणी व्होरा का कहना है – " विदेशों में तो देवदासियाँ बहुत पहले से ही भोग विलास का साधन बन चुकी थी धर्मप्रधान

---

[1]संतोष श्रीवास्तव :- धर्म के आर-पार औरत (सं नीलम कुलश्रेष्ठ) -पृ-55

प्राचीन भारत की देव नर्तकी प्रथा में किसी अनैतिकता को प्रवेश नहीं मिल पाया था | लेकिन मध्यकाल में अन्य क्षेत्रों में आए सांस्कृतिक ह्रास के साथ ही यहाँ भी राजाओं, सामन्तों और पूजारियों ने मिलकर इस प्रथा में व्यभिचार का बीज बोया देवनर्तकियाँ देवदासियाँ बनीं और फिर 'देवदासी' शब्द 'वेश्या' का पर्याय बन गया |"[1] इसप्रकार धर्म की आड में व्यभिचार व्यापक हो गया |

परंपरागत मुस्लिम समाज में सार्वजनिक क्षेत्र में औरत की जिस्मानी उपस्थिति पर पाबंदी लगाने केलिए बुरका पहनने का नियम बनाया गया |

ईसाई धर्म में भी स्त्री को पथभ्रष्ट करनेवाली के रूप में चित्रित किया गया है | सृष्टि की कथा के अनुसार ईश्वर ने पहले आदम का सृजन किया, उसे आदम का अकेला रहना अच्छा नहीं लगा, उसकी एक पसली निकालकर उससे औरत बना दिया | आदम की पसली से बनने के कारण ईव को दोयम दर्जा ही प्राप्त हुआ | मतलब यह है कि सभी धर्म में स्त्रियों का शोषण एक वास्तविकता है|

3.3.1 धर्म के चक्कर में नारी

धर्म के नाम पर स्त्री के ऊपर जितना शोषण हो रहा है, उसके प्रति स्त्री आज भी पूर्णतया भिज्ञ नहीं है | समाज में अंधविश्वास जैसी विपत्तियाँ व्यापक होने के पीछे धर्म की भूमिका अत्यधिक है | अंधविश्वास के चक्कर में पडने के

---

[1]आशाराणी व्योरा - नारी शोषण आइने और आयाम :- पृ.40

कारण सही-गलत की पहचान स्त्री केलिए नामुमकिन हो गई | नीलेश रघुवंशी की कविता 'संतान सातें' इसकी ओर इशारा करती है | धार्मिक शोषण की शिकार माँ अपनी बेटियाँ भूख से तडपकर रहते वक्त भी सात पूडियाँ और सात पुए के साथ पेड का परिक्रमण करती है |

"माँ के थाल में सजी होगी |सात पूडियाँ और सात पुए
पूजा में बेखबर माँ नहीं जानती| उसकी दो बेटियाँ|
पराये शहर में भूखी होगी| सबसे छोटी और लाडली बेटी|
जिसके नाम की पूडी| इठला रही होगी माँ के थाल में|
पूडी खाने की इच्छा को दबा रही होती है|"[1]

पितृसत्तात्मक समाज में संस्कृति के बहाने, नैतिकता के बहाने, रूढियों का व्यापक प्रचार हो रहा है| अधिकतर रूप में नारी ही इसमें फस जाती है | क्योंकि पुरुष की अपेक्षा रस्मों-रिवाज़ों में उसकी आस्था अधिक होती है | नीलेश रघुवंशी की 'घर निकासी' इस सत्य का दर्ज करती है| एक बेटे की बारात की तैयारी एवं माँ की रस्म अदायगी का चित्रण यों किया गया है:-

"आई अंतिम रस्म
माँ के कोनों अंतरो छिपी

[1]नीलेश रघुवशी - घर निकासी -पृ.13

जानती जैसे अंतर की बात
पूजा माँ ने कुऑ
देखे बेटे की ओर
आई बेला घर निकासी की
रखा माँ ने पाँव
कुएँ की मुडेर पर
बेटे ने पकडा हाथ
किया वादा
मैं तेरा रहूँगा सदा
जा रहा हूँ जिसे लेने
करेगी तेरी आजीवन सेवा
हुई रस्म पूरी
निकली बारात
साथ माँ के कुएँ ने ली राहत की सास|"[1]

कात्यायनी ने अपनी 'गार्गी' कविता में छांदोग्योपनिषद के 'याज्ञवलक्य''गार्गी'प्रसंग द्वारा, जिस प्रकार प्रधान तार्किक याज्ञवलक्य ने गार्गी के सवालों को जवाब देने के बजाय उसे चुप कराने की कोशिश की थी, उसका वर्णन किया है | गार्गी ने उस समय स्त्रियों केलिए निर्धारित सीमाओं का उल्लघंन

[1]नीलेश रघुवंशी:- घर निकासी- पृ.26

किया था,याज्ञवलक्य के ज़रिए पितृसत्तात्मक व्यवस्था द्वारा स्त्री पर लगाये गये प्रतिबंधों की ओर इशारा किया गया है:-

" मत जाओ प्रश्नों की सीमा से आगे
तुम्हारे सिर काढकर लुढकेगा ज़मीन पर
मत करो याज्ञवलक्यों की अवमानना
मत उठाओ प्रश्न ब्रह्म सत्ता पर
वह पुरुष है |"[1]

कात्यायनी 'गर्गी' के द्वारा शोषण एवं उसके खिलाफ स्त्री के संघर्ष के लंबे इतिहास की ओर इशारा करती है|

सभी धर्म ईश्वरीय कार्य केलिए पुरुष का आश्रय लेते है, या पुरुष ईश्वरीय काम को अपने हाथ में रखता है| हिंदु, इस्लाम, ईसाई, बौद्ध सभी धर्मों में यही चल रहा है:- दाह संस्कार, पिडदान,श्राद्ध बरसी, आदि करने का अधिकार केवल पुरुष को है | सभी कर्मकाड में नारी उपेक्षित है| कमल कुमार की कविता "मेरा प्रणाम लो ,जाओ पिता " कविता इस धार्मिकभेदभाव का खुलाचित्रण करती है :

"बंधन खोलकर लिटाया गया था
चिता की सेज पर
फल-फूल अन्न जल और

[1]कात्यायनी- सात भाइयों की बीच चंपा :-पृ.32

हवन सामग्रीके साथ
घर के पुरुष रख रहे थे
एक एक लकडी अगल बगल
उन्होंने रोका था
नहीं तुम नहीं
लड़कियाँ नहीं करती यह सब
दुबारा हाथ उठा तो पण्डितों की बिरादरी थी
यह नहीं यह सब
बरजा था
होने दो सब धर्म कर्म विधिवत्
मत डालो बाधा
बाधा?”[1]

धार्मिक संस्थानोंमें भी नारी का प्रवेश निषिद्ध है|कई मंन्दिरों,और मसज़िदों में भी स्त्रियों को प्रवेश करने की अनुमति नहीं | मस्ताराम कपूर का कहना है “ पुरुष प्रधान समाज ने ईश्वर पर भी कब्जा कर रखा है | जो ईश्वर निर्गुण और निरुपाधी है, उसमें लिग-भेद कर उसे स्त्रियों की गुलामी को बरकरार रखने केलिए इस्तेमाल किया जा रहा है “[2]

[1]कमल कुमार :- कहती है औरतें -पृ.67(संपादन .अनामिका)
[2]मस्ताराम कपूर :-स्त्री परंपरा और आधुनिकता -पृ.29

3.4 वैश्वीकरण का चक्कर

वैश्वीकरण के फलस्वरूप हमारा देश बहुराष्ट्रीय कंपनियों के माल-सामान की बिक्री का बाज़ार बन गया है | बाज़ारीकरण का प्रभाव नारी, दलित, पर्यावरण, देहात संस्कृति, खेत सब पर समान रूप से पड़ा है| बाज़ारीकरण ने औरत की देह, उसके श्रम, उसके सौंदर्य का सर्वाधिक शोषण किया है|उसकी छवि को बाज़ार केलिए तैयार करके, मीडिया के ज़रिए उसको प्रचलित करके उसे बिकाऊ माल बनाने की कोशिश कर रहा है| स्त्री सौंदर्य को किसी उत्पाद की तरह इस्तेमाल करना बाज़ारीकरण की साजिश है| इसके लिए बाज़ार आकर्षक स्त्री बिंब की खोज करते रहते हैं| जर्मन ग्रियर का कहना है "हर सर्वेषण यही बताता है कि आकर्षक स्त्री का बिंब विज्ञापन कासबसे प्रभावी लटका है|"[1] विज्ञापनों में स्त्री शरीरका सबसे ज़्यादा इस्तेमाल होता है| विज्ञापन केलिए स्त्री मात्र वस्तु है उसकी कोई अलग पहचान नहीं है| उसकी देह के हर हिस्से-नाखून से लेकर बाल तक विज्ञापन में उत्पाद या बिकाऊ माल है | आज उसका व्यक्ति के बजाय वस्तुके रूप में इस्तेमाल हो रहा है| सुभाष सोतिया की राय में " स्त्री को व्यक्ति के बजाय 'वस्तु' मानकर चलने का दृष्टिकोण अभी कायम है| विज्ञापनों में स्त्री के शरीर को उत्पाद कीलोकप्रियता बढ़ाने के साधन के रूप में इस्तेमाल किया जाता है|इससे

---

[1]जर्मन ग्रियर :- विद्रोही स्त्री (अनु.मधु बी जोशी) :- पृ.13

औरत की गरिमा और सम्मान कोगहरी चोट पहुँचती है|"[1]यह समझे बिना आजकल की नारी विज्ञापन के मायालोक में फँस रही है |

विज्ञापनों में मॉडल गर्ल के शरीरांग से आकर्षित होकर ग्राहक उत्पाद की ओर आकृष्ट होते हैं न किउत्पाद के गुण से | मॉडलिग के बहाने उसके शरीर के हर अंग पर कैमरा फॉकस करता है| उपभोक्ता पर स्त्री का स्थान कामोत्पादक माल से परे नहीं होता है| उसके बाल, आँख, गाल, पैर, कमर आदि अंगों को बाँटकर ही मीडिया प्रस्तुत करता है| टूथपेस्ट, लिपस्टिक, शैंपू, नेलपोलिश, साबून, नापकिन, गहने, कपडे आदि के विज्ञापनों में नारी शरीर का उपयोग करने के साथ ही पुरुषों के शेविंग़ क्रीम, सिगरेट, शार्टिंग-सूटिग, जूता आदि के विज्ञापनों में नारी को अनावश्यक रूप से प्रस्तुत किया जाता है| इस प्रकार करके विज्ञापन जगतनारी को व्यक्तिके बजाय वस्तु बना रहा है|

आजकल टी वी चैनल, समाचार पत्र, इंटेरनेट और फिल्मों में स्त्री देह को बडे कामुक अदाज़ में प्रस्तुत किया जाता है| स्त्री देह को अर्धनग्न और पूर्ण नग्न रूप में मीडिया द्वारा प्रदर्शित किया रहा है| मीडिया स्त्री देह को सेक्स सिबल बना देता है| इसके बारे में मृदुला सिन्हा का कहना है " अब स्थिति यह हो गयी है कि, परिवार के साथ बैठकर टी वी देखा नहीं जा सकता| समाचार पत्र और पत्रिकाओं

---

[1]सुभाष सोतिया :-स्त्री अस्मिता का प्रश्न- पृ.13

को ड्रायिग रूमके सेंट्रल टेबल पर नहीं रखा जा सकता"[1] इन सब को देखना व पढ़ना सपरिवार मुश्किल हो रहा है|

विश्वसुंदरी प्रतियोगिताओं का आयोजन भी बाज़ार का ही कमाल है | मिस इंडिया, मिस वल्ड, मिस युनिवर्स जैसी सौंदर्य प्रतियोगिताएँ स्त्री के संपूर्ण दैहिक सौन्दर्य पर आधारित है| इन विश्वसुंदरियों को किसी भी कलात्मक या रचनात्मक काममें नहीं लगाया जाता, बल्कि उनका उपयोग मुख्यत: विज्ञापन केलिए ही होता है| इसके संबंध मेंराजकिशोर का कहना है:- "जिस उत्पाद को किसी विश्वसुन्दरी की लोभनीय छवि के साथ जोड दिया जाता है, वह स्वयं लोभनीय बन जाती है|"[2] यही विज्ञापन का रसायन शास्त्र है|

बाज़ारीकरण के ज़रिए पूँजी के साथ मिलकर पितृसत्ता ही नारी शरीर का इस्तेमाल करती रहती है|यह समझे बिना आजकल की नारी अपनी दैहिक सौंदर्य को दिखाने का प्रयास कर रही है| लीलाधर मंडलोई का कहना है "स्त्री को यह नहीं भूलना चाहिए कि मीडिया पर वर्चस्व पुरुषों और उसकी घोषित अघोषित सत्ता का है,और इस सत्ता के सूत्र पितृसत्तात्मक व्यवस्था में है| अत: इस षडयंत्र को समझे बिना स्त्री की सही मुक्ति संभव नहीं|"[3] कवि लीलाधर मडंलोई स्त्री को

---

[1]मृदुला सिंह :- मात्र देह नहीं है औरत -पृ.118-119

[2]राजकिशोर:- स्त्री परंपरा और आधुनिकता(सं राजकिशोर)- पृ-92

[3] लीलाधर मडलोई:- स्त्रीमुक्ति का सपना(संपादक प्रो. कमला प्रसाद) -पृ.29

और भी सचेत होने की ज़रूरत की ओर संकेत करते हैं, जिसके बिना विश्वपूँजी और पितृसत्ता के गठजोड को तोडना मुमकिन नहीं है|

3.4.1 उपभोक्तावादी संस्कृति का जाल

आजकल की नारी उपभोक्तवादी संस्कृति से अत्यधिक आकर्षित होकर उसके चंगुल में फंस गयी है| समाज मेंभूमडलीकरण का सबसे दुष्प्रभाव उस पर हो रहा है| नित नयी-नयी चीज़ों के प्रति वह आकर्षितहो रही है|फलस्वरूप वह अपने शरीर में अस्मिता ढूंढने लगती है| विज्ञापन उसके बाल, त्वचा, आँख जैसे नाखून से बाल तक शरीरके सभी अंगों को सुंदर बनाये रखने का उपदेश दे रहा है|इसका अंकन निर्मला गर्गअपनी ‘तू है कि रोए जा रही है’ कविता में करती है|

“ लड़की तेरे बाल मुलायम है
और मुलायम बना
लडकी तेरी त्वचा कोमल है
और कोमल बना
लडकी तू सुंदर है
और सुंदर दिख
नित नई चीज़ें बनायी जा रही है
तेरे लिए ही तो
यह दुनिया सजायी जा रही है|”[1]

---

[1]निर्मला गर्ग:- कबाडी की तराजू- पृ.79

विज्ञापन जगत स्त्री की छवि को मज़बूत बनाने के बहाने व्यापार को प्रोत्साहन दे रहा है, उपभोगको प्रोत्साहनदे रहा है| सुधीश पचौरी का कहना है: ”त्वचा और चेहरे की देखबाल, केश एवं नाखूनों की देखबाल आदि चिंता बताती है कि विज्ञापन शास्त्र ने मनुष्य की हमेशा जवान बने रहने की इच्छा को महा काव्यात्मक विस्तार दे दिया है”[1]पूँजी व विश्वबाज़ार विज्ञापन के बहाने स्त्री की इच्छाओं को भुनते आ रहे हैं |

आजकल भूमडलीकरण के चंगुल में फंस गयी नारी को यह अवबोध नहीं है कि विज्ञापन के द्वारा अपने शरीर का भी सार्वजनिक प्रदर्शन कर रही है| वह औरों कीपूछ में घमण्ड करती है, उसमें व्यक्तित्व ढूँढती है| उनके शरीरांग से आकर्षित होकर ही ग्राहक उत्पाद को पंसद करते हैं, और खरीदते हैं | उसका पूरा शरीर आज बाज़ारू माल है |विज्ञापन उसकी देह के हर एक कोण पर फोकस कर रहा है |इसका चित्रण करती है अनिता वर्मा अपनी ‘इस्तेमाल’ नामक कविता में |

“खरीदनी है अगर दवा तो देखो स्त्री को
दर्द से ज़्यादा असरदार है उसकी कमर
तेल से ज़्यादा सुंदर है केश कपडों से ज़्यादा देह
देखो चमकीली आँखें चिकनी त्वचा”[2]

विज्ञापन जगत ने अनेक लडकियों को मोडलिंग के बहाने अपने मायाजाल में फंस लिया है| सुभाष सोतिया का कहना है “ जरूरत इस बात की है कि महिलाएँ अपने खिलाफ रची जा रही व्यापारिक कंपनियों की इस साजिश को

---

[1]सुधीश पचौरी :- स्त्री परंपरा और आधुनिकता (सं. राजकिशोर)- पृ78
[2]अनिता वर्मा:- एक जन्म में सब -पृ.25

पहचाने और इस सौंदर्य जाल से अपने को बचाएँ|"[1] स्त्रियों को इसके प्रति सचेत करना आज के संदर्भ में ज़रुरी है|

3.4.2 बिकाऊ माल बनती स्त्री

अनावश्यक रूप से स्त्री के अंगों के प्रदर्शन के ज़रिए उपभोग वस्तु का प्रचार करना आम बात हो गया है| धीरे-धीरे स्त्री बिकाऊ माल हो रही है| इसके कारण के रूप में लीलाधर मडंलोई लिखते है: "किंतु यह सच है कि ,बाज़ार ने अपने आकर्षक प्रस्तावों और प्रविधियों से एक खास स्त्री वर्ग को अपने मायाजाल में फंस लिया है"[2]

चंद्रकला त्रिपाठी की 'वे औरतों' कविता मोडलिंग के चंगुल में फंस गई स्त्री का पर्दाफाश करती है| खाना,पीना, सोना छोडकर अपने शरीर को बडी संपत्ति मानकर वे देवलोक की अप्सराओं की तरह दूसरों को रिझाकर जीती रहती है :

" वे देह को उपभोक्ता माल की तरह चमकाती हुई
खाने, पीने और आराम से सोने की चर्बी से भयभीत
किसी भी कमज़ोर क्षण में
देह की स्वाभाविकताओं की और नहीं लौटती
देवता रक्षित अप्सराओं की तरह
इंद्रासनों के काम आती हुई वे जो भी करती है
वहीपुण्य है|"[3]

---

[1]सुभाष सोतिया:- स्त्री अस्मिता के प्रश्न- पृ.96
[2]लीलाधर मडलोई:- स्त्री मुक्ति का सपना:- पृ.28
[3]चन्द्रकला त्रिपाठी:- शायद किसी दिन -पृ.41

इस प्रकार वैश्वीकरण ने स्त्री के समकक्ष अवसर और चुनौती दोनोंप्रस्तुतकिया है| अवसरके ज़रिए स्त्री देह का जमकर दुरुपयोग हो रहा है| औरत के शरीर और उसकी छवि से मीडिया और विज्ञापनवाले कमाई कर रहे हैं |

3.5 पुरुष केंद्रित अर्थ व्यवस्था में स्त्री

आज जीवन के समस्त पहलुओं पर अर्थ का वर्चस्व दिखाई देता है| वर्तमान जीवन को वही परिचालित करता है|मनुष्य के समस्त व्यवहार अर्थ के साथ जुडे हुए है|उसका सुख-दुःख, सफलता-असफलता, आशा-निराशा के केंन्द्र में अर्थ का सान्निध्य है|मनुष्य की तीन मूलभूत आवश्यकताएँ अन्न, वस्त्र, आवास का भी आधार अर्थ है|

हमारी पारिवारिक व्यवस्था ऐसी है जिसमें चाहे या अनचाहे स्त्री आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र नहीं है | वह पुरुष की मुखापेक्षी रहने को बाध्य है|इसका मुख्य कारण है ,पूँजी पर पुरुष का अधिकार | जहाँ पूँजी होती है, वहाँ वर्चस्व कायम होता है|पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था में पुरुष को उत्तराधिकार के रूप में पूँजी मिलती रहती है| इसके ज़रिए पुरुष स्त्री की यौनिकता एवं श्रमशक्ति पर नियंत्रण प्राप्त करते हैं |घर के भीतर और बाहर स्त्रियों की उत्पादकता पर पुरुषों का नियंत्रण रहता है| अत: यह कहना समीचीन है कि, समाज में नारी के दोयम दर्जे की जो हैसियत है उसका मूल आधार अर्थ हैं |

3.5.1 आर्थिक संकट में जीनेवाली नारी

परिवार की आर्थिक विपन्नता की वजह से स्त्री ही सबसे अधिक पिसती जा रही है| यदि पुरुष शराबी भी है तो स्त्री पर दबाव बढ़ जाता है|सुनीता जैन 'बाबत उस औरत' में अपनी पति नशाखोर और बेरोज़गार होने के कारण गृहस्थी को संभालने केलिए संघर्षरत कामकाजी औरत का चित्रण करती है| वह औरत अपने परिवार चलाने और बच्चों के पालन पोषण केलिए अहोरात्र कठिन प्रयत्न करती है|

"सोचती हूँ उस औरत के बारे में
जो काम पर जाती है किसी दफ्तर
पालती है दो बडे हो रहे बच्चे
रोती है कभी आस पडोस में बैठकर|"[1]

आर्थिक अभाव भी स्त्रियों को काम करने केलिए विवश करता है| नीलेश रघुवंशी की 'ढ़ाबा' कविता आर्थिक अभाव के कारण रोटी सेंककर जीवन बितानेवाली लड़कियों का चित्रण करती है| ढ़ाबे पर रोटी सेंकती लड़कियों का जीवन उन रोटियों की महक और सब्जी की भाप से चलता है उनके चेहरे सदा ताप से तपते हैं| पानी से भरे बर्तनों के बोझ से पॉव और कंधे थकते हैं |पर दूसरों के पेट की आग बुझाता ढाबा उनकी कभी भूख नहीं बुझाती|

---

[1]सुनीता जैन :- गंगातट देखा -पृ.19

"ढाबे पर सिकती रोटियों की महक
और तपेले से उठती सब्जी की
भाप से चलाती थी हमारी साँसें
बने इसी भाप से बच्चों के खिलौने
तपते थे आग में हमारे चेहरे
थकते थे पाँव के साथ-साथ कंधे
पानी से भरे बर्तनों के बोझ से|"[1]

आर्थिक अस्थिरता परिवार को ध्वस्त करती है| इसलिए लड़कियाँ विपरीत परिस्थितियों में भी कारखानों ,कार्यालयों और कहीं भी काम करने को जाती है| उन्हें थकान या आगंतुक पर ध्यान देने कीफुरसत भी नहीं मिलती है|प्रकृति के परिवर्तन पर या अपने परिवेश पर भी वे ध्यान नहीं दे पाती है|गगन गिल की कविता 'दफ्तर में ऊघती है लड़कियाँ' इस सत्य का दर्ज करती है|

"सूरज चमकता है उनके दफ्तरों के बाहर
मौसम बदलते हैं
उनकी खिड़की से दूर
हवा नहीं छूती उन्हें कितने ही साल
पकता है बाल धूप के बिना ही
दफ्तरों में कैद लड़कियों के"[2]

---

[1]नीलेश रघुवंशी:- घर निकासी -पृ.100
[2]गगन गिल - एक दिन लौटेगी लड़की -पृ.25

श्रम और उसके वेतन पर ही उनका ध्यान है| उन्हें रुपया का मूल्य भी मालूम है|‘पिता की पीठ’नीलेश रघुवंशी की कविता है जिसकी माँ अशिक्षित है, पति के पसीने से तरबतर नोट का मूल्य वह भली-भाँति जानती है|

3.5.2 देह व्यापार केलिए मज़बूरी

समाज में स्त्री का अस्तित्व उसकी अपनी स्थिति पर निर्भर होता है| इसलिए वह आर्थिक स्ववंलबन केलिए प्रयास करती है | आर्थिक संकट उत्पन्न होने पर उसे विवश होकर देह व्यापार करना पड़ता है| कात्यायनी की कविता ‘सपना देखनेवाले की कविता’ इस तथ्य का पर्दाफाश करती है:-

> “कहीं शीत से कॉपती
> एक स्त्री
> प्लाटफॉर्म के नीम अंधेरेकोने में
> रुपये से भी तेज़ी से
> अपना भाव नीचे गिराती है|”[1]

बच्चों की भूख मिटाने केलिए दम तोडती नारी अपनी तबीयत की देखभाल न करके, तनख्वाह की प्रतीक्षा में काम करती है| गर्भवती होने पर भी वह काम करती है और वह अपनी परेशानियों को अनदेखा करती है,ऐसी एक युवती का चित्रण है नीलेश रघुवंशी की कविता ‘एक आशंका के साथ’ में | वह सुबह से शाम

---

[1]कात्यायनी :- इस पौरुषपूर्ण समय में :-पृ.21

तक फाइलों को लेकर चढ़ती उतरती है और बॉस की झिडकियों को भी सुनती है:-

“सुबह दस से शाम पाँच तक
फाइलों को लेकर चढ़ती-उतरती
बॉस की झिडकियों से गुज़रती
रहती है उदास
गिनती है दिन
तनख्वाह मिलने के|”[1]

आज की नारी अपने पाँव पर खडे होने केलिए प्रयत्न करती रहती है| इस तरह की स्त्रियों को भी पारिवार हों या कामकाजी क्षेत्र में कई शोषण का सामना करना पडता है |

3.6 निष्कर्ष

हमारी सामाजिक व्यवस्था में पुरुष का वर्चस्व ही कायम रहता है| सदियों से सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक, आर्थिक सभी क्षेत्रों में वह नारी का शोषण करता रहता है | परिवार में सबसे अधिक पुरुष का संप्रभुत्व दिखाई देता है | स्त्री बचपन से लेकर मृत्यु तक बेटी, बहन, पत्नी, माँ, दादी माँ आदि विभिन्न भूमिकाएँ निभाती रहती हैं |बेटा, भाई, पति,पिता, नाना आदि विभिन्न रूपों में पुरुष नारी पर अपना अधिकार जमाता है| नारी गृहस्थी के झंझट से मुक्त भी नहीं है|

[1]नीलेश रघुवंशी:- घर निकासी -पृ.68

परिवार की आर्थिक सहायता केलिए उसे बाहर भी काम करना पडता है| दोहरी ज़िम्मेदारियाँ उठानेवाली नारी का स्थान वेतनहीन नौकरानी या दुधारू गाय के समान होती है| अपने पारिवारिक जीवन को विघटन से बचाने केलिए उसे यांत्रिक संभोग भी करना पडता है| परिवार में विद्यमान लिंगभेद की मानसिकता ही स्त्री को समाज में दोयम दर्जे की ओर धकेल देती है|

यौन शोषण और यौन उत्पीडन पुरुष द्वारा स्त्री पर होनेवाला सबसे घृणास्पद अपराध है| शोषण की शिकार नारी को मृत्यु तक अपने परिवार एवं समाज में उपेक्षित जीवन जीना पडता है| आजकल बलात्कार का रूप इतना विकराल हो गया कि ,दो साल की बच्ची से लेकर अस्सी साल की बूढ़ी तक इसकी शिकार हो रही है| छोटी उम्र की लड़कियाँ भी आज देह व्यापार के चंगुल में फँस जाती हैं |

धार्मिक क्षेत्र में भी पुरुष का वर्चस्व कायम है| भारतीय जीवन, आचार एवं अनुष्ठान पर आधारित है जिसमें पुरुष ही प्रमुख है|दाह संस्कार, पिडंदान श्राद्ध बरसी आदि सभी कार्यों पर पुरुष का वर्चस्व ही देखा जा सकते है | धर्म के नाम पर नैतिकता, रीति रिवाज़ संस्कृति आदि भी स्त्री के खिलाफ दिखाई देती है| लेकिन धर्मभीरू स्त्री इस पर प्रश्न करने से हिचकती है, जिसका फायदा पुरुष उठाता है|

वैश्वीकरण ने औरत के शरीर, श्रम, एवं सौंन्दर्य का सर्वाधिक शोषण किया| इस सिलसिले में स्त्री सौंन्दर्य को किसी उत्पाद की तरह इस्तेमाल करना शुरू कियागया | विज्ञापनों के ज़रिए मॉडल गर्ल के शरीरांग का प्रदर्शन होता है और ऐसे विज्ञापनों पर लोगों का ध्यान अधिक पडता है | इससे लोग उतपाद की जानकारी प्राप्त करते है न कि उत्पाद के गुण |

पुरुष वर्चस्ववादी सामाजिक व्यवस्था में अर्थ का स्वामी भी वही होता है| यह झोंपडों में रहनेवाले पुरुष से लेकर मंडियों में रहनेवाले पुरुषों केलिए सही बात है| मंडियों में उत्पादक न होने के कारण स्त्री पुरुष का अनुसरण करने को मज़बूर होती है| झोंपडों में वह कमाती है, परिवार का पालन भी करती है, फिर भी उसे शोषण की शिकार होना पडता है| मध्यवर्ग में शायद स्त्रियों पर अधिक अत्याचार हो रहे हैं, जो झूठी मान्यताओं, सांस्कृतिक विधिनिषेधों के कारण बाहर नहीं दिखाई देते हैं| मतलब यह है कि स्त्री हर कहीं शोषण, उपेक्षा, तिरस्कार की शिकार ही है ,यही सच्चाई है|

.........☙❧.........

चौथा अध्याय

नब्बे के दशक की कवयित्रियों की कविताओं में पुरुषवर्चस्व का विरोध

नब्बे के दशक की कवयित्रियों की कविताओं में पुरुषवर्चस्व का विरोध

परंपरा से पुरुष्वर्चस्व नारी जाति को अपने प्रभुत्व के ज़रिए दबाता-कुचलता, वाणिहीन करता आ रहा है | भारत में नारीमुक्ति आंदोलन और उससे उपजे नारीवाद ने दबी कुचली खामोशी नारी जाति को अपने अस्तित्व और अधिकार के बारे में सोचने की प्रेरणा दी| नारीवाद ने दो रूप में नारी जाति को प्रभावित किया| नारीवाद का सामाजिक रूप नारी के सक्रिय क्रियाकलापसे जुडा हुआ है | नारीवाद के साहित्यिक रूप में साहित्य में दर्ज नारी के माध्यम से नारी समस्याओं को शब्दबद्ध करता है | साहित्य में चित्रित करनेवाली सारी समस्याएँ सामाजिक क्रिया कलाप का ही प्रतिबिंब है | जब साहित्य के माध्यम से स्त्री अपने ऊपर होनेवाले अत्याचारों पर विद्रोह करती है, तब समाज में उसकी सक्रिय प्रतिक्रिया भी होती है|

शिक्षा के कारण आज की नारी अपने अधिकारों के प्रति सजग है | स्वावलंबन से उसकी स्थिति में निश्चित ही परिवर्तन आ गया है | वह अपनी व्यक्तिहीनता एवं शापग्रस्तता पर चिन्तन कर रही है | परंपरागत रूढ छवियों को तोडने की कोशिश वह कर रही है | इस सन्दर्भ में महादेवी का कहना उल्लेखनीय है : “कोमल तूल-सी वस्तू भी बहुत दबाये जाने पर अन्त में कठिन जान पडने लगती है | भारतीय स्त्री भी एक दिन विद्रोह कर ही उठी | उसने भी पुरुष के

प्रभुत्व का कारण अपनी कोमल भावनाओं को समझा और उन्हीं को परिवर्तित करने का प्रयत्न किया | अनेक सामाजिक रूढियों और परंपरागत संस्कारों के कारण उसे पश्चिमीय स्त्री के समान न सुविधाएँ मिली और न सुयोग, परन्तु उसने उन्हीं को अपना मार्गप्रदर्शक बनाना निश्चित किया|"[1]इसप्रकार कोमल संवेदनशील भारतीय नारी ने भी अपने ऊपर होनेवाले अत्याचारों के खिलाफ विद्रोह प्रकट किया|

4.1 नब्बे के दशक की कवयित्रियों में विद्रोही चेतना

नब्बे के दशक की कवयित्रियाँ अपनी आशा-निराशा,सुख-दु:ख, आचार-विचार आदि वैयक्तिक अनुभूतियों को साहित्य के ज़रिए प्रस्तुत करके मुक्ति का आन्दोलन रच रहीं हैं | सदियों से दबी हुई अपनी विद्रोही चेतना को वे बाहर प्रस्तुत कर रही हैं| इसके संबन्ध में अनामिका का कहना है "आदमी का स्प्रिग तत्व उसे एक सीमा के बाद दबने नहीं देता, और जितने ज़ोर से स्प्रिग रखता है, उतनी ज़ोर से उछलता भी है|"[2]कवयित्रियाँ सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र के नारी विरोधी स्थितियों में हस्ताक्षेप करते हुए,हमारी पितृसत्तात्मक व्यवस्था पर प्रश्नचिह्न लगाती है | ए अरविन्दाक्षन के शब्दों में "सामाजिक अन्याय के विरुद्ध, असांस्कृतिक कार्यवाईयों के विरुद्ध समय समय पर स्त्री कार्यकर्ताओंने जो सार्थक भूमिकाएँ निभाई है वह आज भी स्त्री-कविता का बल है|"[3]

---

[1]महादेवी वर्मा -श्रृखला की कडियाँ -पृ. 41

[2]अनामिका - स्त्रीत्व का मानचित्र -पृ.9

[3]ए अरविन्दाक्षन - रचना के विकल्प -पृ.35

कवयित्रियाँ अपनी कविताओं द्वारा एक प्रतिसंस्कृति का सृजन करती है | क्योंकि प्रचलित धार्मिक, सांस्कृतिक, आर्थिक, सामाजिक विचारधाराएँ अर्थात् हमारा स्वत्व, परिवार, अधिकार, नैतिकता, लैंगिकता, स्वतंत्रता आदि संकल्पनाएँ पुरुष केन्द्रीत है | ऐसी दुनिया में स्त्री और उसकी अस्मिता केलिए जगह नहीं है |

नारी अस्मिता नारी लेखन का प्रमुख उद्देश्य है |इसकी प्रतिष्ठा केलिए पितृसत्तात्मक व्यवस्था को तोडना अनिवार्य है | क्योंकि महिलाओं पर जो अत्याचार होते रहते हैं उसका मुख्य कारण हमारी सामाजिक पितृसत्तात्मक व्यवस्था है | सुमन कृष्णकान्त लिखती हैं कि "महिलाओं के प्रति सभी प्रकार के अपराधों की नींव हमारी सामाजिक संरचना और व्यवस्था है | गरीबी निरक्षरता अज्ञान और अधिकारों की जानकारी का अभाव, ये मुख्य कारक हैं,जो अपराधों को बढावा देते हैं| हमारी समाजिक प्रथाएँ, धार्मिक अवस्थाएँ, और रूढ परंपराएँ भी महिलाओं को परिवार और बाहर दोनों स्थानों पर गौण स्थिति में रहने केलिए बाध्य करती है|"[1] आजकल की नारी अपने को पराधीनता की स्थिति में रहने केलिए बाध्य करती सामाजिक व्यवस्था को तोडना चाहती है |

[1]सुमन कृष्णकान्त -गगनाग्चल - पृ.30 (अक्तूबर-सितंबर अकं 4)

4.2 पितृसत्तात्मक समाज और स्त्री विद्रोह

पितृसत्तात्मक समाज में स्वत्व, परिवार, अधिकार, राजनीति, परंपरा, लैंगिकता, नैतिकता, अनुभूति, स्वतंत्रता आदि सारी संकल्पनाएँ पुरुष केन्द्रित है | सदियों से व्यवस्था के चंगुल में फॅस गयी नारी जब तूलिका को हथियार बनातीहै तो पितृसत्ता इससे भयभीत होती है | वह डरता है कि सदियों से पुरुष की तानाशाही व्यवस्था में पीडित नारी अपने लेखन के द्वारा निश्चय ही व्यवस्था के विरुद्ध आवाज़ उठायेगी | स्त्री की नगाडे की आवाज़ से पुरुष सत्तात्मक व्यवस्था सिहरने लगी है | क्योंकि अपनी स्मृतियों में क्रूर एवं नृशंस शोषण एकदम ताज़ा है | इस यथार्थ का सामाजिक प्रस्तुतीकरण स्त्री कविता का मुख्य हिस्सा है | स्त्री ज़रूर पुरुष की बराबरी करेगी |ऐसा करके सभी क्षेत्रों में वह अपनी उपस्थिति दर्ज कराने की कोशिश करेगी | अनामिका का कहना है “यह तो हम सभी जानते हैं कि अन्तिम विस्फोट के पहले और वैसे भी परमाणु के भीतर न्यूट्रोन, प्रोट्रोन, इलक्ट्रोन आदि कई कणिकाएँ अभंग भाव से नाचा करती है | कुछ इसी भाव से स्त्रियों की लैंगिक अस्मिता के भीतर एक कॉस्मिक नाच नाचा करती है उनकी वर्गीय क्षेत्रीय जातीय धार्मिक और राजनीतिक अस्मिताएँ और इसी विशाल कॉस्मिक नृत्य का प्रतिबिंबन है उनका रचना संसार|”[1]

---

[1]अनामिका - कविता में औरत -पृ 8

सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक और सांस्कृतिक छल से भरे एक समाज में हम जी रहे हैं| क्रूरता के इस अद्भुत अंतहीन समाज में जीना स्त्री केलिए कम महत्वपूर्ण बात नहीं है | ऐसे समय में समाज के सभी स्तरों पर विद्यामान असमानताओं पर बोलनेवाली एक रचनाकार होना बडा जोखिम का कार्य है |'इस पौरुषपूर्ण समय में' कात्यायनी इसका पर्दाफाश करती है |

"संकल्प चाहिए
अद्भुत-अंतहीन
इस सान्द्र क्रूरता भरे अंधेरे में
जीना ही क्या कम है
जो वह
रचने लगी
कविता "[1]

कात्यायनी मौजूदा मानव विरोधी माहौल को पौरुषपूर्ण समय कहकर पुरुषवर्चस्ववादी व्यवस्था के विरुद्ध अपना विद्रोह प्रकट करती है |

कवयित्रियों केलिए कलम अपना हथियार है | सामाजिक विसंगतियों के खिलाफ वह अपने कलम द्वारा लड रही है | घरेलू दायित्वों में व्यस्त हो रही नारी केलिए कविता लिखना फुरसत का काम नहीं है | अर्थात् वह मनोरंजन करने

[1]कात्यायनी -इस पौरुषपूर्ण समय में - पृ-55

केलिए नहीं लिखती है, समाज में, परिवार में, स्त्री अस्मिता की प्रतिष्ठा करना चाहती है, लेखन के ज़रिए उसका मन शान्त नहीं बेचैन है, जिसकी अभिव्यक्ति वह कविता के द्वारा करती है | इस तथ्य का उद्घाटन करती है चन्द्रकला त्रिपाठी की 'कविता लिखनेवाली स्त्री'

"कविता में वह बेचैनियों से छुटकारा नहीं
उनका सामना करती है
कविता को वह कैसे छोड़ सकती है
फुरसत की चीज़ की तरह
युद्ध क्षेत्र में चारों ओर से घिरे योद्धा को
कभी अपने हथियारे से टिककर सोने देखा है |"[1]

कात्यायनी की कविता 'सात भाईयों के बीच चंपा' सदा संघर्षरत रहने को उद्यत नारी की कथा बताती है | जब चंपा सयानी होकर बाप के सपनों की काली छाया बन जाती है, तब से लेकर उसे भिन्न भिन्न प्रकार के शोषणों का सामना करना पडा | लडकी सयानी होने के साथ उसके अलगाव कार्य शुरू होता है | उसकी स्वाधीनता छीनी जाती है | उसे ओखल में धान के साथ कूट दी जाती है, भूसी के साथ कूडे पर फेंक दी जाती है, तालाब में जलकुंभी के जालों के बीच दबा दी जाती है, मसलकर और दबाकर पूरे गाँव में उनकी राख बिखेर दी जाती है| तो भी रात की बारिश में वह उग जाती है | इन सबका विरोध करती है |

---

[1]चन्द्रकला त्रिपाठी - शायद एक दिन -पृ 43

"रात को बारिश हुई झमडकर
अगले ही दिन
हर दरवाज़े के बाहर
नागफनी के बीहड घेरों के बीच
निर्भय निस्संग चंपा
मुस्कुराती पायी गयी |"[1]

यहाँ प्रतिकूल वातावरण में भी जीने की स्त्री की जिजीविषा ही व्यक्त हुई है | यह जिजीविषा ही बार बार उगने केलिए प्रेरणा देती है | सविता सिंह की कविता 'कोई हवा' भी इससे मिलती जुलती कविता है | यह कविता भी स्त्री विरोधी वातावरण के खिलाफ कवयित्री का प्रतिरोध है | समाज की तानाशाही स्थितियाँ उसे नष्ट करने का प्रयास करते हैं, उसे रौंदने की कोशिश करती रहती है| ऐसी हालत में टूटकर भी जीवन न खोनेवाली फूल की एक डालके समान अपने को ढालने की कोशिश करती है | कवयित्री का कामना है :-

"कोई हवा मुझे भी दिखाये कैसे
लाखों करोडों जीवाणु
कीडे मकोडे बडे छोटे
जीते है प्रच्छन्न प्रबल अपने जीवन
कैसे उन्हें कोई पीडा नष्ट नहीं कर सकती

[1]कात्यायनी -सात भाईयों के बीच चंपा - पृ 22

गुमराह नहीं कर सकता

कोई भी सुख उन्हें

छीन नहीं सकता कोई उनसे उनका सच

रोक नहीं सकता उन्हें जाने से इस जीवन के आगे |"[1]

ज़िन्दगी के प्रतिकूल वातावरण में भी जीने की अदम्य जिजीविषा एवं प्रतिरोध यहाँ परिलक्षित होता है |

कात्यायनी की स्त्री अपने ऊपर होनेवाले अत्याचारों को जानती है साथ ही अस्वतंत्रता की सभी बेडियों को पहचानती है | पिजंरे, जाल और यंत्रणा गृह के बारे में पूछने पर समुद्र की गहराई, नीले आकाश के विस्तार और प्यार के गीतों के बारे में बातें करने लगती है | यह कविता जाल और पिंजरे में फंसकर यंत्रणाओं के शिकार बनी नारी की उलटबासियाँ है | स्त्री की यह सजगता एवं जागरूकता समाज पर भय जगाता है | इसका साक्ष्य है उनकी कविता 'इस स्त्री से डरो'

"रहस्यमय है इस स्त्री की उल्टबासियाँ

इन्हें समझो इस स्त्री से डरो "[2]

इस कविता में एक ओर अपनी स्थिति की सही पहचान है दूसरी ओर सपनों की दुनिया में विचरण करने की आकांक्षा है | साथ ही कवयित्री तानाशाही

---

[1]सविता सिंह - अपने जैसा जीवन - पृ 16

[2]कात्यायनी -सात भाईयों के बीच चंपा -पृ 11

शक्तियों को चेतावनी भी देती है|पितृसत्तात्मक समाज नारी को सदा पुरुष के अधीन रखना चाहता है | प्राचीन काल से यही स्थिति चली आ रही है | आधुनिक काल में स्त्री शिक्षा एवं पश्चिमी संपर्क के बल पर स्त्री जागने लगी | पुराण के पात्रों के ज़रिए विभिन्न सन्दर्भों के ज़रिए आज की नारी आवाज़ उठा रही है | शशि शर्मा ने 'लक्ष्मणरेखा' में इसका चित्रण किया है :-

"अब नहीं खींचने देगी तुम्हें
कोई रेखा
और न ही करने देगी विवश
बाहर आने को
वह नहीं बनेगी इन्तज़ार करती
शिला
तुम्हारे स्पर्श का
चलने दो उसे अपना मार्ग
पकड लेगी तुम्हारी गति
सहचरी बन |"[1]

आज की नारी लक्ष्मण रेखा को मिटाती है, पाषाण होने के शाप से इनकार करती है |सारे प्रवंचनों षडयत्रों के पोल खोलने का प्रयास वह करती है | लेखिका पुरुषवर्चस्व के विभिन्न आयामों को प्रस्तुत करती है | बन्धनों का विरोध करती

[1]शशि शर्मा - मौसम से कह दो - पृ 27

आज की नारी गुलामी नहीं चाहती है | उससे मुक्त होने की झटपटाहट उसकी पहचान बन गयी है | इसलिए वह चिन्ताग्रस्त दिखाई देती है|मौज़ूदा मानव विरोधी माहौल से वह विद्रोह करना चाहती है | वह हंसते हुए नहीं दिखाई देती है | मुक्ति के रास्ते की तलाश से तंग आने पर वह मरना बेहतर समझती है | मरने से पहले वह सब कुछ राख कर देती है जिसे लोग भरा पूरा जीवन कहा करते हैं| कात्यायनी की कविता ‘दाहक जीवन दाह’ में स्त्री मृत्यू के चयन करके व्यवस्था के प्रति विद्रोह करती है :-

“स्त्री पीछे मुडती है
प्रचंड वेग के साथ
अपने हाथों आग लगा देती है
राख कर देती है
वह सब कुछ
जिसे
लोग कहा करते है
भरा-भूरा जीवन “[1]

पुरुषवर्चस्ववाले समाज ने नारी को पिछडी कहकर सभी सामाजिक कार्यकलापों से उसे दूर रखा था | उसे दोहरे स्तर का घोषित करके अपने को मर्द होने का गर्व करता था | पर आजकल की नारी इस प्रकार के शोषक शक्तियों का

---

[1]कात्यायनी -गगनांचल जनवरी-मार्च - 1993 -पृ. 94

पहचान कर रही है | मौन होकर भी वह अपना विद्रोह प्रकट कर रही है | सुनीता जैन की 'सॉरी' इस तथ्य का पर्दाफाश करती है :-

"और बन्धु, सुनो
जब मैं कुछ नहीं कहती
वही मेरा सबसे बडा
कहना है
उस पूरे मौन में
तुम्हारे समूचे होने को ही
उलॉघ जाना है
मैं मैं हूँ
मुझे यही
आज
कल
और हर युग में
कहना है"[1]

सदियों से समाज में नारी की स्थिति पराधीनता की है | वह समाज में सजायफ्ता की तरह ही जी रहीं है | उसे अपने कहने केलिए धरती भी नहीं है | संध्या गुप्ता की 'इस धरती के औरतें 'में कवयित्रि अपना आक्रोश व्यक्त करती है |

"औरत

---

[1]सुनीता जैन - इस अकेले तार पर -पृ 43

जो समय की हरेक घंडियों में
सजायफ्ता की तरह जी रही है
आखिर
किसने रखा है इसके पिछले कर्मों का
हिसाब
किसके पास सुरक्षित है
इसके सदियों से गुनहगार होने के दस्तावेज़
कब पूरे होंगे
हिसाब
कब फैलाकर सो पाएगी पूरी धरती पर
अपने पॉव एक स्त्री "[1]

यहाँ कवयित्रि इतिहास के परख करके स्त्रीशोषण के तरीके और उसके नाप-तौल को स्पष्ट करने का प्रयास करती है | सुधा जैन की कविता 'कठपुतली'भी पितृसत्तात्मक व्यवस्था पर फूट पडती है | जन्म से मृत्यू तक कठपुतली जैसी अधर में लटकते अस्तित्व के साथ जीनेवाली नारी को पुरुषवर्चस्व की डोरी के हिलने-डुलने के अनुसार उछलना कूदना पडता है | उनका विचार है :-

"मन विद्रोह करता
डोरी तोड
मुक्त हो जाए

[1]संध्या गुप्ता - साक्षात्कार जनवरी 1995 -पृ 37

विचारो खुले आकाश के नीचे
धरती के विस्तार में “[1]

नीलेश रघुवंशी की ‘कविता लिखनेवाली लडकी’ पितृसत्तात्मक व्यवस्था किस तरह नारी को रचना क्षेत्र से अलग करके, घर की चारदीवारी में बन्दी बनाये रखने की साजिश रचती है, इसका खुलसा करती है | प्रसिद्ध रूसी कवयित्री मरीना त्स्वेतायेवा से प्रश्न करके कवयित्री अपना विद्रोह प्रकट करती है :-

“ओ मरीना
तुम्हारी ही तरह
मैं भी बनूँगी कवि
मशीन पर सिलते हुए कपडे सिलूँगी कविता
बुनते हुए स्वेटर बुनूँगी शब्द
खुले आसमान के नीचे बैठकर करूँगी बातें
तुम्हारी कविताओं पर “[2]

सारा वातावरण प्रतिकूल होने पर भी एक घरेलू औरत जब साहित्य का सृजन करती है, तब शोषक शाक्तियाँ बेचैन हो जाती हैं | वह कागज़ पर फणीधर नाग का विष उगलकर पितृसत्तात्मक व्यवस्था खींचती लक्ष्मण रेखा को तोडने की कोशिश करती है कमलकुमार की रचनाकार में:-

---

[1]सुधा जैन - मौसम गर्म है -पृ 25
[2]नीलेश रघुवंशी - घर निकासी -पृ 24

"सारी शोषक ताकतें
डरी सहमी
नाग का फण लिये
उसे लिखता देखता रही
चुपचाप
लक्ष्मण रेखा को तोडने की कोशिश में
घुटनों के बल बैठा रहा
एक प्रचंड विश्वास
उसके पास "[1]

पुरुषवर्चस्ववाला समाज नारी को अपने अधीन में रखकर आलस्य में जी रहा था | पर एक दिन औरत के अन्दर के सोये हुए दुर्घर्ष औरत जाग उठती है |अकेली लडकरसारी विषमताओं को दूर करने के उद्देश्य से वह रह गयी | रमणिका गुप्ता की 'दुर्धर्ष औरत' का कहना है :-

"अब मैंने उन्हें दिखा दी है
उनकी दरिन्दगी की सीमाएँ
दिखा दिया है वटखरे
जो तराजू पर सबको
बराबर-बराबर तौलते है,
छुला दी है उस तेग की धार

[1]कमलकुमार- गवाह -पृ 83

जो सबको बराबर-बराबर

काटती है “1

रमणिका गुप्ता के अनुसार पुरुष द्वारा ताना-बाना बुने जाल के उसके इतिहास एवं वर्तमान की पहचान आज स्त्री करती है | इसलिए पुरुष के ढोंग को आगे जगह नहीं देगी |

4.3 सामाजिक रूढ़ियों के प्रति विद्रोह

नारी परंपरा से अपने लिए नहीं, औरों केलिए जीती रहती है | पति के वंश के बढ़ाना, बच्चों का पालन, परिवार के सदस्यों की सेवा करना आदि उसका कर्तव्य मानी जाती है |आज शिक्षित नारी इससे मुक्त होकर स्वावलंबी बनना चाहती है | पर स्वावलंबी होने के साथ उसका कर्तव्य भार भी बढ़ जाता है | क्योंकि उसे घर और बाहर काम करना पडता है| उसकी कमाई पर पति का अधिकार ही होता है | इसके खिलाफ आवाज़ उठाने पर पत्नीत्व के आदर्श से स्त्री गिर जाती है |घर और बाहर के काम एक साथ ले जाने की ताकत होते हुए भी उसे बेचारी ‘अबला’ नाम से पुकारते हैं| इसका चित्रण सावित्री डागा ‘औरत की आत्मकथा’ में करती है |

[1]रमणिका गुप्ता - अब मूरख नहीं बनेंगे हम - पृ 34

"चार अक्षर सीखकर जो अपना व्यक्तित्व
निखारने व स्वावलंबी बनने चलती हूँ
तो बढ़ता है मेरा ही कर्तव्य भार, घर से बाहर तक
और कमाई पर बढ़ता है स्वामी का अधिकार
अपने अधिकार की बात करते ही
मैं नारीत्व के आदर्शों से नीचे गिर जाती हूँ
तब कोई नहीं उठाने आती मुझे
स्वयं मेरी नज़रे भी
मैं रसोई से लेकर खेत खलिहान तक
बाडी से बाज़ार व कमठै तक
सारे काम करती हूँ
फिर भी बेचारी अबला ही कहलाती हूँ |"[1]

परंपरा से पुरुष नारी को बच्चे पैदा करनेवाले यंत्र मानकर जी रहा है | ऋगवेद संहिता में नारी का वर्णन वंश चलाने का यंत्र रूप में किया था | तब से लेकर पुरुषवर्चस्व ने उसे मनुष्य की हैसियत अर्जित करने के मार्ग में प्रतिबद्ध खडा करने का हर संभव प्रयास करता आ रहा है | कात्यायनी अपनी 'वह रचती है जीवन और'कविता में नारी जीवन की अस्वंत्रता पर आवाज़ उठा रही है| प्रेम सौन्दर्य, मातृत्व आदि से बढकर स्वतंत्रता को वे महत्व देती हैं :-

[1]सावित्री डागा -मधुमती जून 1992 -पृ 100

" वह कौन सी चीज़ है
जिसके बिना सब कुछ अधूरा है
प्यार भी, सौन्दर्य भी, मातृत्व भी.......
सोचती है वह
और पूछती है चीख चीखकर
प्रतिध्वनि गूंजती है
घाटियों में ; मैंदानों में
पहाडों से समुद्रकी ऊँची लहरों से टकराकर
आज़ादी ! आज़ादी !! आज़ादी !!! |"[1]

नारी की मात्र माँ बनने की भूमिका को यहाँ नकारती है |वह बंधनों में जकड कर जीना नहीं चाहती | वह बन्धनों को तोडकर खुले आसमान में उडना चाहती है |

कात्यायनी की कविता 'अपराजिता' भी परंपरा पर विद्रोह करती हैं | यह कविता 'मनुस्मृति' में नारी केलिए दी गयी उक्तियों ("सृष्टिकर्ता ने नारी को रचते समय उसे बिस्तर, घर, जेवर अपवित्र इच्छायें ; ईर्ष्या, बेईमानी और दुर्व्यवहार दिया –मनु) के साथ प्रारंभ होती है | मनु के विचारों का खण्डन करके कवयित्री बताती है कि सृष्टिकर्ता ने बिस्तर, घर, गहने अपवित्र इच्छाओं के ज़रिए नारी को

[1]कात्यायनी - सात भाईयों के बीच चंपा - पृ 30

पराजित कराने की कोशिश की, पर नारी की आत्मा अमर और अजेय है, उसे पराजित न कर सकते :-

" पर नहीं कर सके पराजित वे
हमारी अजेय आत्मा को उनके उत्तराधिकारी
और फिर उनके उत्तराधिकारियों के उत्तराधिकारी भी
नहीं पराजित कर सके जिस तरह
मानवता की अमर अजेय आत्मा को
उसी तरह नहीं पराजित कर सके वे
हमारी अजेय आत्मा को
आज भी वह सघर्षरत है
नित निरन्तर
उनके साथ
जिनके पास खोने को सिर्फ ज़जीरे ही है
बिलकुल हमारी ही तरह ! "[1]

समाज में व्याप्त अनेक अन्यायों के बावजूद भी नारी ने हार नहीं मानी है | नारी के अजेय आत्मा की गरिमा को उद्घाटित किया है |

कात्यायनी की कविता "औरत और घर " में घर में सुरक्षित रहने और घर को घर बनाये रखने के प्रति औरत को ही ज़िम्मेदार माननेवाली प्रथा का उल्लंघन करती है |परंपरा से चली आ रही इस प्रथा का उल्लघन करके अस्वतंत्रता की बेडियों को तोडना चाहती है |

[1]कात्यायनी -सात भाईयों के बीच चंपा - पृ 29

" बस उसनेएक ही मासूम सा सवाल किया था
एक दिन अचानक कि
औरत क्या एक घर के बिना भी हो सकतीहै
या फिर क्या कोई
और भी चौहद्दी हो सकती है
सुखपूर्वक रहने खाने पीने केलिए
घर के अलावा
जिसमें रहते हुए औरत औरत बनी रहे और
घर घर भी बना रहे ?
यानी वह न हो घर का हिस्सा
बल्कि उसकी एक बन्दिश हो ?"[1]

कभी कभी व्यवस्था का दबाव नारी पर इतना भारी होता है कि अपना घर कैदघर समान लगता है | वहाँ हर क्षण वह सजायफ्ता की तरह जी रही है|

4.3.1 स्वतंत्र अस्मिता की चाह

हमारा समाज स्त्री को स्वतंत्र अस्मिता देते नहीं | सदा वह पुरुष के साथ जोडकर ही पहचान जाती है | रमणिका गुप्ता का कहना है " भारतीय दर्शन और मनु की आचार संहिता के अनुसार तो वह मानवीय अधिकारों की पात्र तो नहीं है, वह जाति-विहीन और नाम-विहीन भी है | स्त्री की जाति शास्त्रों के अनुसार विवाह से पहले उसके पिता की और विवाह के बाद उसके पति की होती है |

[1]कात्यायनी - इस पौरुषपूर्ण समय में - पृ 69

अभी भी ग्रामीण क्षेत्रों में वह अपने नाम से नहीं पुकारी जाती |”[1] आजकल की नारी अपना स्वतंत्र पहचान चाहती है |

दिनेशनन्दिनी डालमिया की कविता ‘किसलिए’ अपनी स्वतंत्र अस्मिता को इस प्रकार व्यक्त किया है

“तुमने मुझे
अपने वामभाग में
स्थान दिया
शिवजी की तरह
पर सलोने
आजतक कोई नाम
मुझे क्यों न दिया “[2]

अपनी स्वतंत्र अस्मिता की पहचान सविता सिंह की कविता ‘मैं किसकी औरत हूँ’ में प्रबलता के साथ उभरकर आयी है | औरत की पहचान उसके पिता, पति अदि के साथ जुडी रहती है | जन्म से शादी तक पिता के साथ जोडकर उसकी पहचान होती है |शादी से मृत्यू तक उसके पहचान पति के साथ जोडकर होती है |कभी भी समाज में उसका कोई स्वतंत्र अस्तित्व नहीं होता |पर आज की

---

[1]रमणिका गुप्ता - स्त्री विमर्श :कलम और कुदाल के बहाने -पृ 29
[2]दिनेशनान्दिनी डालमिया - शाम्भवी -पृ 93

औरत अपने स्वत्व को पहचानती है | अपना पहचान स्वयं बनना चाहती है| वह पितृसत्तात्मक सामाजिक व्यवस्था को चुनौती देती है :-

"मैं किसी की औरत नहीं हूँ
मैं अपनी औरत हूँ
अपना खाती हूँ
जब जी चाहता है तब खाती हूँ
मैं किसी की मार नहीं सहती
और मेरा परमेश्वर कोई नहीं"[1]

अपने स्वतंत्र अस्तित्व केलिए ही नारी यहाँ आवाज़ उठाती है | मृणाल पाण्डे का कहना उचित है कि "स्त्री के अस्तित्व को, उसके पुरुष से जुडे संबन्धों तक ही सीमित करके न देखा जाये बल्कि पुरुष की तरह उसे भी मानवता का एक भिन्न तथा अनिवार्य और पूरक तत्व माना जाये |"[2] इस प्रकार आज की स्त्री अपने अस्तित्व को लेकर सजग है |

कात्यायनी की कविता 'एक भूतपूर्व नगरवधु की दुर्गपति से प्रार्थना' भी समकालीन जागृत नारी की प्रतिरोधी चेतना व्यक्त करनेवाली है | जागृत नारी के समान 'नगरवधू' भी बन्धनों को तोडकर स्वतंत्र जीना चाहती है | वर्षों तक वह दूसरों केलिए जी रही थी | अब वह अपनी स्वतंत्र अस्मिता चाहती है|

---

[1]सविता सिंह - अपने जैसा जीवन - पृ 40
[2]मृणाल पाण्डे - स्त्री -पृ 18

"मैं जीवित रहूँगी
क्योंकि अभी मैं स्वतंत्र जीवित रहना चाहती हूँ
नहीं, यह कहना उचित होगा कि
अब मैं जीवित होना
चाहती हूँ दुर्गपति
मुझे जाने दो
मैं अपनी पहचान तक जाना चाहती हूँ
अपनी आत्मा तक
अस्मिता तक जाना चाहती हूँ मैं "[1]

आजकल की नारी समाज में अपनी स्वतंत्र अस्मिता बनाये रखने केलिए आवाज़ उठा रही है| अपनी स्वाभिमान और आत्मनिर्भरता को कविता द्वारा शब्द दे रही है |

4.3.2 लिंग भेद से मुक्ति

परिवार में लडकी का जन्म अशुभ माना जाता है | लडकी के प्रति उपेक्षा वहाँ से शुरू होती है | वह अपने परिवार में ही भेदभावपूर्ण नीति का शिकार हो जाती है | जब वह सयानी हो जाती है, परिवारवालों को वह पराये घर की लगने लगती है | शादी परिवार केलिए सबसे मंहगा हो जाती है | इसलिए पिता केलिए लडकी बोझ लगता है | और पिता अपना क्रोध भी प्रकट करता है | इसके खिलाफ आवाज़ उठाती है उषा महेश्वरी 'कुसूर' कविता में

[1]कात्यायनी- इस पौरुषपूर्ण समय में - पृ 64

“बेला सा बढता रहा बदन मेरा

रॉकट की गति से

तौलते रहे तुम

और मेरे लायक

जब तुम्हें दुल्हा नहीं मिला

या तुम्हारी जेब ने

साथ नहीं दिया तुम्हारा

तब भी तुमने

मुझे ही गाली दी

पर इसमें भी मेरा

क्या कसूर था?

क्या लडकी होना ही

कुसूर था मेरा “[1]

वे समाज में स्थित लिंग-सापेक्ष पारिवारिक दृष्टि का खण्डन करती हैं |

एक स्त्री का भोगा हुआ यथार्थ,समाज की ज़्यादतियाँ, उनका तिरस्सकार औरतमाम प्रताडनाओं को स्त्री ही यथार्थ रूप में पहचान कर सकती है|संज्ञा सिंह की कविता ‘चौखट के भीतर लडकी’ इस तथ्य का पर्दाफाश करती है | घरेलू झंझट में फॅस गयी नारी को, जीवन में अन्य कार्य केलिए समय न मिलती, समाज

[1]उषा महेश्वरी - मधुमती जून -अगस्त 1994 - पृ 125

ने उसे ऊचा ऊँचा अवसर भी नहीं दिया | अच्छे अच्छे मौके केवल लडकों को देता रहा| परिवार और समाज ने हमेशा लडकी की उन्नति में अवरोध खडा किया |

"वक्त कहाँ मिला
कहाँ मिला अवसर
उत्साहित किया कब कब मुझे
अच्छा और बडा काम करने केलिए
कभी रास्ते में
खडा किया गया घर
समाज खडा किया कभी रास्ते में "[1]

कवयित्रि यहाँ समाज की वर्तमान स्थिति पर बडे वस्तुगत और सटीक ढंग से फोकस करके, मौजूदा स्त्री विरोधी माहौल का सशक्त प्रतिरोध करती है | रमणिका गुप्ता का कहना है "मनुष्य के विकास क्रम में पुरुषसत्तात्मक समाज ने स्त्री की सोचने की शक्ति को विकसित न होने देने और बराबरी का दावा न करने देने केलिए उसे सभी मानवीय अधिकारों के साथ साथ शिक्षा के अधिकार से भी वंचित कर दिया |"[2] स्त्रियों के प्रति समाज में सदा उपेक्षा भाव ही कायम रहा है | नब्बे की दशक की कवयित्रियाँ लिंग भेद के विरुद्ध आवाज़ उठाती है |

---

[1]संज्ञा सिंह - साक्षात्कार सितंबर 1992 -पृ 66
[2]रमणिका गुप्ता -युद्धरत आम आदमी कविता विशेषांक 2011- पृ 13

4.3.3 भ्रूणहत्या के खिलाफ

आजकल स्त्रियों की आबादी उत्तरोत्तर घट रही है | इसका मुख्य कारण विज्ञान के युग के भ्रूण परीक्षण है | मृदुला सिन्हा की राय है कि :- “वैज्ञानिक उपलब्धियाँ जहाँ एक ओर मनुष्य जीवन को सरल सुबोध और सुगम बनाने केलिए है, वही एक वैज्ञानिक तकनीक ने बालिकाओं के ऊपर विशेष कहर ढहाना प्रारंभ किया |”[1] आजकल लोग भ्रूण परीक्षण सुविधा का लाभ उठाकर गर्भपात कर रहे है | शिशु के स्वास्थ्य परीक्षण केलिए इसका प्रारंभ हुआ था, पर धीरे धीरे इस परीक्षण का दुरुपयोग होने लगा | हज़ारों बेटियाँ गर्भ में ही दम तोड कर मरती जाती है | क्योंकि हमारे समाज मेंआज भी पुत्र को जन्म देने पर ही गौरव मिलता है | भ्रूण के लिंग निर्धारण रोकने केलिए सरकार ने कानून लाये है,“ महाराष्ट्रा विधान परिषद् मेंविधायकों ने बालिका भ्रूण के हत्यारों को हत्या का मुकदमा चलाकर उसे फाँसी देने की माँग की गयी थी |”[2] पर उस पर पाबन्दी लगाने में असफल हो रहा है | सरकार ने भ्रूण हत्या रोकने के उद्देश्य से ‘पलना’ जैसी योजना बनाई है | तो भी आजकल भ्रूणहत्या उत्तरोत्तर बढ रही है |

हमारे समाज में लडकी के जन्म को अशुभ मानने की अमानवीय परंपरा अब भी ज़ारी है | पिता आज लडकी की अपेक्षा लडके के पिता बनना चाहता है | यही बात माताओं को भ्रूण हत्या केलिए प्रेरित करती है |‘अजन्मी कन्या’ में रेणुप्रकाश इसका पर्दाफाश करती है :-

---

[1]मृदुला सिन्हा - मात्र देह नहीं है औरत -पृ 30-31

[2]नवभारत टाइम्स - (गुरुवार अगस्त 2011)

“नहीं
तुम माँ नहीं हो सकती
सिर्फ एक
छोटा सा रक्तपिंड ही तो थी मैं
अपनी विकास यात्रा पर कि हठात्
तुमने रोक दिया मेरा स्पंदन
और छीन लिया मुझसे
मेरा बचपन जो कि
मेरा प्राप्य था
तुम डर गयी थी
एक बेटी की माँ बनने से “[1]

लिंग भेद जानकर गर्भपात कराना अमानुषिक कार्य है | आजकल अलट्रा साउन्ड टेस्ट’ के द्वारा गर्भ में ही अगर शिशु यदि मादा है तो गर्भपात कराया जाता है| पर अधिकांश माताएँ विवश होकर ही गर्भपात केलिए तैयार हो जाता है | वीणा सिन्हा ने अपना विद्रोह व्यक्त करती है

“बिटिया,
अब तो माँ की कोख भी
महफूज नहीं रही तुम्हारे लिए
जहाँ तैर लेती थी तुम
नौ माह निर्द्वंद

---

[1]रेणु प्रकाश - युद्धरत आम आदमी - पृ 123

तुम्हें तलाशते गण्डे, ताबीज़ों के अलावा
हमारे पास
अब अलट्रासाउड की भेदनी आँखें है |"[1]

आजकल मार्चआठ 'महिला दिवस'के रूप में विश्व भर बहुत गंभीरतापूर्वक मनाया जाता है | पर वास्तविकता यह है कि नारी के प्रति समाज और पुरुष की मानसिकता में ज़रा भी बदलाव न आया है | लडकी के प्रति हीन भाव अब भी समाज में हैं|'महिला दिवस' कविता के ज़रिए अनिता भारती अपना विद्रोह व्यक्त करती है:-

"इस बार महिला दिवस
समर्पित उन बेटियों के नाम
जिन्होंने जन्म लेने से पहले
दम तोड दिया है | "[2]

जनसंख्या के अनुपात में लडकियों की संख्या बहुत अधिक घट गया है | भ्रूणहत्या का निरोध करने पर यह अन्तर एक हद तक कम किया जा सकता है |

4.3.4 प्रगतिशीलता पर प्रश्न चिह्न :-

नब्बे की कवयित्रियाँ लेखकों पर, विशेषकर अपने को प्रगतिशील घोषित करनेवाले कवियों और आलोचकों पर अपना विद्रोह प्रकट करती है | पुरुषवर्चस्व

---
[1]वीणा सिन्हा - साक्षात्कार जनवरी 99 -पृ 60
[2]अनिता कुमारी - युद्धरत आम आदमी - पृ. 125

नारी को सदा घरेलू झंझट में फॅसा कर देखना पसंद करता है क्योंकि पुरुष की स्वतंत्रता केलिए मनमानी केलिए स्त्री का घर में होना अनिवार्य है | उसके लिए अपने बच्चों का, घर का, संपत्ति का पालन करना है, उसके लिए एक निश्छल व्यक्ति की ज़रूरत है | पत्नी में पुरुष यहीं ढूँढता है | इसके लिए वह नैतिकता, सुरक्षा, प्रेम जैसे जाल का प्रयोग करते हैं| साहित्य में वे सदा लडकियों को घरेलू वातावरण में चित्रित करते हैं | कवयित्रीसुनीता जैन ‘कविता में लडकी’ में इसके विरुद्ध आवाज़ उठाती है |

“ चावल में गलने से ऊपर
कपडों में कुटने से ऊपर
सडकों पर चलने से ऊपर
चूल्हें में जलने से ऊपर
कहीं खडी संग अपने ही लडकी
नहीं कहीं होती है क्या अब
लडकी में बस लडकी ?”[1]

शुभा ने “गौरवमयी संस्कृति” में पुरुष जाति की कपटता पर व्यंग्य किया है | स्त्रियों को लेकर सुन्दर सुन्दर कविताएँ लिखनेवाले कुछ कविगण अपनी कविताओं में स्त्रियों की असुरक्षा के बारे में बातें करते हैं| पर यह सब लेखन में ही होते हैं| शुभा का कहना है :-

---

[1]सुनीता जैन -सीधी कलम सहो न - पृ 22

“कैसी गौरवमयी संस्कृति है
स्त्रियों की ममता
और हमारे हथियार
कैसे महान आख्यान बनाते हैं !
स्त्रियों के ऑसू हमें उसी तरह प्रिय हैं
जैसे अपनी वीरता और अपना पौरुष “[1]

कवयित्री के मत में पुरुषों की यह सहानुभूति मात्र दिखावा है | उसके भीतर ही भीतर अपनी सुख-सुविधायें है |

आजकल नारी विषय पर लेखन करना एक फैशन बन गया है | नारी की पीडा पर सहानुभूति प्रकट करके लिखनेवाले कई लोग हमारे समाज में हैं| वे खुद को प्रगतिशील करते हैं, पर अन्दर से अन्दर पुरुष भावना से ग्रस्त होते हैं| ऐसे पुरुषों को नारी पीडा की कोई जानकारी नहीं है, किन्तु नारी को पीडा देने की जानकारी है ही | इसप्रकार के बुद्धिजीवि लोगों की मानसिकता का पर्दाफाश करती है लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत् की कविता ‘हमराही’

“तू कर्मयोगी है, पंडित है, नीतिज्ञ है, बहुत कुछ है
ज्ञान विज्ञान के तेरे इन ग्रन्थों को पढकर यह
तो बता पीडा की प्रताडना की पीडा क्या

[1]शुभा - कहती है औरतें (सं अनामिका) - पृ 81

होती है ? कैसी होती है ?

किसी को पीडित कर उसकी पीडा के प्रति प्यार

का भी तू ने अध्ययन किया है ?

जाना भी है पीडा क्या होती है ?

यदि नहीं तो पंडित होकर भी तूने कुछ नहीं

पढा |

पढ सके तो पढ |”[1]

पुरुष की हिप्पोक्रसी पर कवयित्री यहाँ प्रकाश डालती है |

4.4 स्वावलंबन का आग्रह

हमारे समाज में प्राचीन काल से लेकर स्त्री पुरुष पर आश्रित होकर जी रही है | आर्थिक अभाव नारी जीवन की सारी समस्याओं का आधार है | महादेवी वर्मा का कहना है “स्त्री के जीवन की अनेक विवशताओं में प्रधान और कदाचित् उसे सबसे अधिक जड बनानेवाली अर्थ से संबन्ध रखती है और रखती रखेगी, क्योंकि वह सामाजिक प्राणी की अनिवार्य आवश्यकता है |”[2]महादेवीजी का कथन प्रासंगिक है | आधुनिक काल में विज्ञान एवं तकनीकी के विकास के साथ, नारी जीवन में भी बहुत अधिक बदलाव हुआ | औद्योगिकरण के फलस्वरूप बहुत अधिक स्त्रियाँ कामकाज क्षेत्र में आ गयी है | शिक्षा के फलस्वरूप समाज के

---

[1]लक्ष्मीकुमारी चूण्डावत् - मधुमति मार्च 92 - पृ 107

[2]महादेवी वर्मा - श्रृखला की कडियाँ - पृ 93

विभिन्न क्षेत्रों में वह काम कर रही है |फिर भी उसका आर्थिक शोषण हो रहा है | अपनी कमाई पर उसे कोई अधिकार नहीं है | उसका अधिकार पति या पिता रूपी पुरुष के हाथ में है | तसलिमा नसरिन का कहना है :-

"ज़माना बदला है, लडकियों ने लिखना पढना सीखा है नौकरी-चाकरी कर रही है|आर्थिक संपन्नता भी बहुत बढ रही है, लेकिन पिता या पति के परिवार में आर्थिक मदद करने के अलावा स्त्री की सचमुच की आर्थिक मुक्ति नहीं हो रही| स्त्री के प्रति समाज की नज़रों में कोई परिवर्तन नहीं आया है |"[1]

दिनेशनन्दिनी डालमिया की कविता 'धन्यवाद' नारी कीआर्थिक पराधीनता की ओर इशारा करती है | सृष्टिकर्ता ने नारी का सृजन करते समय नारी को सभी सुख सुविधाएँ दी | पर पैसे खर्च करने का अधिकार नहीं दिया :-

"सुदामा की गरीबी से उठाकर
तूने मुझे
धन कुबेर के यहाँ ला पटका, पर
पैसे की पहचान
और खर्च का एहसास
कब होने दिया |"[2]

---

[1]तसलिमा नसरिन -नष्ट लडकी नष्ट गद्य -पृ 116
[2]दिनेशनन्दिनी डालमिया -शाम्भवी - पृ 10

आर्थिक संकट ही सारी समस्याओं का मूलाधार है | महादेवीजी का कहना है "विवश आर्थिक पराधीनता अज्ञात रूप में व्यक्ति के मानसिक तथा अन्य विकास पर ऐसा प्रभाव डालती रहती है, जो सूक्ष्म होने पर भी व्यापक तथा परिणामत: आत्मविश्वास केलिए विष के समान है|"[1]

महिला सशक्तीकरण के फलस्वरूप स्त्रियों के बीच शिक्षा स्वावंलबन एवं आत्मनिर्भरता की भावना जागरित हुई है | आजकल की स्त्रियाँ आत्म निर्भर होकर पुरानी रूढियों एवं व्यवस्था से संघर्ष कर रही है | क्योंकि परिवारवाले नारी की आत्मनिर्भरता को मानते नहीं | नीलेश रघुवंशी ने 'इस दुनिया को ' शीर्षक कविता में इस परिस्थिति को व्यक्त किया है :-

"कमाती हूँ अपना खुद का
मतलब नहीं कोई उन्हें इससे
कुछ लेना तो दूर, माँ खाती पीती भी नहीं अब मेरा
बेटी का खाऐंगे तो जाऐगे नरक में
इस दुनिया को तोड मरोडकर
बनानी चाहिए एक नयी दुनिया
बेटी जिसमें परायी ना हो |"[2]

परंपरागत अंधविश्वासों की ओर कवयित्री इशारा करती है | जो शोषण को बढावा करती है |

---

[1]महादेवी वर्मा - श्रृखला की कडियाँ - पृ 89
[22]नीलेश रघुवंशी - वसुधा अंक 59-60 - पृ 148

4.5 धर्म एवं छद्म नैतिकता का विरोध

दुनिया के सभी धर्मों एवं उसके आधर पर खडी समस्याओं नेस्त्री के प्रति उपेक्षा भाव ही रखा है | हिन्दू धर्म, इस्लामधर्म, ईसाई धर्म, बौद्ध धर्म आदि तमाम धर्मों ने ईश्वर को पुरुष शक्ति का प्रतीक बना दिया | पुरुषप्रधान समाज ईश्वर को भी लिंग भेद करके उसे स्त्रियों की गुलामी केलिए इस्तेमाल करता रहा | मस्ताराम कपूर का कहना है :- “वास्तव में स्त्रियों की गुलामी का सबसे बडा कारण धार्मिक सामाजिक मूल्य और प्रथाएँ ही है और इनके खिलाफ अभियान छेडे बिना स्त्रियों की स्थिति में कोई मूलभूत परिवर्तन करना असंभव है |”[1]

अधिकांश नारीवादी विशेषज्ञों के अनुसारऔरत की लडाई सबसे पहले सर्वशक्तिमान ईश्वर के खिलाफ हुई | ईश्वर ने आदम और हौवा को बनाया और उन्हें एक विशेष फल ना खाने का आदेश दिया |हौवा ने आदम को उस निषिद्ध फल खाने केलिए उकसाया उसने ईश्वर की आज्ञा के खिलाफ प्रथम विद्रोह किया | फलस्वरूप हौवा और आदम को स्वर्ग से निकाले जाने का दंड मिला | आदम के मन में इस मूल पाप की स्मृति बनी रही , और इसकेलिए वह हौवा को कोसता रहा | लेकिन हौवा ने पश्चाताप नहीं किया, ईश्वर से मॉफी नहीं मॉगी | नारी विद्रोह की परंपरा की शुरुआत हम यहाँ से मान सकते हैं|

---

[1]मस्ताराम कपूर - स्त्री परंपरा और आधुनिकता - पृ 32

हमारे पारिवारिक एवं धार्मिक रूढियों ने स्त्रीको बन्दी बनाये रखने केलिए स्त्रीत्व की कई अवधारणाओं का निर्माण किया | जैसे कि असूर्यपश्या होना, एक पतिव्रता होना, पुरुष के अनुशासन में घर के भीतर रहना ,कम बोलना, बाद में खाना आदि | ये सब परंपरा से नारी आदर्श के रूप में समाज में विद्यमान है |

हमारे धार्मिक ग्रन्थ सदा स्त्री को पुरुष की सेवा करने की शिक्षा देती रहती है| रमणिका गुप्ता का कहना है :- वास्तविकता यही है कि भारत में धर्म शास्त्र कभी भी स्त्री मुक्ति की प्रेरणा नहीं बने बल्कि दासता की बेडियाँ पहनाने में उन्होंने सक्रिय भूमिका निभाई है | वैसे तो सभी धर्मों ने कमोबेश ऐसा ही किया लेकिन हिन्दु धर्म ग्रन्थों ने स्त्री की मानसिकता को गुलाम बनाने का जितना बडा अपराध किया है, वह क्षम्य नहीं है |"[1]हिंदुओं के पौराणिक ग्रन्थ स्त्रियों के वास्ते पतिव्रता धर्म पर बल देते आ रहे हैं| ईश्वर की पूजा, उपासना, भक्ति सब पतिसेवा से मिलने की बात बताते हैं|

भारतीय संस्कृति में विवाह एक महत्वपूर्ण प्रथा है | इसका प्रथम उद्देश्य ही धार्मिक कर्तव्यों का पालन है | आजकल परिवार में जो लडका-लडकी भेदभाव दिखाई पडता है, अर्थात् लडके को ऊँचे और लडकी को नीचे दर्जे दिया जाता है उसका मुख्य कारण धर्माचार है | इसप्रकार परंपरा से धर्म के नाम पर नारी सबसे अधिक शोषण की शिकार होती रहती है |

---

[1]रमणिका गुप्ता - स्त्री विमर्श : कलम और कुदाल के बहाने - पृ 27

नब्बे के दशक की हिन्दी कवयित्रियों ने यह समझा कि धार्मिक आचारों का बुरा असर नारी पर हो रहा है | स्त्री की हीनतर स्थितियों का एक कारण धार्मिक रूढियाँ हैं | इसलिए उन्होंने अपनी कविताओं के ज़रिए धार्मिक रूढियों के विरुद्ध आवाज़ उठायी है |

भारतीय संस्कृति नारी को देवता, अबला, श्रद्धा आदि विभिन्न रूपों में देखती है | यशोधरा, लक्ष्मीबाई, पद्मिनी, कस्तूरबा आदि आदर्श नारी पात्रों से उसकी तुलना की जाती है | सदियों से औरों केलिए जीती रहती नारी स्वयं को गौरवान्वित महसूस करती है | पर हमारी सामाजिक व्यवस्था उसे वांछित सम्मान नहीं देती | शकुन्तला गौड शकुन 'स्वयं स्वयं की पहचान' द्वारा पारंपरिक रूढियों पर विद्रोह करती है |

"नारी!
तुम सदैव
औरों केलिए
जीती रहकर भी
स्वयं को
गौरवान्वित महसूस करती रही
इसके बावजूद भी
क्या तुम्हें
वॉछित सम्मान की प्राप्ति

और

सामाजिक श्रृखलाओं से

मुक्ति मिली ?

स्वतंत्र होते हुए भी

तुम

पारंपरिक रूढियों की

चहारदीवारी

में कैद

क्यों

तिल-तिल कर

जल रहे हो |”[1]

हमारी धार्मिक रूढियों ने पत्नीत्व केलिए कई अवधारणाओं का निर्माण किया जैसा कि असूर्यपश्या होना, एकपतिव्रता होना, पति के अनुशासन में घर के भीतर रहना, कम बोलना आदि | परंपरा से हमारे समाज में नारीत्व को सतीत्व का समानार्थी सिद्ध करने का प्रयास ज़ारी है |‘कमलकुमार’ सतीत्व में इसका खुला विद्रोह करती है| उनकी राय में आजकल सतीत्व पति केलिए लबादे की तरह ओढने, खटिया की तरह बिछाने और फुटमैट की तरह पैरों से लथेडने की वस्तु है |

[1]शकुन्तला गौड शकुन - मधुमति मार्च 92 -पृ 133-134

"सतीत्व को

गधे के भार-सा

नहीं ढोया जा सकता |"[1]

समाज कई स्तरों पर प्रगति की ओर बढ रहा है | स्त्री भी उसके साथ कदम पर कदम रखकर आगे बढ रही है | इसके बावजूद आज भी रूढिवादित्व हमारे जीवन का अभिन्न अंग बन रही है| शादीके प्रस्ताव के वक्त वधु पसन्द न आयी तो पुरुष वह संबन्ध अस्वीकार कर सकता है | पर लडकियों को अपनी इच्छा व्यक्त करने का अवसर नहीं दिया जाता है |पितृसत्तात्मक व्यवस्था के इसप्रकार की सास्कृंतिक रूढिवादिता में आजकल की लडकी दम घुट कर जी रही है | वे इसे तोडने का सफल प्रयास करने लगी है | मुँह दिखाई रस्म केलिए प्रस्तुत होने के बजाय रात तक घूमकर निर्भीक हॅसती दौडती आयी तो, निश्चय ही वर पक्ष के लोग उसे पसन्द नहीं करेंगे | कात्यायनी की कविता 'हॉकी खेलती लडकियाँ' इस तथ्य का पर्दाफाश करती है|

"अगर ऐसा न हो तो

समय रुक जायेगा

इन्द्र-मरुत,वरुण सब कुपित हो जायेंगे

वज्रपात हो जायेगा,चक्रपात आ जायेगा

घर पर बैठे

---

[1]कमलकुमार - गवाह - पृ 82

देखने आये वर पक्ष के लोग
पैर पटकते चले जायेंगे |"[1]

अर्थात् हमारी नैतिकता, परंपरा, मूल्य सबका सर्वनाश हो जाएगा, यही परंपरागत समाज की राय है |

परंपरा के प्रति,विशेष रूप से धार्मिक परंपराओं के प्रति विद्रोह समकालीन कवयित्रियों के गंभीर चिन्तन का परिणाम है | क्योंकि उन्हें मालूम है कि समाज में उनकी जो स्थिति है उसका मुख्य कारण धार्मिक रूढियाँ है | नीलेश रघुवंशी 'संतान साते' कविता से धामिक रूढियाँ पर विद्रोह करती हैं | कवयित्री को माँ के द्वारा सन्तानों के कल्याण केलिए किए जानेवाले अनुष्ठान की याद आती है |सात पुए और सात पूडियाँ थाल में सजाकर अपने सन्तानों के कल्याण केलिए माँ पेड की परिक्रमा करते समय उनकी दो बेटियाँ पराये शहर में भूखी बैठी है | वे खाने की अपनी इच्छाको दबाकर ही बैठती हैं |

"पेड की परिक्रमा करते
कभी नहीं थके माँ के पाँव
माँ नहीं समझ सकी कभी
जब माँग रही होती है वह हुआ "[2]

---

[1]कात्यायनी - हॉकी खेलती लडकियाँ -पृ 19

[2]नीलेश रघुवंशी – घर-निकासी – पृ 13

आर्थिक अभाव में जीते रहने पर भी धार्मिक अनुष्ठानों केलिए पैसा खर्च करना हमारी धार्मिक संस्कृति का दुष्परिणाम है | निरंजन क्षेत्रीय का कहना है "कवयित्री का विद्रोह अवमानता या खिलदंडेपन का रूप न लेकर एक गंभीर और उत्तरदायी चिन्ता की तरह कविता में उभरता है |"[1]धार्मिक आचारों ने स्त्रियों को हीनतर स्थिति में ही रखा है |

4.6 बाज़ार के खिलाफ लड़ाई

भूमण्डलीकरण ने औरत के शरीर ,श्रम और सौन्दर्य का सर्वाधिक शोषण किया है |विज्ञापन द्वारा नारी सौन्दर्य को बिकाऊ माल की तरह प्रदर्शित किया | आज उपभोक्ता पर विज्ञापन का इतना प्रभाव पडा है कि आज मॉडल गर्ल के शरीरांग से आकर्षित होकर ही उपभोक्ता माल पसन्द करते हैं| भूमण्डलीकरण के फलस्वरूप नारी शरीर को 'कामोत्पादकमाल' के समान ही उपभोक्ता देखते हैं| तसलीमा नसरिन का कहना है :-इस देश की किसी भी बिकाऊ चीज़ में स्त्री भी एक बिकाऊ माल है | उसकी आँखे, बाल भौहे, होठों की मुस्कान, पीनोन्नत स्तन, उसके सात चक्करों वाले नाच को बाज़ार की बिकाऊ चीज़ों से ज़्यादा महत्वपूर्ण समझा जाता है | ये विज्ञापन व्यवसायी 'माल' से 'औरत' को ज़्यादा अहमियत देने की कोशिश में लगे रहते हैं, पुरुषों के शेविंग ब्लेड, सिगरट, शटिग-सूटिंग, जूता जुराब, शैम्पू साबुन सब कुछ में अनावश्यक रूप से औरत को प्रस्तुत किया जाता है | दरअसल स्त्रियाँ कोई काम नहीं कर रही है, सिर्फ इस्तेमाल की जा रही

---

[1]निरंजन क्षेत्रीय –वागर्थ – अक्तूबर 1998 अंक 43 - पृ 112

है और इस समाज में ज़्यादा इस्तेमाल होना ही उसका मुख्य काम है |"[1]आजकल विश्व सुन्दरी प्रतियोगिताओं में नारी शरीर का सार्वजनिक प्रदर्शन हो रहा है | ये सौन्दर्य प्रतियोगिताएँ स्त्री को सौन्दर्य संबन्धी एक भ्रम में डाल रही है | इसे समझे बिना आजकल की नारी बाज़ार के मायाजाल में फँस रही है |

नब्बे की रचनाकार इसके प्रति सचेत है | अपनी रचनाओं द्वारा इसके दुष्परिणामों के खिलाफ बोल रही है ऐसे रचनाकार इस भ्रम से मुक्त नहीं है |प्रभा खेतान का कहना है :- "चूँकि भूमडंलीय बाज़ार की एक प्रमुख उपभोक्ता स्त्री भी है अत: वह इस भोगवादी संस्कृति का प्रतिरोध बडी आसानी से कर सकती है, हालॉकि भूमडलीकरण प्रचार-तंत्र धुऑधार प्रोपेगंडा के ज़रिए स्त्री-आन्दोलन को कमज़ोर एवं आधिकारहीन करने में लगा हुआ है | परिणाम स्वरूप ऐसी सामान्योक्तियों की भरमार होती जा रही है जो विचारधारात्मक और राजनीतिक शून्यता की ओर इंगित करती है और किसी भी नारीवादी अवधारणा को खारिज करने पर तुली हुई है|"[2]

उपभोगवादी संस्कृति ने नारी जीवन को पहले से अधिक विकृत कर दिया है| सामाजिक अन्याय के विरुद्ध; असांस्कृतिक कार्यवाईयों के विरुद्ध समय समय पर कवयित्रियाँ विद्रोह करती रहती है| अनामिका शिव ने 'और कोई नाम दो'

---

[1]तसलिमा नसरिन – औरत के हक में –पृ 95-96

[2]प्रभा खेतान – उपनिवेश में स्त्री – पृ 34

कविता द्वारा नारी को वस्तु बनाने की सामाजिक एवं उपनिवेशी संस्कृति पर विद्रोह करती है |

“मेरा नाम
वेदना / घुटन/ गुलामी/ करुणा / कलाल की हंडी
भी हो सकता था
एक रिवाज़
या
जूती किसी मर्दाने पॉव की
खरीद और बिक्री
कुछ भी हो सकता है मेरा नाम ”[1]

सुधा गोयल की लडकी इससे मिलती जुलती कविता है| उसका कहना है

“लडकी पैर की जूती है
फट जाए बदल लो
काटे या छोटी हो
नई ले लो
क्योंकि लडकी वस्तु है |”[2]

सज्ञा सिंह की नारी अपनी इस बदहालत अर्थात् बाज़ार के प्रति सजग है | वह गुलामी के विरुद्ध लडने केलिए तैयार है |‘आज़ादी के मतमब’ में संज्ञा सिंह इस तथ्य का पर्दाफाश करती है |

---

[1]अनामिका शिव -साक्षात्कार जून 1992 - पृ 56
[2]सुधा गोयल -आजकल फरवरी 1991 - पृ 23

“नहीं इस बाज़ार की वस्तू नहीं हूँ मैं
मुझे खरीदा और
बेचा नहीं जा सकता कभी
गुलामी किसी हालत में काबूल
नहीं करूँगी मैं
पृथ्वी पर शुभकामनाएँ शेष है अब भी
शेष है प्रार्थानाएँ
मेरे होने की क्षमताएँ शेष है
दुनिया की
संभावनाएँ शेष है अब भी
इस तरह की गुलामी के खिलाफ लडूँगी मैं |”[1]

संज्ञा सिंह की नारी बाज़ार द्वारा उस पर हो रहे शोषण के षडयंत्र से अवगत है | इसके विरुद्ध लडने केलिए वे तैयार हैं, उसकी आस्थावादी दृष्टिकोण नारी मुक्ति केलिए अनिवार्य तत्व है |

4.7 देह मुक्ति का आग्रह

समकालीन सन्दर्भ में यौन शोषण विकराल रूप ले रहा है | गुडिया के साथ खेलनेवाली बच्ची से लेकर थकी हुई बूढी औरत तक यौन शोषण की शिकार हो रही है| शोषण करनेवालों में 13 वर्ष के बालक से लेकर 70 तक के बूढे मर्द हैं |

---

[1]संज्ञा सिंह - वागर्थ सितंबर 97 -पृ 84

आजकल इन्टरनेट , मोबइल फोण, टेलिविज़न, आदि के ज़रिए पोनोग्राफी का व्यापक प्रचार हो रहा है | इनमें यौन इच्छा पैदा करनेवाले दृश्यों की भरमार है | अश्लील साहित्य और अश्लील पत्रिकाओं का भी बढोत्तरी हुई है| शराब और नशीले पदार्थों भी मर्दों की यौन इच्छाओं का बढावा करता है| इसप्रकार आधुनिक जीवन सन्दर्भ में बेटीवाली माँ-बाप तनाव भरी ज़िन्दगी बिताने केलिए विवश होते हैं|

नब्बे के दशक की कवयित्रिओं ने अपनी कविताओं द्वारा समाज में बढ रही यौन शोषण के विरुद्ध आवाज़ उठायी है |कात्यायनी की नारी ,सभ्य समाज में बढ रही इस यौन अत्याचार के विरुद्ध 'शहर को चुनौती' कविता द्वारा अपनाविरोध प्रकट करती है | कविता की नारी नग्न होकर चौराहे पर खडी होती है और पूरे शहर को चौंका देती है ; वह वहाँ तक चुनौती की तरह खडी रहती है |कविता में आखिर भद्रजनों द्वारा नंगी औरत को कुचलने का नेस्तनाबूद करा देने का और मिटाने का आह्वान देती है, क्योंकि ऐसा न करने पर समाज, उनके अनुसार, तबाह हो जाएगा |

"और कोई रोको उसे, दौडे, भागो
कुछ तो करो, नहीं तो क्या होगा
तबाह हो जायेगा यह समाज, भद्रता का कोई नामलेवा
नहीं रह जायेगा

पकडो उसे, मिटा डालो

कुचल दो नेस्तनाबूद कर दो

नहीं तो पूरे समाज पर

बहुत बडा खतरा आ जायेगा |"[1]

पुरुष की बढती नृशंस कामातुरता पर व्यग्य करके कवयित्री हमारे भद्र समाज पर विद्रोह कर रहा है | अरविंदाक्षन की कहना है कि " वह नंगी नहीं बल्कि हमारी संस्कृति नंगी है | उसे मिटाने की कोशिश हमारे भद्र समाज करें फिर भी वह नंगा ही रहती है | मिटती नहीं है |"[2] कविताभारतीय संस्कृति की कपडता की ओर इशारा करती है |

निष्कर्ष

आधुनिक काल में शिक्षा एवं अन्य सामाजिक परिस्थितियों के कारण नारी अपनी बदहालत पर सोचने लगी | साहित्य के माध्यम से वह अपना विद्रोह प्रकट करने लगी| नब्बे क दशक आते ही वह मज़ौदे पुरुषसत्तात्मक समाज के विरुद्ध आक्रोश करने लगी | सामाजिक रूढियों एवं लिगं भेद राजनीति पर प्रश्न करने लगे | प्रगतिशील कहकर नारी के प्रति सहानुभूति की दिखावट करनेवालों पर व्यंग्य करने के साथ साथ वह अपनी स्वतंत्र पहचान बनाये रखने केलिए आवाज़

---

[1]कात्यायनी- सात भाईयों के चंपा -पृ 24

[2]अरविन्दाक्षन - कविता का थल और काल - पृ 65

उठायी| कात्यायनी, अनामिका, चन्द्रकलात्रिपाठी, सुनीता जैन, सुधा जैन, संध्यागुप्ता आदि इसमें आगे हैं|

आर्थिक अभाव को नारी समस्याओं का मूल आधार माना जाता है | औद्योगिकरण के फलस्वरूप कई स्त्रियाँ कामकाजी क्षेत्र में सक्रिय हो गयी | फिर भी अर्थ पर सदा पुरुष का वर्चस्व ही रहता है | कवयित्रियाँ अपनी कविता द्वारा इसके विरुद्ध आवाज़ उठाती है |

हमारी धार्मिक रूढियाँ भी स्त्री को बन्दी बनाये रखने की कोशिश करती है | नब्बे की कवयित्रियों ने धार्मिक परंपराओं के प्रति विद्रोह अपनी कविता में प्रकट किया है | बाज़ार के खिलाफ भी वह अपनी कविताओं में बोल रही है | आजकल यौन शोषण ने विकराल रूप ले लिया है | इसके विरुद्ध भी वह आवाज़ उठा रही है |

पाँचवाँ अध्याय

नब्बे के दशक की कवयित्रियों की जीवनदृष्टि एवं भाषा

नब्बे के दशक की कवयित्रियों की जीवनदृष्टि एवं भाषा

नारीवादी चिंतन का आरंभ पहले ही हुआ था, पर भारत में वह नब्बे के दशक में अधिक ठोस एवं कारगर होने लगा । पूर्ववर्ती दौर की अपेक्षा वह स्त्री-पुरुष संबंध व पारिवारिक संबंध के सीमित दायरे से बाहर आने लगा । वह स्त्री को पुरुष के पूरक के रूप में नहीं स्वतंत्र इकाई के रूप में देखने लगा । अर्थ, राजनीति, इतिहास,संस्कृति सभी उसके दायरे में आने लगे । इस तरह एक अलग नज़रिया स्पष्ट एवं तेज होने लगी और पूरे विश्व को वे अपनी दृष्टि से ऑकने लगी ।

5.1 कवयित्रियों की जीवनदृष्टि

नारी और पुरुष की शारीरिक एवं मानसिक बनावट में अंतर है । इसलिए उनकी संवेदना में भी अंतर है| पुरुष की अपेक्षा नारी में संवेदनशीलता, भावुकता, तथा ममता अधिक है । इस संबंध में अनामिका का कथन है कि “यदि हाल-फिलहाल बायोइंजीनियरिंग में हुए शोधों का साक्ष्य है और उन्हें प्रामाणिक माने तो कहना होगा कि पुरुषों का ‘वाईफेक्टर’ उन्हें स्वभाव से उग्र, दुर्दम्य और विध्वंसक बनाता है । स्त्रियों में यह होता ही नहीं इसलिए वे स्वभावत: शांतप्रिय, स्नेह, कोमल और उच्च मानवीय गुण संपन्न होती है । पुरुषों को यह उच्च मानवीय गुण सतत् प्रशिक्षण से ही पैदा होता है ।”[1] अत: मनुष्य और उसकी भावानुभूतियों

---

1 अनामिका - कविता में औरत -पृ.11

को व्यक्त करने में नारी पुरुष से आगे है । नारी की स्वाभाविकता को, उसकी सहज संवेदना को जगाने में नारी सक्षम है । नब्बे के दशक की कवयित्रियों की कविताएँ इसका सही दस्तावेज़ है ।

इस दशक की कवयित्रियों ने मानव जीवन से जुडे सभी संदर्भों को आंका है । उनकी संवेदना व्यक्तिगत मात्र नहीं, सामाजिक भी है । रमणिका गुप्ता के शब्दों में "ये कवयित्रियाँ परंपरा से हटकर, नारी चेतना, नारी की स्वायत्तता को स्वीकारनेवाली वे प्रबुद्ध स्त्रियाँ हैं । जो अपने यथार्थ के रू-ब-रू है और केवल अपने ही यथार्थ को नहीं समाज के यथार्थ को भी अपनी संवेदना से पकडती है "[1] कात्यायनी की कविता इसका सबसे बडा प्रमाण है ।

नब्बे के दशक की कवयित्रियों का संवेदनशील मन जीवन के हर पक्ष को परत दर परत उजागर करने में लगा रहा है । अपनी कविता के माध्यम से वे जीवन के विभिन्न पक्षों को शब्द-बद्ध करती आ रही हैं । पर इन लेखिकाओं का वैचारिक दृष्टिकोण यह है कि स्त्री के अनुभव केवल स्त्री के ही हो सकते हैं क्योंकि ये सब उसके तन मन तथा विशिष्ट शारीरिक स्थिति से जुड़े हुए है । इसी कारण से वह अपने अनुभव और अनुभूतियों को प्रामाणिक ढंग से लिख सकती है । कवियित्रियों की कविताओं में मुख्यत: उनकी अपनी वैयक्तिक अनुभूतियों का ही चित्रण मिलता है । अनामिका ने लिखा है कि "वैयक्तिक यातनाओं का सामाजिक संदर्भीकरण उनके प्रतिकार का एक आजमाया हुआ अस्त्र है ।"[2]नारी होने पर,

1 रमणिका गुप्ता – स्त्री विमर्श कलम और कुदाल के बहाने - पृ.78

2 अनामिका – कविता में औरत -पृ.8

वैयक्तिक अनुभूतियाँ समान होने पर, उनकी रचनाओं में भी एकरूपता आना स्वाभविक है। नब्बे के दशक की कवयित्रियों ने अपनी अस्मिता की तलाश करके, अस्मिता को प्रतिष्ठित करने का प्रयास करके, अपनी विभिन्न नजरियों को भी अपनी कविताओं में प्रस्तुत किया है । आजकल, वह अपने को उपेक्षिता बनानेवाली शारीरिक निर्मिति पर गर्व करती है ,अपने मातृत्व की अनुभूति का आस्वादन कर रही है। अपने उदात्त सखीभाव को वह व्यक्त कर रही है और स्त्री-पुरुष करा रही है पूरक ईकाई पर विश्वास ।

5.1. 1 मातृत्व की भावना

मातृत्व समाज में नारी का सर्वाधिक मान्य और प्रभावशाली रूप है । क्योंकि माँ सृष्टि की आधारशिला है । माँ नहीं तो यह समाज भी नहीं होता । रमणी रूपी नारी जब माता बनती है, उसके संपूर्ण व्यक्तित्व में परिवर्तन दृष्टिगोचर होता है । महादेवी वर्मा का कहना है:- “उसके स्त्रीत्व के विकास तथा व्यक्तित्व की पूर्णता केलिए संतान साध्य है और रमणीत्व साधन मात्र । इसलिए प्रत्येक रमणी माता बनकर एक परिवर्तित व्यक्ति बन जाती है ।”[1] मातृत्व स्त्री सहज विशिष्ट अनुभूति है जो स्वयं नारी की दृष्टि में उसके जीवन की सार्थकता होती है । क्योंकि इससे ही मानव वंश आगे बढ़ता है । मानव की जन्मदात्री होने के कारण नारी के विभिन्न रूपों में माता रूप ही समाज में सबसे सम्माननीय माना जाता है । मातृपद की प्रतिष्ठा पर समाज में कोई मतभेद नहीं है ।

---

1 महादेवी वर्मा – श्रृंखला की कड़ियाँ -पृ.76

नारी की सबसे महत्वपूर्ण जिम्मेदारी माँ के रूप में होती है । जब बच्चा जन्म लेता है, तबसे लेकर बड़े होने तक उसके व्यक्तित्व विकास में माँ की भूमिका सराहनीय होती है । बचपन में बच्चा अधिक से अधिक समय माँ के ही समक्ष रहने के कारण उसके संस्कार प्रभाव बच्चों पर अवश्य पडता है । वही बच्चों के प्रथम गुरू है, जो उसे संस्कार की शिक्षा देती है । संस्कारवान माँ बच्चे में प्रारंभ से ही उच्च आदर्श स्थापित कर उसे योग्य नागरिक बनने की शिक्षा प्रदान करती है । उत्तम आचार-विचार और संस्कारों से संपन्न माँ का, बच्चे के मन पर सीधा असर पड़ता है | इसलिए बच्चे का सर्वांगीण विकास केलिए माँ को परिवार में गरिमामय आचरण प्रस्तुत करना चाहिए | ऐसा कहा जा सकता है कि माँ के कंधों पर ही परिवार रूपी इमारत खडी है | परिवार को चलाने और विकसित करने में उनकी अहम भूमिका है|

मातृत्व की गरिमा की ओर लड़के की अपेक्षा लड़की ही अधिक आकर्षित होती है | इसके संबंध में सीमोन द बोउवर का कहना है :- “बचपन से माँ के संपर्क में ही ज़्यादा रहने के कारण लड़की माँ की सत्ता को ही श्रेष्ठ समझती है | वह माँ की नकल करती है | गुडिया न केवल उसका प्रतिरूप होती है, बल्कि उसका संतान भी | गुडिया को डाँटने सज़ा देने या प्यार करने में वह एक ही साथ स्वयं भी होती है और अपनी माँ भी | वह अपने आप को सज़ा भी देती है और अपने में माँ की गरिमा को स्थापित करती है, कहने का तात्पर्य यह है कि वह गुडिया के माध्यम से वैयक्तिक एकात्मकता और अभिपुष्टि का अनुभव करती है|“[1]

---

1 सीमोन दि बोउवर – स्त्री उपेक्षिता प्रभाखेतान(अनुवादक) –पृ.136

आधुनिक काल में बदलते परिवेश के अनुसार माँ के रूप और स्वभाव में भी परिवर्तन आया है | शिक्षा के फलस्वरूप वह स्वतंत्र चिंतन करने लगी है | परिणामस्वरूप वह अपनी इच्छा से ही माँ बनना चाहती है , दूसरों के दबाव में आकर माँ बनना स्वीकार नहीं करती | वह मातृत्व की वैधता केलिए विवाह की मोहर लगाना आवश्यक नहीं समझती | इस प्रकार मातृत्व के स्वरूप में बदलाव आया है |

अधिकांश परिवारों में माँ और बच्चों के प्यार से ही जीवन की धारा बहती चलती है | वहाँ पिता की भूमिका आतंक पैदा करनेवाला पुरुषवर्चस्व बन जाती है | कात्यायनी की कविता 'माँ केलिए एक कविता ' इस तथ्य का उद्घाटन करती है | इस कविता की माँ अलसुबह से लेकर रात तक काम करके बहुत थकी हुई दिखाई पडती है | तमाम परेशानियों और बेचैनियों को सहते हुए भी वह अपने बच्चे को प्यार भरी लोरी सुनाती है :-

"दिन भर के थके हुए हाथ
घूमते है अलस भाव से
एक नन्हे शरीर पर
भय को धूल की तरह पोंछते हुए
प्यार भरी उनींदी-सी लोरी
उम्मीदें गाने लगती है |"[1]

---

1 कात्यायनी – सात भाईयों के बीच चंपा – पृ.36

कात्यायनी ने माँ की गर्भावस्था की सुंदर अनुभूतियों का चित्रण भी किया है | 'किरणों के बीच भूमिगत' शीर्षक कविता में गर्भवती युवती के अर्न्तमन का विश्लेषण कवयित्रि ने सुंदर ढ़ंग से किया है | दुर्वह गर्भभार संभालती युवती, मातृत्व का दुर्लभ आनंद महसूस कर रही है | वह सदा आगत शिशु के स्वागत केलिए आतुर है | वह उसके बारे में सोचती रहती है और उसकेलिए गीत गाती है ;

" वह गाती है और सोचती है
थककर वह हॉफती है और सोचती है
धौंकनी की तरह चलती हैं उसकी सॉसें
भीतर कहीं मच रही है
एक आत्मीय पीडादायी उथल-पुथल
ढलान पर फिसलन से सचेत
माँ जो धारण करती रही है जीवन बार-बार
अपनी कोख के रहस्यमय अंधेरे में
सोचती है वह अपने अजन्मे शिशु के
भविष्य के बारे में |"[1]

आज का स्त्री-चिंतन अपने शरीर को, मातृत्व को बाध्य नहीं मानता है, उसे अपने वैशिष्ट्य के रूप में देखा जाता है | अनामिका की 'ईश्वर' कविता भी

1 कात्यायनी – जादू नहीं कविता - पृ.181

इस तथ्य का पर्दफाश करती है | माँ बन जाने के अनमोल क्षण को यानी मातृत्व की कसौटी को कवयित्रि प्रस्तुत कर रही है :-

" बार बार छाती में
उछल रही थी डॉलफिन मछली
सॉसों से गेंद खेलती "[1]

मातृत्व संबंधी इस तरह की अनुभूतियों को प्रस्तुत करना काव्य जगत में नयी बात है | सुधीश पचौरी का विचार है "यह अनामिका प्रजनन की क्षमता को सेलिब्रेट कर एक नया विमर्श गढ रही है |"[2] अनामिका इस कविता के माध्यम से प्रजनन की क्षमता का आस्वादन कर रही है |

अनामिका की 'गंध' कविता भी मातृत्व की स्थापना करती है | इस कविता की माँ घर गृहस्थी में अपने को पूर्ण रूप से समर्पित नारी है | उसके हर एक अंग से विभिन्न प्रकार की गंध का अहसास होता है | उसके नाखूनों से बेसन की खुशबू आँखों से मानस की जर्जर प्रति से उठती हल्की सी खनिज गंध, गर्दन के पीछे से पीले मकोय फूलों की गन्ध, उसके तलबे से गरम पावरोटी की भाप का अहसास होता है | उसकी छाती से मातृत्व की स्थापना का अहसास होता है |

---

1 अनामिका – बीजाक्षर –पृ.68

2 सुधीश पचौरी –मधुमती (अगस्त-सितंबर 1999) - पृ 113

पुरानी वस्तुओं को सहेजना और उन्हें स्मृति में संजोना माँ की संवेदनशीलता का परिणाम है | सविता सिंह के ‘पुराना संदूक’ की माँ का प्रिय शौक पुरानी वस्तुओं को सहेजना है :-

" संदूक बंद करती है माँ
जैसे एक सदी समाप्त हुई हो
जैसे देख और सूंघ लिया गया हो
समय के गर्भ में छिपा
जीवन और इतिहास
त्रासदी सुख और विस्मय का मिश्रण
जैसे समझ लिया गया हो आनेवाला दौर
विपद गाथाओं का " [1]

हिन्दी कविता के क्षेत्र में माँ पर केन्द्रित सबसे अधिक कविता लिखने का श्रेय सुनीता जैन को प्राप्त है | माँ के मरने के बाद माँ पर अस्सी से भी अधिक कविताएँ उन्होंने लिखी हैं | उनके ‘जाने लड़की पगली’ संकलन मात्र माँ पर आधारित कविताओं का है | उसे पढ़ने से ऐसा लगता है कि माँ की मृत्यु के बाद कवयित्रि अपने जीवन को अधूरा महसूस करती है | माँ से संबंधित सुनीताजी की कविताओं के बारे में डॉ. हरिमोहन का विचार है “जैसे माँ के बिना न घर हो सकता है, न बच्चे, वैसे ही लगता है माँ के बिना न ये कविताएँ भी नहीं हो सकती

1 सविता सिहं –अपने जैसा जीवन- पृ.50

थी | माँ मात्र एक शब्द नहीं, न एक औपचारिक संबंध | वह हर जगह उपस्थित रहती है |"[1] सुनीताजी के द्वारा हरिमोहनजी माँ की विराटता का उद्घाटन करता है |

आज की सुविधाभोगी समाज में हमारी सारी पारंपरिक मान्यताएँ नष्ट हो रही है | बच्चे बड़े होकर अपने कार्यों में व्यस्त होते समय, वे चाहकर भी माँ की ओर ध्यान नहीं दे पाते है | वे माँ को निश्चित तिथि पर पैसे भिजवाकर निश्चिंत हो जाते हैं | पर माँ के मन में बेटे को देखे एक दीर्घ अंतराल हो चुके की आतुरता हैं | इसप्रकार माँ बेटे से सदा घायल होती रहती है | जिसने कभी प्रभु से मनौती माँगकर बेटे माँगे थे और उनको जन्म देकर अत्यंत प्रसन्न हुई थी | जब बेटे पढ़ने और नौकरी करने केलिए चले गये, तब वह दहलीज पर बैठकर उनके कभी-कभार आने की प्रतिक्षा करती रहती है |

"आते नहीं कभी अब जो
कभी कभार भी मिलने
आते है तो सौ कामों से |"[2]

सुनीताजी ने माँ और बेटी के बीच के गहरे संबंधों को भी अपनी कविताओं में व्यक्त किया है | जब माँ नहीं रहती, तब बेटी को एक खालीपन महसूस होती है

1 डॉ हरिमोहन – वागर्थ अक्तूबर 1997
2 सुनीता जैन – सीधी कलम सधे न –पृ.76

| सन्दूक जैसे माँ की प्रिय वस्तुओं के साथ बेटी की अपनापा को भी कवयित्रि ने चित्रित किया है| अपनी कविताओं में माँ के बहाने स्त्री का, उसकी गहन पीडा का विस्तृत संसार समाया है|

सुनीता जैन के समान कुसुम अंसल ने भी माँ से संबंधित कई कविताएँ लिखी हैं | वे एक ऐसे कवयित्री है जिनको मातृस्नेह बचपन से ही खो गयी थी| उनकी राय में माँ नहीं तो बच्चे का बचपन नहीं होता| क्योंकि बचपन का सारा सुख एवं लाड प्यार माँ से संबंधित होता है | उनका 'बचपन' कविता इसकी ओर इशारा करती है |

"कौन सा बचपन
तुम्हें लगता है मेरा कोई बचपन था
गर्भस्थ शिशु का
फिर मौत का ही तो अंधेरा था
जो उम्र भर मेरे साथ साथ चला है |
एक मातृहीन छोटी लड़की का
कोई बचपन होता है ?"[1]

माँ-बच्चे का नाभि संबंध अटूट है | इसी संबंध के कारण माँ भी मृत्यु के कई साल बीत जाने पर भी कवयित्रि को माँ के अंतिम दिनों की विदा वेला मन में टिकती है | कुसुम अंसल की 'माँ' कविता में इसका चित्रण है |

---

1 कुसुम अंसल – मेरा होना-पृ.11

“कहते.....हर शरीर में

एक विद्युतधारा जैसी बहती है जो

माँ की नाभि से शिशु की नाभि तक .....

अटूट संबंध गढती है

मुझे भी लगता है....

मौत के अंतिम दिन

चिरंतन विदवेला में

छुआ होगा माँ ने मेरे नन्हे जिस्म को

बुदबुदाया होगा लाड करने का कोई

स्नेहिल गीत |”[1]

माँ की लाड-प्यार अनश्वर है | उनकी मृत्यु के बाद भी वह बच्चे के मन में टिकती रहती है | उसी प्रकार माँ को भी अपने बच्चे की मृत्यु से बडा संकट और किसी विषय पर नहीं होता | गगन गिल की कविता ‘कंजिका कुछ विलाप’ दर्दभरी मातृहृदय का विलाप है | छ: साल की उम्र में उसकी बच्ची कनू की मृत्यु हो गयी थी | बच्ची की मृत्यु के चार वर्ष बाद भी उसकी यादें गगन गिल को पीछा करती है :-

“उसके मूँह में अभी दूध के दाँत थे

चूहा नहीं आया था कुतरने

उन्हें जब हमने उसे जलाया

उसके लंबे बाल जब जले बडी

1 कुसुम अंसल – समय की निरंतरता में –पृ.13

लडकियों से हो गये थे

चिता पर रखी वह किसी सती जैसी लगती थी |”[1]

बच्चे की मृत्यु माँ के पूरे जीवन को बरबाद करती है | उसके जीवन की खुशी सदा केलिए नष्ट हो जाती है| जनने का दर्द सहनेवाली माँ, बिछुडने की टीस सह नहीं सकती | शाशि शर्मा की ‘माँ’ इस तथ्य की ओर इशारा करती है :-

“ सब काम पर चले गए
सबने खाना खा लिया
सब बातों में मशगूल हो गए
जनने का दर्द
जब तुमने सहा है
बिछुडने की टीस भी तो
तुम्हीं सहोगी
माँ |”[2]

माँ केलिए अपने बच्चे की मृत्यू जीवन की सबसे बडी त्रासदी है | यह त्रासदी उनके पूरे जीवन को प्रभावित करती है |

---

1 गगन गिल – अंधेरे में बुद्ध -पृ.82

2 शशि शर्मा – मौसम से कह दो -पृ.31

परिवार के सभी सदस्यों के प्रति माँ सदा चिन्तित है | विशेष रूप से अपनी बेटियों के प्रति | बेटियाँ खुशी में है तो वे भी खुश है , बेटियाँ दु:खी है तो वे दु:खी होती है | क्योंकि एक स्त्री होने के कारण स्त्रियों के दु:ख से वे परिचित है वे उसे आसानी से जानती है और समझती है | अपनी बेटियों को दुर्दिनों में धैर्य भी प्रदान करती है |

‘एक उम्र के बाद माँएँ ’कविता में गगन गिल ने इसका चित्रण किया है :-

“ अक्सर उन्हें हिम्मत देती
कहती है माँएँ
बीत जाएँगे, जैसे भी होंगे
स्याह काले दिन
हम है न तुम्हारे साथ |”[1]

जिस माँ ने अपने बच्चों को नौ महीने पेट में रखकर, जन्मकर और फिर पाल-पोस कर बडा किया, उस माँ के बच्चे ज़रूर उनकी याद करेंगे | नब्बे की कवयित्रियाँ अपने माँ के प्रति अटूट संबन्ध रखनेवाली है |

1 गगन गिल – एक दिन लौटेगी लड़की -पृ.32

5.1.2 प्रेम की भावना :-

प्रेम करना मानव मन का सहज स्वभाव है | आदिम मानव से लेकर मानव में यह इच्छा कायम है | स्त्री-पुरुष परस्पर प्यार करना और प्यार पाना चाहते है | प्यार संबन्धी महेश कटारे का वक्तव्य है : "भारतीय शास्त्र परंपरा में प्रेम एक भाव है जिसका विस्तार आसक्ति, काम, प्रीति, वात्सल्य आदि से दया तक होता है "[1] प्राचीन काल से लेकर कवियों ने प्रेम को कविता का विषय बनाया है| इसकी अपेक्षा आधुनिक काल में प्रेम का स्वरूप बदल गया है | पहले तो प्रेम को सफलता का प्रतिमान माना जाता था | लेकिन आजकल सफलता प्रेम का प्रतिमान बन गया है | पहले प्रेम केलिए जान भी दे दी जाती थी |

नब्बे की कवयित्रियों ने प्रेम जैसी कोमल संवेदना को भी शब्दबद्ध किया है | उनकी प्रेमाभिव्यक्ति भिन्न- भिन्न स्तर पर हो गयी है | कमल कुमार का विचार है :- "प्रेम को ये पीढ़ी भावनाओं की बाढ़ नहीं मानती | एक स्वतंत्रता का भाव मानते है | प्यार एक समझ,संवाद और साथ होने की स्थिति है | इसमें डूबने की ज़रूरत नहीं| ना ही इसके लिए किन्हीं शर्तों का पूरा करना अनिवार्य है |"[2] नब्बे की कवयित्री स्वच्छंद प्रेम में विश्वास करनेवाली है | उदाहरण के लिए 'गवाह' कविता की पंक्तियं देखिए: "तुम्हें देह दृष्टि नहीं

---

1 महेश कटारे- वसुधा पृ.245

2 कमल कुमार – नये आयामों को तलाशती नारी -पृ.41
(सं दिनेशनंदिनी डालमिया, रश्मि मलहोत्रा)

मेरी दृष्टि
मेरे मैं मुझसे प्यार करना होगा
मैं आऊँगी नई संवेदना नई स्फूर्ति
नए स्पंदन की तरह
शताब्दियों से रुकी ठहरी
तुम्हारी संवेदना को
निखारती तपाती तराशती "[1]

कमल कुमार की प्रस्तुत कविता में नायिका प्रेम संबंधी अपना विचार स्पष्ट करती है | वह अपनी पहचान देह दृष्टि से परे मानती है | वह नये युग की प्रेमिका है

आजकल का प्रेम क्षणिक है, दैहिक अधिक है | कात्यायनी ने भी इसका पर्दाफाश किया है | उनका कहना है :-

" चार वर्षों से
चाह रही हूँ
भावुक होना
कुछ देर केलिए............
समय नहीं मिलता
पर प्रेम की एक कविता
लिखने केलिए
ज़रूरत नहीं भावुक होने की

1 कमल कुमार – गवाह -पृ.51

जैसे कि भावुक हुए बिना
करते है आज प्रेम "[1]

आज प्रेमी-प्रेमिका के बीच आत्मीय संबंध नहीं होता है | मौके के अनुसार मिलना-जुलना ही आज का प्रेम है| प्रेम का विजय सफलता में ही होती है | पर आजकल प्रेम असफल होता रहा है | सविता सिंह की कविता 'असफल होता प्रेम' इसका सही दस्तावेज है :

" हवा निश्चित ही ठहरी हुई
पृथ्वी के वक्ष पर कहीं
पत्तों के संसार में नहीं है कोई हलचल
पक्षी भी डोलते नहीं बैठे ही काठ जैसे
सिर्फ मन डोलता है
प्रेम असफल होनेवाला है
आज दोपहर बाद नहीं आएगा
क्षणों से भी प्रिय मेरा कोई अपना |"[2]

इस प्रकार प्रेम में प्रकृति का भी महत्वपूर्ण भूमिका है | नीलेशजी के ‘धूसर गहरे उदास रंग’ कविता में नायिका की विरह वेदना का चित्रण है | प्रिय के विरह के कारण उसका उदास मन महसूस करती है कि वह एक गहरी खाई में धँसती जा रही है | हर दिन संध्या होते ही उसे बहुत खामोशी का अनुभव होता है |

---

1 कात्यायनी – जादू नहीं है कविता -पृ.96

2 सविता सिहं – अपने जैसा जीवन -पृ.93

"जब कभी चलती है तेज हवा
मुझे याद आते है
वे जिन्हें भूल जाना चाहिए
जो नहीं मिलेगे अब कभी
वे जो गये नहीं थे
पराये तो कतई नहीं"[1]

प्रेम को प्रकृति भी प्रभावित करती है | साथ ही समय का भी महत्वपूर्ण स्थान है | कभी-कभी प्रेमी की व्यस्तता प्रेमिका के मन में उदासी छाया फैलाती है | उसकी ओर इशारा करती है 'कुसुम असंल' की 'समय' कविता:-

"समय का हम उपयोग करते है
फिर भी समय न तुम्हारे पास होता है ..... न मेरे
तुम अपनी व्यस्तताओं की घडियाँ गिनते हो
मैं अपनी उदासी के पल ....
शायद यही कारण है ......
समय के भीतर अनिवार्य है दु:ख |"[2]

प्रेमिका के कथन में प्रेमी की व्यस्तता के कारण छाई उदासी का संकेत है पर प्रेम में ऐसी स्थितियों से गुज़रना पड़ता है | वियोग की स्थितियों से गुज़रते गुज़रते होनेवाले संयोग में आनंद की मात्रा अधिक होती है |

---

1 सविता सिहं- अपने जैसा जीवन - पृ.93

2 कुसुम अंसल – समय की निरंतरता में -पृ.7

प्रेम में यौन संबंध की भूमिका महत्वपूर्ण है | पर भारतीय संस्कृति में विवाह से पहले यौन संबंध अनैतिक माना जाता है | नैतिकता यानी मनुष्य के आचरण का संचालन करनेवाली समाज सपेक्ष नियमावली के संबंध में रमणिका गुप्ता का विचार है " यह सही है कि भारत में स्त्री केलिए नैतिकता का मतलब उसकी यौन शुचिता है और यह भी कि स्त्री की नैतिकता उसकी देह से शुरू होकर देह पर खत्म हो जाती है |"[1] उत्तर आधुनिक दौर में मनुष्य के नैतिक मूल्यों में भारी परिवर्तन हुआ | वह स्वयं अपने नैतिक मूल्यों का निर्माण करने लगा | वह नैतिकता के निर्धारण में समाज का हस्तक्षेप स्वीकार नहीं करता |

नब्बे के दशक की कवयित्रियाँ भी नैतिक रूढ़ियों से मुक्ति चाहती है | वे नैतिकता के पुराने मानदण्डों को तोडकर अपने जीवन के अनुकूल नये मानदण्डों का निर्माण करती है | वे नारी पुरुष के स्वच्छन्द प्रेम पर विश्वास करती है | उनकी कविताओं में हम उच्छृखल एवं उनमुक्त प्रेम एवं काम संबंध देख सकते है | रमणिका गुप्ता की कविताएँ इसका उत्तम निदर्शन है | बलदेव पाण्डेय का कहना है "कवयित्री केलिए शारीरिक शुचिता या किसी एक परम पुरुष के प्रति एकांतिकता कोई मायने नहीं रखती | प्रेम का उत्कर्ष उसी मुक्तिक्षण में जीने और खास क्षण में ही संपूर्ण मादा के रूप में साकार होकर विसर्जित हो जाने में है | वहाँ किसी कुंठा या वर्जना केलिए कोई स्थान नहीं है |"[2] रमणिका गुप्ता की कविता 'धरती के आइने में' में स्वच्छंद प्रेम एवं दैहिक संबंधों को यों चित्रित किया है :-

---

1 रमणिका गुप्ता (स्त्री और नैतिकता) – नागपाश में स्त्री –पृ.79

2 बलदेव पाण्डेय (संपादकीय) – तुम कौन (रमणिका गुप्ता) –पृ संपादकीय

“आदम का यथार्थ
कल्पना की ईव से
लिपट कर
प्रणय की ग्रथियों को खोल देता है
मैं और तू
प्यार भावना और मॉसलता का भेद भूल
दूर कहीं
अपनी नंगी परछाईयों को लिपटते देख
लाज से आँखें बंद कर लेते है “[1]

बदलते परिवेश के अनुसार प्रेमभावना में भी बदलाव आया है | नब्बे की कवयित्रियाँ उम्र, जाति, धर्म आदि की चिंता न करके स्वच्छंद प्रेम में विश्वास रखती है |

5.1.3 देह की पहचान

‘नारी सिर्फ शरीर है’ पितृसत्तात्मक समाज का यह प्रचलित दृष्टिकोण है | पुरुषवर्चस्ववादी समाज केलिए स्त्री शरीर आनंद पाने का साधन मात्र है | नारीवादी चिंतकों के अनुसार स्त्री की समाज में दोयम दर्जे की स्थिति का मुख्य कारण उसका शरीर है | क्योंकि पुरुष सदियों से स्त्री पर वर्चस्व स्थापित करने का कारण उसकी विशिष्ट शारीरिक संरचना और उसकी प्रजनन की क्षमता है |इस विशिष्ट शारीरिक संरचना के कारण पुरुष को नारी सक्रिय न होने पर भी

1 रमणिका गुप्ता –तुम कौन –पृ.47

उसके शरीर से संभोग संभव है | पुरुष द्वारा नारी पर हो रहे यौन शोषण का आधार भी यह है | नारी के शरीर के संबंध में सीमोन द बोउवर का विचार है कि “औरत पुरुष की तरह एक शरीर ज़रूर है, किंतु उसका अपना शरीर कुछ ऐसा है जिसपर उसका नियंत्रण नहीं रहता | वह उसके स्व से अन्य रहता है | औरत अपने शरीर के अलगाव को गर्भधारण के समय और गहराई से महसूस करती है |”[1] अपने को भोग्या और उपेक्षिता बनानेवाली शारीरिक निर्मिति को प्राचीन काल से ही नारी ठुकराती रहती है |

नब्बे के दशक की नारी अपनी शारीरिक निर्मिति को ठुकराने के बजाय आस्वादन करने की ओर उन्मुख होने लगी | अनामिका, गगन गिल,कात्यायनी, नीलेश रघुवंशी आदि कवयित्रियों ने अपने देह संबंधी कई कविताओं की सृजन की | कविता के क्षेत्र में देह संबंन्धी कविताओं का महत्व इसलिए भी है कि स्त्री देह से जुडे ऐसे अनुभव जिन्हें केवल स्त्री ही व्यक्त कर सकती है | क्योंकि यह स्त्री का अपना अनुभव है | इस संदर्भ में महादेवी वर्मा की उक्ति समीचीन लगती है :- “ पुरुष के द्वारा नारी का चरित्र अधिक आदर्श बन सकता है, परंतु अधिक सत्य नहीं, विकृति के अधिक निकट पहूँच सकता है, परंतु यथार्थ के अधिक समीप नहीं | पुरुष केलिए नारीत्व अनुमान है,परंतु नारी केलिए अनुभव”[2] |जब स्त्री देह विमर्श की कविताएँ लिखती है,तब वह वास्तविक धरातल पर उतरकर अपने अनुभव का सही चित्रण ही प्रस्तुत करती है |

---

1 सीमोन दिबोउवर – स्त्री उपेक्षिता (अनुवाद) -पृ.35

2 महादेवी वर्मा – श्रृखला की कडियाँ -पृ.63

नब्बे के दशक की कवयित्रियों में अपनी प्रजनन की क्षमता को भी आस्वादन योग्य बनाने की शक्ति है | 'ईश्वर' कविता में अनामिका ने प्रजनन के समय की नारी के मानसिक शारीरिक हालतों का उसीप्रकार चित्रण किया है |

"यह मेरा सातवाँ था
ठीक-ठीक कहिए तो आठवाँ
इनको जानकर थोडा पछताई भी थी मैं
खून से लिथडा हुआ
यह मेरी जांघों के बीच पड़ा था
आँखें खुली नहीं थी
नाक कटी नहीं थी
कुछ था जो नहीं था
और कुछ नहीं था जो था
ऐंठ रहे थे मेरे पाँव
बार बार छाती में
उछल रही थी डाल्फिन मछली"[1]

अभी तक पितृसत्तात्मक समाज ने स्त्री के मातृत्व को उसकी दुर्बलता के रूप में प्रस्तुत कर रहे थे | पर अनामिका अपने शरीर के दावे को पेश करके प्रजनन का आस्वादन कर रही है | सुधीश पचौरी का कहना है "स्त्री देह के प्रजनन के चयन का विमर्श जो अब तक स्त्री के खिलाफ चलाया गया था | उत्तर

1 अनामिका –बीजाक्षर -पृ.28

आधुनिक वृत्तांत में यही ‘प्रतिमुख’ कह दिया गया है | देह की वापसी के बाद देह का दावा है |प्रजनन के चयन का दावा | अनामिका की उक्त कविता देह के दावे को जबर्दस्त ढ़ग से पेश करती है | कविता में इसका सेलिब्रेशन है |”[1] इसप्रकार की अनुभूति को इंदु जैन ने भी अपनी ‘सृजन, कविता में स्पष्ट किया है | केवल स्त्रियाँ ही इसप्रकार की अनुभूति लिख सकती है :-

“सब सो रहे
जाग रहा है एक घाव टीसता हुआ
अकेला सबसे कटा
सुन्न सुइयों के घेरे में बंद
देह का अनजान हिस्सा
यह खुली आँख देख रही बंद पलकों को
यह खुला कान सुनने की कोशिश में है
कराह से उठती कदमों की आवाज़ |”[2]

माँ बनने की ख़ुशी को यहाँ कवयित्री स्वीकार करती है, वह उसे बुरे नज़रिए से देखना नहीं चाहती है|

अनामिका नारी सहज देह संबन्धी अनुभूतियों के चित्रण में विशेष क्षमता रखनेवाली कवयित्री है | उनकी ‘अंतसत्तवा’ इसका उत्तम निदर्शन है | इसमें

1 सुधीश पचौरी – मधुमती अगस्त –सितंबर 1999
2 इंदु जैन – सबूत क्यों चाहिए – पृ .22-23

उन्होंने गर्भावस्था में नारी सुलभ अनुभूतियों को उसी ढंग से चित्रित किया गया है | वास्तव में गर्भाधारण एक थकावट का काम है, जिसे हर स्त्री छत्तीस हपतें महसूस करती है | पर अनामिका केलिए नारी विशेष की यह अनुभूति थकावट का काम नहीं है :-

"मेरे भीतर कुछ चल रहा है
नहीं षडयंत्र नहीं, तंत्र नहीं, मंत्र नहीं
क्या पता क्या
पर कुछ घट रहा है
जैसे घटती है घटना कुछ घट रहा है
नहीं बढ़ रहा है भीतर-भीतर
बढ़ रहा है, जैसे बढ़ती है नदी
या कि वृक्ष |"[1]

कात्यायनी ने भी गर्भावस्था का आस्वादन किया है | वह माँ आगत शिशु के स्वागत केलिए आतुर है | वह उसके उज्वल भविष्य के बारे में सपना देखती है|

"महसूस करती है वह
स्तनों में उतरते दूध का दबाव
अजन्मे शिशु की अंगडाइयाँ

1 अनामिका- बीजाक्षर –पृ.29

उसकी नन्ही मुट्ठियों का तनाव

और क्षण भर केलिए

बंद कर लेती है अपनी आँखें |”[1]

नीलेश रघुवंशी ने भी नारी देह की अनुभवात्मक संवेदना का वर्णन किया है | उन्होंने ‘एक अजन्मे शिशु के संवाद में’ गर्भ में बच्चे के हिलने डोलने की भी भाषा को संवाद द्वारा व्यक्त करती है | मातृत्व की इसप्रकार की जैविक अनुभूति के बयान नीलेश ने नाटकीय शैली में प्रस्तुत किया है |

स्त्री देह से जुडा रजोस्राव समाज में अस्पृश्य माना जाता है | साहित्य में भी मासिक-स्राव वर्जनीय विषय है | नारी केलिए मासिक स्राव हर महीने में आनेवाले अनचाहे अतिथि है | क्योंकि इस समय हॉरमान ग्रंथियों के अधिक सक्रिय होने के कारण अधिकतर स्त्रियों में इस पूरे दौर में काफी परेशानी के लक्षण प्रकट होते है | अनामिका अपनी कविता ‘प्रथमस्राव’ में प्रथम रजोस्राव के अनुभव को एकाग्र करती है, वह उस सौंदर्यानुभूति को रचती है |

“उस माँद में झाँककर देखूँ तो

दीखती है एक कोई लड़की

कुण्डलिनी-सी जगी बैठी

पलंग पर

---

1 कात्यायनी – जादू नहीं है कविता –पृ.182

उसकी सफेद फ्राक

और जॉघिए पर

किसी परी माँ ने काढ दिए है

कत्थई गुलाब रात-भर में |"[1]

ऋतुमति स्त्री का वर्णन करके अनामिका ने रजोस्राव जैसे समाज के वर्जित अवस्था को भी अपनी कविता का विषय बना दिया है | इसके संबंध में परमानंद श्रीवास्तव का कहना है :- "स्त्री जीवन में प्रकट और गोपन के खेल में अचानक 'प्रथम स्राव' का वह क्षण आता है जो कूतूहल और दु:ख और आनंद के संशिलष्ट अनुभव के रूप में क्रमश: स्त्री गाथा बनता जाता है | स्त्री का मिथक और स्त्री का यथार्थ |"[2] गगन गिल ने अपनी कई कविताओं में देह राजनीति (बयोपोलिटिक्स) को काव्य विषय का आधार बनाया है | देह के स्वीकार से ही देह राजनीति शुरू होती है | विशेष अवसर पर (रजोस्राव आदि) स्त्री शरीर में होनेवाले हॉरमोन परिवर्तन के कारण समाज द्वारा उसकी उपेक्षा होती है | वहीं कस्तूरी मृग जैसा आत्म विवेक उन्हें शोभा देता है |

"जिस कांटे से

बचने केलिए

1 अनामिका –अनुष्टुप –पृ 28

2 परमान्द श्रीवास्तव –कविता का उत्तर जीवन – पृ 177

तैरती रही मछली

समुंदर दर समुंदर

उसकी देह में छिपा था “[1]

अपनी देह की पहचान करनेवाली स्त्री यहाँ प्रकट है |

5.1.4 सखी भाव

दिन भर घर के काम करते नारी थक जाती है | वह यंत्र समान ही घूमती रहती है| घर में हो या बाहर उसके ऊपर बड़ी-बड़ी ज़िम्मेदारियाँ हैं | बच्चों का पालन पोषण पति और अन्य परिवारवालों की सेवा, घर की सफाई,दफ्तर का काम- उसकी ज़िम्मेदारियों की कतार लंबी है | सबको एक साथ ले जाने केलिए उन्हें दिक्कत महसूस होती है | अपने व्यस्त ज़िंदगी में उन्हें फुरसत के क्षण बहुत कम ही मिलते है | ऐसे संदर्भ में अपनी जैसी एक स्त्री के साथ अपने समय खर्च करे तो उसे राहत मिल जाती है ; उनके बीच एक आत्मबंध ज़रूर उत्पन्न हो जाता है | क्योंकि एक स्त्री ही दूसरी स्त्री का दर्द समझ सकती है | अनामिका का कथन इस संदर्भ में उल्लेखनीय है :- “घर गृहस्थी और अन्य तनावों के बीच एक स्त्री जब दूसरी स्त्री का संबोध्य बनती है तो वात्सल्य करूणा और शांत ये भरी एक रस का परिपाक होता है “[2] इस सखी भाव को आधार बनाकर कवयित्रियों ने कविताएँ रची हैं | क्योंकि विश्व भर में औरतों की समस्याएँ एक-सी हैं| उनमें एक अंतचेतनागत तादात्म्य होती रहती है |

---

1 गगन गिल – अंधेरे में बुद्ध –पृ .15

2 अनामिका – कविता में औरत –पृ.26

सदियों से नारी अपनी दु:खद भावनाओं को साथ लेकर जी रही है | ऐसी जीनेवाली नारी केलिए सबसे बड़ी राहत अपनी सखी है | छितराये हुए केशों से जुएँ चुनने पर उनको खुशी मिलती हैं | सदियों से एक नारी दूसरी नारी का दु:ख सहला रही है | इसका उद्घाटन करती है अनामिका 'जुएँ' कविता में:-

"क्या जाने कितनी शताब्दियों से
चल रहा है यह सिलसिला
और एक आदि स्त्री
दूसरी उतनी ही पुरानी सखी के
छितराए हुए केशों से
चुन रही है जुए
सितारे और चमकुल"[1]

स्त्रियों केलिए चबूतरा राहत का केंद्र है | अपने कामकाज से निपटकर अन्य सखियों से बातें करते समय वह अपने आपको भूल जाती है | अर्थात् अपनी व्यथा एवं पीडाएँ भूल जाने की तरीका है , सखिओं के साथ का मिलन | नीलेश रघुवंशी की 'चबूतरा' इसका चित्रण करती है :-

"निपटाकर कामकाज
बैठी है घेरकर चबूतरा
दमक रहे है सबके चेहरे
चेहरे पर किसी के कुछ ज़्यादा ही नमक

---

1 अनामिका – अनुष्टुप –पृ.50

हाथ नहीं किसी के खाली
भरे है फुर्सत से भरे कामों से”[1]

जब एक नारी को दूसरी नारी के प्रति आत्मीयता एवं ममत्व का यथार्थ बोध होता है, तब वहाँ सखी भाव पैदा होती है | नीलेश रघुवंशी की ‘मेंहदी’ कविता भी नारी-नारी के बीच के इस आत्मीय भाव का पर्दाफाश करती है

“कोई और नहीं
सिर्फ लड़कियाँ ही जानती हैं
कैसे कब रंग आया तुममें
उन्हीं के अंदर जीवित है आज भी
तुम्हारी टीस और शोखपन “[2]

दो सखियां एक दूसरे की पीडा बाँटने केलिए सदा तत्पर होती है | दोनों आपस में अपना हृदय खोल कर रख देती है |

5.1.5 स्वतंत्रता की चाह

नारी सदियों से पिंजरे में बन्द पछी के समान अस्वतंत्रता में जी रही थी | पितृसत्तात्मक व्यवस्था के बंधन में दम घुटती वह जी रही है | अभी तक वह इसप्रकार बंधित थी कि कभी उसे बंधन का अहसास तक नहीं होता था| आज की

1 नीलेश रघुवंशी –घर निकासी -पृ.47

2 नीलेश रघुवंशी – घर निकासी -पृ.29

नारी अपने चारों ओर की बंधनों को महसूस करने लगी, वह बंधन के जंजीर को एक-एक करके खोलने लगी है | खुद के अस्तित्व की पहचान ही स्त्री मुक्ति की पहलकदमी है | भारतीय संस्कृति उन्हें मंदिर की मूर्ति या देवी का स्थान देकर उनकी गुणगान करती थी | पर आज वह मानव जीवन यापन स्वतंत्रेच्छा से करना चाहती है |

हिन्दी काव्य परंपरा में महादेवी वर्मा ने अपनी कविताओं में मुक्ति की आकांक्षा को प्रकट किया था | अत्यंत विनय के साथ अपने को स्वतंत्र होने की इच्छा वे प्रकट करती है : 'कीर का प्रिय आज पिंजर खोल दो' | नब्बे के दशक की कवयित्रियाँ भी पूरे आत्मसम्मान और आत्मनिर्भरता के साथ खुले आसमान में विचरण करना चाहती है |

कात्यायनी की कविता 'एक भूतपूर्व नगरवधू की दुर्गपति से प्रार्थना' भी एक नारी की मुक्ति की प्रार्थना है| नारी एक भूतपूर्व नगरवधू है, वह कौमार्यावस्था में ही दुर्ग में बंध हो गयी थी, उसका स्वतंत्र जीवन नष्ट हो गया था | वह अब सबसे मुक्त होना चाहती है | इतने साल वह दूसरों के अमोद-प्रमोद केलिए जी रही थी| अब वह स्वयं के लिए जीवन बिताना चाहती है| वह अपने लिए गाना और नाचना चाहती है :-

“ऐसे ही एक वृक्ष के तने से पीठ टिकाकर
कम से कम एक बार
भले ही वह ज़िंदगी में आखिरी बार हो
अपने मन से एक गीत गाना है मुझे
जिसकी कभी किसी ने फरमाइश न की हो
जलते रेगिस्तान में ही सही
कम से कम एक बार मैं
अपने लिख नृत्य करना चाहती हूँ
मुझे अपने लिए एक बार
खुले आसमान के नीचे जाने दो
तारों से टपकती ओस सनी रोशनी में भीगने दो |”[1]

कात्यायनी ने ‘हॉकी खेलती लड़कियाँ’ कविता में भी अपने सपने में भी अपना खेल ज़ारी रखनेवाली लड़कियों का चित्रण किया है | ये लड़कियाँ अपनी नियति से बेखबर होकर हॉकी का पूरा आनंद ले रही है | वे सपने में बॉल के पीछे स्टिक लिये दौडती है और गोल गोल चिल्लाती हुई एक दूसरे को चूमती है |

“सपने में दौडती हुई
बॉल के पीछे
स्टिक को साधे हुए हाथों में

1 कात्यायनी – इस पौरुषपूर्ण समय में -पृ.65

पृथ्वी के छोर पर पहूँच जाएँगी
और गोल-गोल चिल्लाती हुई
एक दूसरे को चूमती हुई
लिपट कर
धरती पर
गिर जाएँगी |"[1]

हमारी सामाजिक व्यवस्था लड़की के सोचने और लिखने को भी बंधन में रखती है | घर की चारदीवारी में उसके विचारों को भी बंद रखना वह चाहती है | इस संदर्भ में नीलेश रघुवंशी की कविता 'कविता लिखनेवाली लडकी में कवयित्री' रूसी कवयित्री मरीना की याद करती है | नीलेश रघुवंशी उनसे प्रेरणा पाकर नयी चेतना के साथ मुक्ति की आकांक्षा को प्रकट करती हैं |

"ओ मरीना
तुम्हारी ही तरह
मैं भी बनूँगी कवि
मशीन पर सिलते हुए कपडे सिलूँगी कविता
बुनते हुए स्वेटर बूनूँगी शब्द
खुले आसमान के नीचे बैठकर करूँगी बातें
तुम्हारी कविताओं पर"[2]

---

1 कात्यायनी – सात भाइयों के बीच चंपा -पृ.19
2 नीलेश रघुवंशी – घर निकासी -पृ.24

गगन गिल की कविता 'मछली' भी मुक्ति की आकांक्षा को व्यक्त करती है :-

"इस मछली को मस्तिष्क में
जल नहीं
आकाश भर गया है
पानी नहीं
उड़ने की लालसा
भर गयी है "[1]

सभी बन्धनों को तोडकर स्त्री बाहर निकलना चाहती है मुक्त वातवरण में जीना चाहती है

5.1.6 स्त्री और प्रकृति : समान धर्मी

समाज में स्त्री और प्रकृति दोनों समान रूप से शोषण की शिकार हो रही है | प्रकृति के प्रति अत्याचार आधुनिक मनुष्य की देन है | विज्ञान एवं तकनीकी क्षमता से पूर्ण रौनक ज़िंदगी जीने केलिए आधुनिक मनुष्य प्रकृति के संसाधनों के शोषण की आलोचना के रूप में पारिस्थितिक विमर्श की अवधारणा हुई | नारी के प्रति अत्याचार परंपरा से चला आ रहा है, पर आधुनिक काल में इसका रूप और भी विकराल हो गया | नारी पर होनेवाले शोषण के आलोचना के रूप में नारी विमर्श का उदय हुआ | प्रकृति और नारी दोनों के शोषण में कई समानतायें हैं और दोनों के धर्म में भी | इसलिए दोनों को शोषण से मुक्त करने की नवीन विचारधारा की आवश्यकता हुई | इसके फलस्वरूप बीसवीं सदी के अंतिम दशकों

1 गगन गिल - अंधेरे में बुद्ध –पृ .82

में पाश्चात्य देश में पारिस्थितिक स्त्रीवाद का उदय हुआ | उनका तर्क था कि स्त्री और प्रकृति की मुक्ति मात्र से सामाजिक जीवन में संतुलन संभव है |

संसार के नियामक के रूप में मानव प्रकृति और उसके अंगों पर हस्ताक्षेप कर रहा है | सुविधापूर्ण जीवन जीने केलिए क्रूर मानव हरी-भरी प्रकृति को काटकर उसके हरेपन को छीन रहा है | नारी के समान प्रकृति भी क्रूर बलात्कार की शिकार हो रही है | इस अनैतिक शोषण से उत्पन्न विपत्तियाँ बहुत बड़ी होती है| बाढ़, अकाल,भूकंप से आज के मानव का विनाश हो रहा है | सावित्री डागा की कविता इसका चित्रण करती है |

“धरती का हरा-भरा चीरहरण करते
मुद्राराक्षस का क्रूर अट्टहास
जैसे प्रकृति माता से
खुला बलात्कार
इससे फिर कहीं
बाढ़, अकाल, भूकंप के प्रहार
विनाश के नित नए रूप दिखते बारम्बार |”[1]

---

11 सावित्री डागा – शताब्दी के सरहद पर -पृ.34

अनिता वर्मा की 'पृथ्वी' कविता भी पृथ्वी पर विकास के नाम पर किये जानेवाले शोषण कार्य का पर्दाफाश करती है | आज के क्रूर मानव पृथ्वी के हरेपन को नष्ट करके, फ्लैट, रिसोर्ट कारखाने आदि बना रहे है |

"हमने तुमने नहीं रखा हरा-भरा
बहुत शोर पैदा कर दिया
नदियों को बाँधा और डूबो दी धरती
अब हम उन्नत है
रहा नहीं कोई चारा
नीचे गिरने के सिवा "[1]

प्राकृतिक शोषण से उत्पन्न प्राकृतिक विपत्तियों के प्रति भी कवयित्री चेतावनी देती है | पर आजकल शोषण की परंपरा ज़ारी रहती है | जितने भी शोषण अन्याय प्रकृति के साथ मनुष्य कर रहे है, उनका अंदाजा तक नहीं लगा सकते | स्त्री के साथ अन्याय और अत्याचार का यह सिलसिला ज़ारी है | धरती और स्त्री दोनों इस दृष्टि से शोषण का शिकार है | सविता सिहं की 'नींद में रुदन' कविता इस तथ्य को उद्धाटित करती है :-

"हूँ इसलिए भी आश्वस्त
समझती क्यों रहस्यमय बनी रहती है धरती
क्यों होती है स्त्री की भाँति मज़बूर
बार बार की जाती समर्पित विषाक्त क्रूरता को"[1]

11 अनिता वर्मा – एक जन्म में सब –पृ.93

इस समाज में जिस तरह स्त्री सुरक्षित नहीं है, बिलकुल उसी तरह धरती भी सुरक्षित नहीं है |मनुष्य पर्यावरण का अंग है, अत: अन्य सभी जीव-जंतुओं और पशु-पक्षियों के साथ उनका सह जीवन है |इस सुहृद –जीवन के संतुलन पर पर्यावरण विद महत्व देते है | समाज में पुरुष की अपेक्षा स्त्रियाँ प्रकृति के साथ अधिक जुडी हुई दिखाई पडती है | इस सह-अस्तित्व की महिमा की ओर निर्माला गर्ग इशारा करती है –

"सूखा खेत भला कुछ भी
कैसे संजो पाएंगे
तुम्हारा पानी
उनका जीवन द्रव था
याद करो सरस्वती
यह धरती हमारी ही नहीं
तुम्हारी भी कुछ थी |"[2]

अनामिका एक ऐसी कवयित्री है जिसमें पृथ्वी के साथ मिलकर जीने का विचार अंतर्निहित है | अपनी कविता 'चिट्ठी लिखती हुई औरत' में कवयित्रि निडरता के साथ बताती है कि आजकल औरतों को कुछ भी कह जाने से डर नहीं लगता | क्योंकि उसमें पानी और मिट्टी है | जिसप्रकार पानी और मिट्टी से पौधा बड़ा होकर लहलहाती है, उसी प्रकार स्त्री लेखन भी ऊर्जा अर्जित करती है |

---

1 सविता सिहं – अपने जैसा जीवन –पृ.31

2 निर्माला गर्ग – कबाडी का तराजू –पृ39-40

"औरतों को डर नहीं लगता
कुछ भी कहा जाने में
उनको नहीं होती शार्मिंदगी
मानने में
कि उनमें
पानी है मिट्टी भी
पानी और मिट्टी इन दोनों में से
किसी का
कोई और छोर नहीं होता
खुद एक धारावाहिक चिट्ठी होती तो है
ईश्वर की
हम सबके नाम"[1]

स्त्रीलेखन की संभावनायें यहाँ प्रस्तुत है | जो सिर्फ स्त्री केलिए नहीं समग्र समाज केलिए लाभकारी है |

अनामिका की कविता 'एक अनुपस्थित शहर', प्रकृति सत्ता की निजता पर मानवीय हस्तक्षेप का चित्रण करती है | मानव राशि के अमानवीय दखल प्रकृति की बुनियादी ढ़ाँचे को बदल देता है | मानव निर्मित संकटों के अलावा प्राकृतिक शोषण से उत्पन्न विपत्तियों की ओर कवयित्री इशारा करती है :-

---

1 अनामिका –अनुष्टुप -पृ.48

"हमने आँखें मूंदी

वहाँ नींद गायब थी, सपने गायब

आँखें खोली- शहर गायब था

टोकरी थी- गोभियाँ नहीं थी

टोटी थी- पानी नदारद

थे बल्ब, बिजली कहाँ थी !

सडकें थी, बस और रिक्शे और तांगे

पर मनुष-गंन्ध नहीं

नहीं, मानुष गन्ध नहीं

चीखता, हहाता बढ़ा आता था

भूखा सन्नाटा "[1]

इस प्रकार नष्ट होती जा रही प्राकृतिक संपता के प्रति कवयित्रियाँ सचेता है | इसको ही वे अपनी कविताओं के द्वारा दर्ज करती है |नब्बे के दशक के कवयित्रियों ने प्रकति और स्त्री शोषण का खुलकर चित्रण किया है |

5.1.7 स्त्री पुरुष का पूरक

भारतीय संस्कृति में स्त्री-पुरुष के अन्योन्याश्रित संबंधों की सूक्षम पहचान प्राचीनकाल में ही कर ली गयी थी | शिव पार्वती की अर्धनारीश्वर संकल्पना इसका उत्तम निदर्शन है | इस संकल्पना में स्त्री और पुरुष दोनों का समान महत्व

1 अनामिका –बीजाक्षर पृ 21

है | साथ ही यह इस ओर भी संकेत देती है कि दो शरीर और दो आत्माएँ एक दूसरे से युग्मबद्ध हुए बिना अधूरी है | स्त्री और पुरुष दोनों अगर एक दूसरे से जुड जाये तो सब मंगलमय होंगे | यही भावना हमारी संस्कृति में नारीमुक्ति आंदोलन के परिप्रेक्ष्य में भी लागू हो गयी है | पुरुष सहभागिता ही भारतीय नारीमुक्ति आंदोलन का सबसे बड़ा हथियार थी | राजी सेठ की राय में "वैसे पुरुष शत्रू नहीं हो सकता, क्योंकि वह हमारा पिता, भाई, पति, सहचर और हमारे बच्चों का भी पिता है | वह हर घर में, हर स्त्री के साथ हर संबंधों से बरसों से रहता आया है | मौका पड़ने पर स्वामी दयानंन्द सरस्वती, गाँधी, गोखले, मदन मोहन मालवीय जैसे पुरुषों ने हमारे हक केलिए लडाइयाँ भी लडी है |"[1] समाज के सर्वांगीण विकास केलिए स्त्री-पुरुष सहभागिता की आवश्यकता है | स्त्री-पुरुष सहभागिता से युक्त सामाजिक व्यवस्था की कामना साहित्यकारों द्वारा भी हुई है | नागार्जुन ने अपनी 'भूमिजा' में सीता द्वारा स्त्री-पुरुष समता की भावना को व्यक्त किया है | स्त्री-पुरुष समता समाज की प्रगति केलिए अनिवार्य है | अर्थात स्त्री और पुरुष समाज के अन्योन्याश्रित अंग है |

आजकल की नारी 'स्त्री-पुरुष' को एक सिक्के के दो पहलू मानती है | वह पारिवारिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, आर्थिक सभी क्षेत्रों में पुरुष की सहभागिता

---

1 राजी सेठ – गगनाच्ल वर्ष 24 अंक 4 –पृ.36

चाहती है | वह अपनत्व और सामाजिकता दोनों पर सोचती अर्धनारीश्वर संकल्पना पर बल देती है | गगन गिल का कहना है

"तुम नहीं होगे
तो हम नहीं होगे
हम नहीं होगे
तो दुनिया नहीं होगी"[1]

पुरुष से अलग होकर नहीं, पुरुष के साथ जुडकर एक नयी दुनिया का निर्माण कवयित्रि चाहती है |

5.2 काव्य भाषा

कविता मानवीय संवेदनाओं की अभिव्यक्ति है | निश्चय ही सामान्य भाषा और कविता की भाषा में अंतर है | मुख्य अंतर यह है कि सामान्य भाषा शब्दों के साथ उनके सुनिश्चित अर्थ का होना अनिवार्य मानती है, जबकि काव्यभाषा केलिए यह सुनिश्चितता नहीं होती | वह शब्दों के अर्थ को बार-बार परिष्कृत करती है | अपनी जीवन्तता को प्रमाणित करती रहती है | स्त्री चेतना की अभिव्यक्ति में कवयित्रियां अलग भाषा की मांग करती हैं कविता में ,जो स्त्री की अनुभूतियां शब्दबद्ध करने में सक्षम हो| स्त्रीवादी लेखिकाएँ इसे स्त्री भाषा कहती है| कवयित्रियां स्त्री भाषा के प्रयोग केलिए प्रयत्नरत है|

---

1 गगन गिल – यह आकांक्षा समय नहीं -पृ.11

5.2.1 स्त्री भाषा :-

'स्त्रीभाषा' सबसे प्रचलित एक नई वैचारिकी है | आजकल समाजभाषावैज्ञानिक अध्ययन के क्षेत्र में इस पर काम हो रहा है | स्त्रीभाषा के सन्दर्भ में विद्वानों में एकमत नहीं है | इसके संबंध में सुधा सिंह का कहना है :- " स्त्री की भाषा को पारिभाषित करना एक जटिल कार्य है | विभिन्न स्त्रीवादी लेखिकाएँ भी इसे लेकर किसी सर्वमान्य निष्कर्ष तक नहीं पहूँची है | पर यह निर्विवाद है कि स्त्री की भाषा, उसकी संरचना, वाक्य गठन, पठनशैली और संदेश के संप्रेषण की प्रक्रिया पुरुषों से भिन्न होती है | भाषा के नाम पर जिसे जानते है वह मूलत: पुरुष भाषा है यही प्रचलित है | "[1] आजकल स्त्री जिस भाषा का प्रयोग कर रही है, वह पुरुष की भाषा है उस भाषा में इस दुनिया का अर्थ शामिल नहीं है | इसी कारण स्त्री की भाषिक अभिव्यक्ति बोलचाल की हो या लिखित साहित्य की हो या अन्य प्रशासनिक कार्य की हो, हमेशा पुंस अभिव्यक्ति से निम्न बताया जाता है | प्रचलित भाषा में स्त्री से जुडे भाषिक रूप अर्थात् स्त्री-संस्कृति, व्यवहार, इच्छा, जीवनशैली, स्त्री चेतना आदि को अभिव्यक्ति करनेवाले भाषिक रूप बहुत कम है | स्त्री को अपने निजी अनुभवों को व्यक्त करने केलिए भी निजी शब्दावली भी नहीं है |' स्त्री भाषा' की आवश्यकता के संदर्भ में सुधीश पचौरी का कहना है "समकालीन साहित्यिक परिदृश्य में हिन्दी का स्त्री लेखन यदि एकदम हाशिए पर है तो इसलिए कि प्रचलित वर्चस्ववादी भाषा स्त्री की

---

1 सुधा सिंह –ज्ञान का स्त्रीवादी पाठ –पृ.256

वाणी नहीं बना पाती और बहुत कम लेखिकाएँ स्त्री केलिए निजी भाषा खोजने की चिन्ता करता है | सुधीश पचौरी जी का उक्त कथन समकालीन संदर्भ में समीचीन है |

आजकल की लेखिकाएँ अपनी निजी भाषा गढ रही है | भाषा का असर उनपर बहुत गहरा है | अनामिका की राय में “यह बात अपनी जगह दुरुस्त है कि भाषा एक लीलाभूमि है तो एक युद्धभूमि भी ! अस्मिता की लड़ाई हो या कोई अन्य मनोसामाजिक संघर्ष उसकी सबसे महीन और सार्थक अनगूँजे भाषा में भी दर्ज होती है |”[1] स्त्री भाषा स्त्री की लडाई केलिए सशक्त हथियार है| आजकल की स्त्री, भाषा के ज़रिए समाज से संबध बनाना चाहती है| सुधा सिंह का विचार है स्त्रीवादी लेखिकाओं के अनुसार भाषा,जिस के जरिए हम अपनी विश्वदृष्टि का निर्माण करते है, केवल संप्रेषण का माध्यम नहीं है | यह ज्ञान के विविध क्षेत्रों में अपनी उपस्थिति दर्ज कराने, अस्मिता के निर्माण और दुनिया को पारिभाषित करने का ज़रिया भी है | इसमें अभिव्यक्त भाषिक संबंध हमारे संबंधों की छाया होते हैं | भाषा के अध्ययन के ज़रिए सामाजिक संबंधों के अध्ययन का रास्ता खुलता है |”[2] भाषा के ज़रिए वह खुले रूप में अपनी मानसिक एवं शारीरिक व्यापारों, संवेदनाओं को प्रस्तुत करने के साथ- साथ संघर्ष एवं प्रतिरोध को भी दर्ज करती है |

---

1 अनामिका – हंस (नवंबर 2009)पृ53

2 सुधा सिंह –ज्ञान की स्त्रीवादी पाठ –पृ 135

5.2.2 नब्बे के दशक की कवयित्रियों की भाषा :

नब्बे के दशक की कवयित्रियों ने अपनी अस्मिता की लडाई को व्यक्त करने केलिए भाषा रूपी हथियार का सहारा लिया | उन्होंने अपनी कविताओं द्वारा देह, परिवार समाज, प्रकृति, राष्ट्र और विश्व की भाषागत निर्मितियों को नए सिरे से व्याख्यायित करने की कोशिश की | पुरुष की भाषा की अपेक्षा उनकी भाषा में सहजता एवं आत्मीयता देख सकती है | वे भाषा द्वारा स्त्री सुलभ शारीरिक अवस्थाओं का भी जिक्र करती हैं | दूसरे शब्दों में कहें तो भाषा का संबंध अनुभव एवं उसके परिवेश से गहन सरोकार रखता है स्त्री भाषा इसका दृष्टांत है | उसमें स्त्री की दुनिया अभिव्यक्ति पाती है | स्त्री के अनुभव, अनुभूतियाँ तथा परिवेश उसकी भाषा को ताकत प्रदान करते हैं | इसके बिना स्त्री अनुभवों को अभिव्यक्त करना मुमकिन नहीं होगा |

5.2.2.1 स्त्री अनुभवों की सच्चाई :-

अनुभवों की यथार्थ अभिव्यक्ति भाषा द्वारा ही संभव होती है | स्त्री के अनुभव उसके अपने तन मन से जुडे होने के कारण वह उसकी अभिव्यक्ति ईमानदारी के साथ कर सकती है | कात्यायनी के शब्दों में “नारी की सर्वतोन्मुखी समानता के ईमानदार से ईमानदार पक्षधर पुरुष लेखक की अनुभूतियाँ और संवेदनाएँ वे नहीं हो सकती जो एक स्त्री लेखक की वह स्त्री त्रासदी की दृष्टा भी हो सकती है या सहानुभूति कर्ता, भोक्ता कदापि नहीं ! अत: वह नारी-मुक्ति आंदोलन का राजनीतिक – दार्शनिक सूत्रीकरण तो कर सकता है | पर रचनात्मक

लेखन के धरातल पर इसका कृतित्व, उसका बोध और एक हद तक धारणाएँ (concemption) भी वह नहीं हो सकती , जो एक स्त्री लेखक की|"[1] अपनी अपनी विभिन्न अनुभूतियों को विशेष भाषा के ज़रिए अभिव्यक्त करने में नब्बे के दशक की कवयित्रियाँ अग्रगण्य थीं |

5.2.2.1.1 देह से संबंधित अनुभवों की भाषा :-

स्त्री देह से जुडे अपने विशिष्ट अनुभवों को व्यक्त करने केलिए नब्बे की कवयित्रियों ने विशिष्ट शब्दों का प्रयोग किया है | गर्भ, बॉझपन, नाल, कोख आदि स्त्री दुनिया के शब्दों को उन्होंने इस्तेमाल किया | गर्भावस्था की अनमोल अनुभूति को अनामिका इसप्रकार व्यक्त किया है कि

"महसूस करती है वह
स्तनों में उतरते दूध का दबाव
अजन्मे शिशु की अंगडाईयाँ
उसकी नन्ही मुट्ठियों का तनाव
और क्षण भर केलिए
बन्द कर लेती है अपनी ऑखें|"[2]

गर्भावस्था की नारी सुलभ अनुभूतियों को अनामिका सुन्दर शब्दों में यों अभिव्यक्त करती है:-

"मेरे भीतर कुछ चल रहा है

---

1 कात्यायनी – दुर्ग द्वार पर दस्तक –पृ 50

2 कात्यायनी – जादू नहीं है कविता -पृ.182

नहीं षडयंत्र नहीं, तंत्र नहीं मंत्र नहीं

क्या पता क्या

पर कुछ घट रहा है

जैसे घटती है घटना कुछ घट रहा है| ”[1]

स्त्री यहाँ निजी अनुभवों की सही अभिव्यक्ति देती है | इसको पुरुष अभिव्यक्त नहीं कर सकता, क्योंकि उसका अनुभव संसार इससे अलग है |

5.2.2.1.2 माँ की भाषा :-

माँ की भाषा प्यार से भरी है | यह सभी आपात स्थितियों में बच्चे को धैर्य प्रदान करता है और सुरक्षा प्रदान करती है | गगन गिल ‘एक उम्र के बाद माँएँ’ में इसकी और इशारा करती है |

“अक्सर उन्हें हिम्मत देती
कहती है माँएँ
बीत जाएँगे
जैसे भी होंगे
स्याह काले दिन
हम है न तुम्हारे साथ |”[2]

---

1 अनामिका –बीजाक्षर –पृ 29

22 गगन गिल – एक दिन लौटेगी लडकी -पृ.32

माँ अपने बच्चों को ढांढस बांधती चलती है, मां का यह प्यार ,उनकी ममता, उनका विश्वास ये सब एक स्त्री मन ही अभिव्यक्त कर सकती है|

5.2.2.1.3 प्रेम की भाषा:-

नब्बे की कवयित्रियों ने प्रेम जैसी अनमोल भावना की पराकाष्ठा अपनी भाषा द्वारा दर्ज की है| नीलेश रघुवंशी ने अपनी 'संकेत' कविता में प्रेमी-प्रेमिका के बीच की सुंदर अनुभूति का यों चित्रण किया है :-

> "हमारे बीच से उठती है खुशबुएँ कई-कई
> कई-कई चित्र कई कई शब्द
> बुला रहे होते है एक दूसरे को दूर से
> कुनमुनाता है कुछ हमारे भीतर "[1]

प्रेमी-प्रेमिका के बीच की अनुभूति ऐसी होती है मानो एक दूसरे को देखते हुए लंबी सफर पर निकली हो |

5.2.2.2 बिंबों प्रतीकों एवं मिथकों का प्रयोग :-

काव्य भाषा में बिंब का विशेष स्थान है | यह कवि की कलात्मक अनुभूति का प्रमाण है, जिसका उद्भव कवि के मानस में होता है | संप्रेषणीयता में इसका प्रमुख स्थान है | डॉ.कृपाशंकर पांडेय का कहना है "बिंब अनिवार्यत: और

---

1 नीलेश रर्घुवंशी –घर निकासी –पृ 36

प्रधानत: एक अर्थ संश्लेष है जिसके कारण वह रचना में काव्य भाषा या काव्य बनने की मुख्य क्रिया में सहायक होता है |"[1] नब्बे की कवयित्रियों ने अपनी कलात्मक अनुभूती के प्रसाधन केलिए बिंबों का प्रयोग भी की है | नीलेश रघुवंशी ने घरेलू नारी जीवन केलिए 'हंडे' के बिंब को प्रस्तुत किया है :-

"एक पुराना और सुन्दर हंडा
भरा रहता इसमें अनाज
कभी भरा जाता पानी
भरे ये इसमें पहले सपने वह हंडा
एक युवति लाई अपने साथ दहेज में
देखती रही होगी
रास्ते भर इसमें घर का दरवाज़ा
बचपन उसमें अटाटूट भरा था
भरे थे तारों से डूबे हुए दिन "[2]

प्रतीक से तात्पर्य है चिह्न, जिससे संप्रेषणीयता में वृद्धि होती है | साधारणतया अमूर्त अनुभूतियों को मूर्त रूप प्रदान करने केलिए कवि प्रतीक का प्रयोग करता है | अर्थात् सूक्ष्म अनुभूति की अभिव्यजंना केलिए ही कवि प्रतीक का सहारा लेता है | वह जीवन और जगत् से कुछ चित्रों को लेकर उनके माध्यम से मन की कल्पनाओं को कविता में प्रस्तुत करता है | प्रतीक के संबन्ध में रेनू

1 डॉ कृपा शंकर पाण्डेय – हिन्दी काव्य भाषा -पृ.17
2 डॉ कृपा शंकर पाण्डेय –हिन्दी काव्य भाषा –पृ 17

दीक्षित का विचार है "प्रकृति के नाना व्यापार, जो कवि द्वारा देखे गये होते है, पाठक भी जिन्हें देखता और समझता है, कवि उन्हीं को प्रतीक के रूप में कविता में अपनाता है "[1] बिंब विधन की प्रक्रिया कल्पनाजन्य होती है, जो कवि के मानस में जन्म लेता है, उसकी अभिव्यक्ति केलिए कवि प्रतीक का सहारा लेता है | नब्बे के दशक की कवयित्रियाँ नूतन प्रतीकों का प्रयोग व्यापक रूप से करती दिखाई देती है | पिंजरे, खुला आसमान, कठपुतली, कीकंड, घर, दरवाज़ा, नगरवधु, चींटियाँ आदि उनके द्वारा प्रयुक्त प्रतीक हैं |

गगन गिल की 'चींटियाँ' अपनी अस्मिता की खोज में भटकती नारियों का प्रतीक है | वे सदियों से पृथ्वी के एक सिरे से दूसरे सिरे की ओर अदृश्य आटे की खोज में भटकती रहती है |उनका दु:ख कोई नहीं जानता

"चीटियाँ अपने घर का रास्ता भूल गयी थी
अपनी नींद और हमारी देह बीच के कतार बनाती चलती
उनकी स्मृति में
बिखरा रहता उनका अदृश्य आटा, जो किसी दूसरे देशकाल
ने बिखेरा था
उसे ढूंढती वे चलती जाती पृथ्वी के एक सिरे से दूसरे की
ओर "[2]

---

1 डॉ रेनू दीक्षित –.नई कविता का रूप –पृ 186

2 गगन गिल –अंधेरे में बुद्ध –पृ 98

सदियों से नारी दूसरों की इच्छा पूर्ति केलिए जीवन बिता रही थी | पर आजकल वह अपनी अस्मिता की पहचान कर रही है | वह जाग्रत हो गयी है | कात्यायनी की 'एक भूतपूर्व नगरवधू की दुर्गपति से प्रार्थना' कविता की नगरवधू आज की जाग्रृत नारी की प्रतीक है | वह अपनेलिए जीना चाहती है :-

"मैं जीवित रहूँगी
क्योंकि अभी मैं जीवित रहना चाहती हूँ
नहीं यह कहना उचित होगा कि
अब मैं जीवित होना चाहती हूँ दुर्गपति
मुझे जाने दो
मैं अपनी पहचान तक जाना चाहती हूँ |"[1]

भाषिक संवेदना में वृद्धि लाने केलिए कवि मिथक का प्रयोग भी करता है | मिथक सबन्धी शंभुनाथ का विचार है :- "जब से मनुष्य ने कुछ कलात्मक शब्द अथवा कथा कहना शुरू किया तब से मिथक द्वारा सामाजिक यथार्थ के नये नये प्रतीकात्मक या सांकेतिक रूप व्यक्त हो रहे है | मिथक का अर्थ उस कथ्य में निहित है, जो मनुष्य व्यक्त करना चाहता है | जिस भाषा में व्यक्त करना चाहता है वह भले अवैज्ञानिक अथवा सतह पर झूठी लगे, किन्तु उसका कथ्य सच्चाई से भरा होता है | मिथकों को मनुष्य के ऐतिहासिक अस्तित्व का सामाजिक कथ्य मानना चाहिए |"[2] मिथकों का आधार पौराणिक कथायें और लोककथायें हैं |

---

1 कात्यायनी –इस पौरुषपूर्ण समय में -पृ.64

2 डॉ शभुनाथ –मिथक और आधुनिक कविता –पृ 14

जिसके प्रति जनमानस सदा आकर्षित रहता है | नब्बे के दशक की कवयित्रियों ने मिथकों का खूब प्रयोग किया है | कात्यायनी की 'गार्गी', 'सात भाइयों के बीच चंपा', अनामिका की 'बहिनाबाई इक्कसवीं सदी' में, गगन गिल की अंधेरे में बुद्ध' , सुनीता जैन की 'शिवा' आदि इस दृष्टि से उल्लेखनीय कविताएँ हैं |

'गार्गी' कविता छान्दोग्योपनिषद के याज्ञावलक्य-गर्गी प्रसंग की समकालीनता को रखांकित करती है | गार्गी एक बौद्धिक चरित्र है, उन्होंने ऋषियों की पुरुषवर्चस्ववादी प्रवृत्ति पर प्रश्न उठाया था | अत: उन्हें तत्कालीन पुरुष की संप्रभुत्व की ओर से सिर काटने की धमकियाँ मिलती थी | कवयित्री आधुनिक संदर्भ में गर्गी से चेतावनी देती है कि पुरुष द्वारा निर्मित जीवन वृत्त में ही उसे रहना चाहिए :-

"मत जाओ गार्गी प्रश्नों की सीमा से आगे
तुम्हारा सिर काटकर लुढकेगा ज़मीन पर
मत करो याज्ञवल्क्यों की अवमानना
मत उठाओं प्रश्न ब्रह्मसत्ता पर,
वह पुरुष है"[1]

1 कात्यायनी –सात भाईयों के बीच चंपा –पृ 32

यहाँ अतीत की गार्गी स्त्री चिन्तन शक्ति के रूप में चित्रित है | यहाँ कात्यायनी पुरुषकेन्द्रीत अधिकार व्यवस्था को रेखांकित करती है | वैदिक मिथकों के सबंध में शभुनाथ का विचार है :- "वैदिक मिथकों में तद्युगीन मनुष्यों का अनुभूत यथार्थ प्रकट हुआ था | उनकी आकांक्षाओं और संघर्षों का इतिहास प्रतिबिंबित हुआ था |"[1] कवयित्रियों ने स्त्री की जिजीविषा एवं संघर्ष का चित्रण करने केलिए लोककथाओं का भी सहारा लिया है| कात्यायनी ने 'सात भाइयों के बीच चंपा' कविता में चंपा नामक लोक मिथक का सहारा लिया है |

ए अरविंदाक्षन का कहना है " 'सात भाइयों के बीच चंपा' एक ऐसी कविता है जिसमें स्त्री-ऊर्जा के नैरंतर्य को लोक-मिथक का अवलंब लेकर प्रस्तुत किया गया है "[2] पूरी कविता लोक-कथा के रूप में है |

"वहाँ एक नील कमल उग आया
जलकुंभी जालों के ऊपर उठकर
चम्पा फिर घर आयी
देवता पर चढायी गयी
मुरझाने पर मसल कर फेंक दी गयी
जलायी गयी
उसकी राख बिखेर दी गयी

1 शभुनाथ – मिथक और भाषा (स. कल्याणमल ओद) - पृ 253

2 ए अरविंदाक्षन –कविता का थल और काल -पृ.63

पूरे गाँव में

रात को बारिश हुई झमडकर

अगले ही दिन

हर दरवाज़े के बाहर

नागफनी के बीहड घेरों के बीच

निर्भय निस्संग चंपा

मुस्कुराती पायी गयी |”[1]

चंपा को अनेक उपायों से नष्ट करने का प्रयास होते है | फिर भी तमाम साजिशों को पार करनेवाली शक्ति के रूप में चंपा यहाँ अवतरित होती है |

अनामिका अपनी कविता ‘बहिनाबाई इक्कीसवीं सदी’ में सत्रहवीं सदी में जीवित मराठी भक्त कवयित्रि बहिनाबाई को आधुनिक घरेलू गुलामी में पीडित नारी के रूप में चित्रित किया है |

“इतने आटा गूँधना है

देखो न कितने तो काम धरे है सिर पर

आओ भी, हाथ बॉटा दो थोडा

या फिर तुम हेर दो जुएँ ही जरा

कुछ तो करो न, कुछ करो”[1]

1 कात्यायनी –सात भाईयों के बीच चंपा – पृ 21-22

यहां बहिनाबाई के द्वारा घर की चारदीवारी में कैद भारतीय नारी की मुक्ति की आकांक्षा को शब्दबद्ध किया गया है|

5.2.2.3 विभिन्न शैलियों का प्रयोग :-

कथ्य के अनुसार कवि नयी नयी शैलियों को अपनाते है | शैलियों के प्रयोग से भाषा आधिक प्रभावशाली हो जाती है | नब्बे के दशक की कवयित्रियाँ संवादात्मक, व्यगंयात्मक, गद्यात्मक शैलियों का सहारा लेती हैं | कात्यायनी ने प्रार्थना के रूप में कई कविताएँ लिखी हैं | उनकी कविता 'एक भूतपूर्व नगरवधु की दुर्गपति से प्रार्थना' में नगरवधु की प्रार्थना है :-

"क्योंकि अभी मैं जीवित रहना चाहती है
नहीं, यह कहना उचित होगा कि
अब मैं जीवित होना
चाहती हूँ दुर्गपति, मुझे जाने दो
मैं अपनी पहचान
तक जाना चाहती हूँ
अपनी आत्मा तक "[2]

कात्यायनी की 'मंग्दलिन की पहली प्रार्थना' कविता, 'मग्दलिन की दूसरी प्रार्थना' कविता आदि प्रार्थना के रूप में रचित अन्य कविताएँ है | कात्यायनी ने गद्यात्मक शैली का प्रयोग भी किया है | उनकी कविता 'एक असमाप्त कविता की अति प्राचीन पाण्डुलिपि गद्यात्मक शैली में लिखी गयी कविता है |

---

1 अनामिका- अनुष्टुप –पृ. 126

2 कात्यायनी –इस पौरुषपूर्ण समय में –पृ-64

"तब मैंने वह करने की सोची | और जो भी जरूरी था इसकेलिए वह करना शुरू किया | पर समय अब बहुत कम ही बचा था मेरे पास इतना कम कि लिखने से पहले, लिखने की शर्त पूरी करने में ही खतम होने को आ गया | और तब आनेवाली दुनिया के तमाम लोगों केलिए मैंने एक लंबा प्रेम पत्र लिखा |रहस्यपूर्ण और तमाम रहस्यों को खोलता हुआ | और फिर उस रहस्य को लिए हुए साथ कब्र में जा लेटी |"[1]

गगन गिल ने अधिकतर गद्यात्मक शैली का प्रयोग किया है | उनके 'अंधेरे में बुद्ध', संग्रह की अधिकांश कविताएँ गद्यात्मक शैली में लिखी गयी हैं | 'आधे सिर का दर्द', 'अंधी होती औरत', 'चींटियाँ', 'सुरंगे', 'नि:संतान टेलीफोन और सन्नाटे' , 'सियालकोट- 1947' आदि गद्यात्मक शैली में लिखी उनकी कविताएँ है |

नब्बे के दशक की कवयित्रियों ने अपनी कविता को अधिक प्रभावात्मक बनाने केलिए व्यंग्य का सहारा भी लिया है | निर्मला गर्ग, अनामिका, कात्यायनी आदि कवयित्रियों ने व्यापक रूप में व्यंग्य का प्रयोग किया है | निर्मला गर्ग की कविता 'बराबर का दर्जा' पुरुष वर्ग की कपटता का पर्दाफाश व्यंग्य के द्वारा करती है:-

1 कात्यायनी –इस पौरुषपूर्ण समय में –पृ 61

"उसे जिद है स्त्रियों को मैं बराबर का दर्जा दूँ
यानी ठीक अपनी ही तरह समझूँ
यह कितना मुश्किल है
ऐसा मैं कैसे कर पाऊँगा
मुझमें जो ढेर सी दया है उनकेलिए करुणा है अगाध
उसका क्या होगा"[1]

अनामिका पितृसत्तात्मक समाज में दम घुटकर जीनेवाली औरत की यातना को व्यंग्य के द्वारा प्रस्तुत करती हैं :-

"किसकी नूरजहाँ हूँ मैं
इस ऑधियारे कमरे में यों
टीन खरचती आटे की "[2]

कात्यायनी की अनेक कविताएँ भी व्यंग्य से भरी हुई है | उनकी इस स्त्री से डरो,गार्गी, प्रार्थना आदि कविताएँ इसका उत्तम निदर्शन है |

अनामिका की अपनी कविता 'बहिनाबाई इक्कसवीं सदी में' संवादात्मक शैली में लिखी गयी सुंदर कविता है | संवाद और प्रश्नोत्तर के रूप में कवयित्री ने इस लंबी कविता की योजना की है | बहिनाबाई और साक्षी के संवाद द्वारा कविता आगे बढती है |

---

1 निर्मला गर्ग –कबाडी का तराजू -पृ.71

2 अनामिका – बीजाक्षर -पृ.52

"साक्षी: अच्छा तो तू उसको चिट्ठी नहीं लिखती ?
बहिनाबाई : क्या बात करती है तू भी !
इतने युगों से लगातार मेरा मन
किसी टाइपराइटर सा खट-खट-खट
एक चिट्ठी लिख रहा है |"[1]

5.2.2.4 घर-गृहस्थी से जुडी शब्दावली

नब्बे के दशक की कवयित्रियों ने घर गृहस्थी से जुडी शब्दावली का ज़्यादा प्रयोग किया है | चूल्हे चौके की दुनिया से खूब परिचित होने के कारण उनकी कविताओं में भी इसका असर दिखाई पडता है | यह स्त्री भाषा की अपनी विशिष्टता है | अनामिका ने अपनी स्त्री कविता में नारी की सृजनात्मक शक्ति को घरेलू परिवेश में चित्रित किया है | वह स्त्री परिवार केलिए स्वंय को सानती रहती है |

"अपने ही वजूद की ऑच के आगे
औचक हडबडी में
खूद को ही सानती
खूद को ही गूँधती हुई बार बार
खुश है कि रोटी बेलती जैसे पृथ्वी"[2]

---

1 अनामिका –अनुष्टुप –पृ.134

2 अनामिका – बीजाक्षर –पृ 26

पितृसत्तात्मक समाज नारी को रचना क्षेत्र से भी अलग करके घर की चारदीवारी में बंदी बनाकर रखना चाहता है| प्रसिद्ध रूसी कवयित्रि मरीना त्स्वेतायेवा से प्रश्न करके, घर गृहस्थी की शब्दावली द्वारा कवयित्रि अपनी आंकाक्षा को व्यक्त करती है :-

"ओ मरीना
तुम्हारी ही तरह
मैं भी बनूँगी कवि
मशीन पर
सिलते हुए कपडे सिलूँगी कविता
बुनते हुए स्वेटर बुनूँगी शब्द "[1]

यहाँ नीलेश रघुवंशी घर गृहस्थी के शब्दावली के द्वारा अपनी आकांक्षाओं को व्यक्त करके व्यवस्था के प्रति अपने विद्रोही चेतना को प्रकट करती है |

5.2.2.5 अलंकार, छंद एवं शब्दों का प्रयोग

नब्बे के दशक की कविताएँ मुख्यत: मुक्त छंद में ही लिखी गयी है | अंलकारों के प्रयोग में नवीनता दिखाई पडती है | नूतन उपमानों का सहारा भी कवियित्रियों ने ले लिया है | उपमा, उत्पेक्षा, रूपक अलंकारों का प्रयोग अधिक रूप में इनमें दिखाई पडता है |

1 नीलेश रघुवंशी – घर निकासी-पृ 24

तत्सम, तत्भव, देशज, विदेशी शब्दों की विविधता नब्बे की दशक की कविताओं में देख सकती है| अनामिका ने अपनी कविताओं में चालू अंग्रेज़ी शब्दों का अधिक प्रयोग किया है | उन्होंने कोलनीकरण, सिगरेट, पैकेट, स्पेस, बटन, सर्कुलर, डालर, ऑफिस, स्विच, बल्ब, सेफ्टी पिन, चेम्बर, फ्राक, ट्रक काल, प्यूज़, पोस्टर, क्रिकट आदि चालू अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग किया है | सुरमा, पछिया, दफा, भौचक्का, बिलौटा आदि लोकशब्दों का प्रयोग भी अनामिका द्वारा प्रयुक्त हुआ है |

निष्कर्ष

नब्बे के दशक की कवयित्रियों ने नारी की स्वाभाविकता को, उसकी सहज संवेदना को जगाने का कार्य अपनी कविताओं द्वारा किया | उस समय के कवियों ने भी नारी संवेदना के अनुमान करके अनेक कविताएँ लिखीं | पर लेखिकाएँ, पुरुष द्वारा लिखी नारीवादी कविताओं को कोई महत्व नहीं देती है |उनकी राय में उन कविताओं में अनुभूति की प्रमाणिकता नहीं है | कवयित्रियों की कविताएँ एक तरह से वैयक्तिक अनुभूतियों का सामाजिक संदर्भीकरण है |

पितृसत्तात्मक समाज के 'नारी के शरीर' संबंधी दृष्टिकोण नब्बे की कवयित्रियाँ तोडती हैं | वे अपने शारीरिक निर्मिति को नकारती नहीं | बल्कि अपनी शारीरिक निर्मिति का आस्वादन करती है |देह सबंधी कविताएँ लिखने में

अनामिका सबसे अग्रणी है | गर्भावस्था की नारी सुलभ विशेष अनुभूति, प्रजनन की क्षमता, प्रथम रजोस्राव आदि को अनामिका ने अपनी कविता का विषय बनाया | गगन गिल ने भी अपनी कविताओं में देह राजनीति या बयोपोलिटिक्स को आधार बनाकर कविता लिखी |

मातृत्व जैसी स्त्री सहज विशिष्ट अनुभूति का हिन्दी के अधिकांश कवयित्रियों ने चित्रण किया है | कात्यायनी, अनामिका, गगन गिल, कुसुम अंसल, आदि अनेक कवयित्रियों ने माँ से संबंधित कविताएँ लिखी हैं | हिन्दी कविता के क्षेत्र में माँ से संबंधित सबसे अधिक कविता लिखने का श्रेय सुनीता जैन को प्राप्त है |

नारी-नारी के बीच का सखी भाव, नारी-पुरुष के बीच प्रेम भावना आदि भी नब्बे की कवयित्रियों के विषय बन गये | प्रकृति और स्त्री दोनों को शोषण से बचाने केलिए पारिस्थितिक नारीवाद की जो अवधारणा हुई अनामिका, निर्मला गर्ग, सावित्री डागा, सविता सिंह, आदि कवयित्रियों ने इस पर कविताएँ लिखीं | स्त्री पुरुष सहभागिता एवं नारी मुक्ति की आकांक्षा पर भी नब्बे के दशक की कवयित्रियों ने कविताएँ रचीं | कुलमिलाकर कह सकते हैं कि नब्बे के दशक की कवयित्रियों की अलग जीवन दृष्टि इनकी कविताओं में दर्ज है |

नब्बे के दशक की कवयित्रियों ने अपनी निजी भाषा (स्त्री भाषा) गढ़ने का प्रयास किया है | उनकेलिए भाषा मुख्य रूप से पुरुष वर्चस्व से लडने का हथियार है | साथ ही भाषा के ज़रिए उन्होंने अपने मानसिक एवं शारीरिक व्यापारों एवं संवेदनाओं को भी प्रस्तुत किया है | अनुभवों की यथार्थ अभिव्यक्ति भाषा द्वारा ही संभव है | अपने देह से संबधित अनुभवों को,अपने मातृत्व की भावना को और अपनी प्रेम की भावना को अपने विभिन्न विचारों को स्पष्ट करने केलिए उन्होंने नये नये बिंबों, मिथकों एवं प्रतीकों का सहारा भी लिया है | इसकेलिए उन्होंने संवादात्मक, व्यगंयात्मक, गद्यात्मक आदि शैलियों का सहारा लिया है | घर गृहस्थी से अधिक जुडे रहने के कारण उनके काव्य में घरेलू शब्दावली की भरमार है | मुक्त छंद में लिखी नब्बे के दशक की कविताओं में हम नूतन उपमान देख सकते है | साथ ही चालू अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग भी हुआ है |

उपसंहार

उपसंहार

नारी प्राचीनकाल से ही जीवन के विभिन्न पडावों में कई तरह के बंधनों में बंदी बनकर जीती आ रही है| मुख्यतः ये बंधन लिंग पर आधारित है| पुरुष, घर परिवार तथा समाज के सभी क्षेत्रों में अपनी प्रभुता दिखा आ रहा है| उसके औजार के रूप में धर्म, नैतिकता, शुचिता, सुरक्षा आदि प्रमुख है| इन औजारों व उपकरणों की आड़ में पुरुष स्त्री का मानसिक एवं शारीरिक शोषण करता आ रहा था और वह अब भी ज़ारी है| स्त्री शोषण को ज़ारी रखने के लिए वह कई तरह के षडयंत्र भी रचता आ रहा है| एक ओर स्त्री की सुरक्षा का दावा है तो दूसरी ओर स्त्री को देवी कहकर उसकी सक्रियता पर रोक लगाता है| इस तरह की अँधेरी गुफाओं से गुज़रती स्त्री, शिक्षा तथा अन्य सामजिक परिस्थितियों के कारण आधुनिककाल में अपनी बदहालत के प्रति जागृत हो गयी और अपनी स्थिति में परिवर्तन लाने के लिए प्रयास करने लगी|

सर्वप्रथम पाश्चात्य देश में आये यह जागरण धीरे धीरे भारत में भी आ गया| स्त्रीवाद स्त्री की स्वतंत्रता एवं समानता पर बल देनेवाली विचारधारा है| बीसवीं शताब्दी के चौथे दशक से हिन्दी साहित्य में स्त्री समस्याओं को स्थान मिलने लगा था| भारत में अस्सी के बाद शुरू हुए आर्थिक उदारीकरण और भूमंडलीकरण स्त्री, दलित, आदिवासी जैसे समाज के उपेक्षित लोगों की सामाजिक अस्मिता की समस्या को साहित्य में मज़बूत होने के कारण बन गए| स्त्रीवाद पिछले तीन दशकों से साहित्य में सबसे चर्चित विचारधारा है| स्त्रीवाद वैयक्तिक एवं सामाजिक दोनों स्तरों पर स्त्रियों के अधिकारों की वकालत करता रहता है|

नब्बे के दशक में कई कवयित्रियाँ काव्य क्षेत्र में सक्रिय होने लगीं| स्त्री होने के कारण स्त्री की अनुभूतियों को अभिव्यक्त करने में वे ईमानदार एवं सफल रहीं| नब्बे के दशक की कवयित्रियों की कविताओं के संवेदनात्मक विकास में पूर्ववर्तीकाल की भूमिका भी असंद्ग्धि है| पूर्ववर्तीकालीन कवि एवं कवयित्रियों ने भी नारी चेतना को अपना काव्य विषय बनाया| भक्तिकालीन कवयित्री मीराबाई, आधुनिक काल में महादेवी वर्मा, सुभद्राकुमारी चौहान आदि ने भी नारी के दुःख-दर्द का बयान करके अपनी अस्मिता के लिए आवाज़ उठायी| आधुनिकालीन कवि भी नारी की बदहालत पर अत्यन्त दुखी थे| वे भी अपनी रचनाओं के ज़रिए नारी की स्थिति को सुधारने का प्रयत्न करते रहे|

नब्बे के दशक की कवयित्रियों की कविता नारी शोषण के विभिन्न आयामों का खुला दस्तावेज़ है| उनकी कविताएँ यह बताती हैं कि नारी का शोषण सबसे अधिक परिवार में ही होता है| पितृसत्तात्मक व्यवस्था परिवार में ही सबसे अधिक मज़बूत है| आज की नारी घर के बाहर और भीतर काम करते करते बहुत थकी हुई दिखाई पड़ती है| गृहस्थी के झंझट में वह सदा फंसी दिखाई पड़ती है| पर घर में उसका स्थान एक वेतनहीन नौकरानी के समान होता है| अपनी ज़िन्दगी में जिम्मेदारियों से उसे राहत कभी भी मिलती नहीं| परिवार के पालन पोषण में बरतनेवाली लिंग-भेद की मानसिकता ही लड़की को दोयम दर्जे की ओर धकेल देती है और लड़की में हीनता बोध को उत्पन्न करती है| लड़की के प्रति परिवार एवं समाज में होनेवाली उपेक्षा की भावना भ्रूणहत्याएँ बढ़ाती रहती हैं|

नब्बे के दशक की कवयित्रियाँ ‘स्त्री मात्र देह’ की अवधारणा को नकारती हैं| हमारा समाज इस वैज्ञानिक युग में भी स्त्री को शरीर से ऊपर कुछ स्थान देता नहीं| इस मानसिकता के कारण समाज में बलात्कार जैसे अत्याचार बढ़ रहे हैं| अपने परिवार की इज़्ज़त को बचाने के लिए लड़कियाँ ये अत्याचार छिपाकर रखती हैं| किशोरी बालिकाओं से लेकर बूढी औरतें तक आजकल यौन शोषण की शिकार हो रही हैं| वैश्वीकरण ने भी नारी को मात्र देह बना दिया| वैश्वीकरण ने औरत के शारीर, श्रम एवं सौन्दर्य का जिस प्रकार उपयोग किया है, इसका पर्दाफाश नब्बे के दशक की कवयित्रियों ने किया है| विज्ञापनों के ज़रिए मॉडल गर्ल के शरीरांग का प्रदर्शन हो रहा है| पर आजकल की लड़कियाँ यह जाने बिना मॉडलिंग की दुनिया में जा रही है|

नब्बे के दशक की कवयित्रियाँ यह बताना चाहती हैं कि दाह संस्कार, पिंडदान, श्राद्ध, बरसी आदि सभी धार्मिक कार्यो पर भी पुरुष का वर्चस्व ही कायम है| धर्म, नैतिकता, मर्यादा, संस्कृति आदि परंपरागत औजारों पर कवयित्रियाँ संदेह प्रकट करती हैं, उनके अंतर्विरोधों पर प्रकाश डालती है| इस प्रकार के आविष्कारों द्वारा वे नए मूल्य बोध की ज़रूरत पर बल भी देती हैं| नब्बे के दशक की कवयित्रियाँ अपनी कविताओं द्वारा यह भी बताना चाहती हैं कि पुरुषवर्चस्ववादी सामाजिक व्यवस्था में अर्थ का स्वामी भी वह है| यह झोपड़ों में रहनेवाले पुरुषों से लेकर मंडियों में रहनेवाले पुरुषों के लिए भी सही बात है| कभी-कभी नारी को आर्थिक विपन्नता के कारण देह व्यापार भी करना पड़ता है| कवयित्रियों की कविता इसका साक्ष्य है कि स्त्री हर कहीं शोषण, उपेक्षा एवं तिरस्कार की शिकार है|

शोषण के विभिन्न रूपों को चित्रण करने साथ-साथ कवयित्रियाँ इसके विरुद्ध आवाज़ भी उठाती हैं| नब्बे के दशक की कवयित्रियों में सबसे अधिक विद्रोही चेतना हम कात्यायनी की कविताओं में देख सकते हैं| कात्यायनी की कविताओं का मुख्य स्वर विद्रोह है| वे तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था पर व्यंग्य के साथ प्रश्न चिह्न लगाती हैं| नब्बे के दशक की कवयित्रियाँ अपनी कविताओं के ज़रिए एक प्रतिरोधी संस्कृति खड़ा करती हैं| कविता द्वारा वे अपनी स्वतंत्र पहचान के लिए भी आवाज़ बुलन्द करती हैं|

नब्बे के दशक की कवयित्रियाँ स्त्री जीवन के अलग-अलग पहलुओं से संबन्धित अपनी जीवन दृष्टि को प्रस्तुत करने में काबिल निकली हैं| उनका मानना है कि स्त्री का अनुभूत सत्य और भोगे हुए यथार्थ बिलकुल पुरुष से अलग है| उन्होंने अपनी अनुभूतियों को काव्य का विषय बनाया| गर्भावस्था, प्रजनन, रजोस्राव आदि नारी शरीर के वर्जित विषयों को भी उन्होंने काव्य में स्थान दिया| मातृत्व एवं प्रेम संबंधी सुन्दर अनुभूतियों को उन्होंने शब्दबद्ध किया है| आजकल प्रकृति और स्त्री समान रूप से शोषण का शिकार हो रही हैं, इसे पारिस्थितिक स्त्रीवाद के अन्तर्गत रखा जाता है| पारिस्थितिक स्त्रीवाद यानी प्रकृति और स्त्री को शोषण से बचाने के नवीन विचार उनके काव्य में देख सकते हैं| नारी और नारी के बीच का सखीभाव, स्त्री-पुरुष सहभागिता आदि मुद्दों पर भी कवयित्रियों ने प्रकाश डाला है|

नब्बे के दशक की कवयित्रियों की भाषा उनकी जीवनदृष्टि को व्यक्त करनेवाली है| इन कवयित्रियों ने ‘स्त्री भाषा’ गढ़ने का प्रयास किया है| निजी तौर पर अनुभवों का आतंरिक जगत उसकी भाषा को निजता प्रदान करती है|

जहाँ खुले रूप में औरत अपनी मानसिक एवं शारीरिक व्यापारों, संवेदनाओं को प्रस्तुत करने के साथ-साथ संघर्ष एवं प्रतिरोध को भी दर्ज करती है| उनकी भाषा प्रेम को पल्लवित करती है, अमानवीयता के खिलाफ आवाज़ उठाती है, रोती चिल्लाती है| नये-नये बिंबो, मिथकों एवं प्रतीकों द्वारा नब्बे के दशक की कवयित्रियाँ अपनी प्रतिरोधी चेतना को व्यक्त करने में अधिक सफल निकली हैं|

.........®®.........

परिशिष्ट

शोध छात्रा के प्रकाशित शोध लेख

1. चन्द्रकांत देवताले की कविताओं में भारतीय परिवार – पृ 285 – अनुशीलन शोध पत्रिका_जनवरी 2011.

संदर्भ ग्रन्थसूची

संदर्भ ग्रन्थसूची

कविता ग्रंथ

1	अग्निलीक	भारतभूषण अग्रवाल राजकमल प्रकाशन प्राइवट लिमिटड, दिल्ली संस्करण 1989
2	अनामिका	सूर्यकांत त्रिपाठी निराला भारती भण्डार प्रयाग संस्करण 1963
3	अनुष्टुप	अनामिका किताबघर प्रकाशन नई दिल्ली प्रथम संस्करण 1998
4	अंधेरे में बुद्ध	गगन गिल राजकमल प्रकाशन प्राइवट लिमिटड, दरियागंज, दिल्ली प्रथम संस्करण 1989
5	अपने जैसा जीवन	सविता सिंह राधाकृष्ण प्रकाशन, दरियागंज दिल्ली प्रथम संस्करण 2001

6	अपरिचित उजाले	प्रभा खेतान अक्षर प्रकाशन, दिल्ली संस्करण 1981
7	अब मूरख नहीं बनेंगे हम	रमणिका गुप्ता अभिरुचि प्रकाशन, दिल्ली संस्करण 1997
8	अभी और कुछ	शकुन्त माथुर भारतीय ज्ञानपीठ वाराणसी प्रथम संस्करण 1968
9	आदिम से आदमी तक	रमणिका गुप्ता (सं बलदेव पाण्डेय) शुभम प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 1997
10	आरंभ से हाशिए तक	अनिता वर्मा अभिव्यंजना दिल्ली प्रथम संस्करण 1998
11	इस अकेले तार पर	सुनीता जैन किताबघर, दिल्ली प्रथम संस्करण 1998

12	इस पौरुषपूर्ण समय में	कात्यायनी वाणी प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 1999
13	एक जन्म में सब	अनीता वर्मा राजकमल प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 2003
14	एक दिन लौटेगी लड़की	गगन गिल राजकमल प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 1989
15	कनुप्रिया	धर्मवीर भारती भारतीय ज्ञानपीठ वाराणासी संस्करण 1959
16	कबाड़ी का तराजू	निर्मला गर्ग राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 2000
17	कविता में औरत	अनामिका इतिहासबोध प्रकाशन हरियाणा

18	कहती हैं औरतें	अनामिका इतिहासबोध प्रकाशन हरियाणा प्रथम संस्करण 2003
19	कामायनी	जयशंकर प्रसाद भारती भण्डार इलाहाबाद स. 2018 वि. सं
20	खुले हुए आसमान के नीचे	कीर्ति चौधरी लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद प्रथम संस्करण 1967
21	गंगातट देखा	सुनीता जैन वाणी प्रकाशन, दिल्ली प्रथम संस्करण 1998
22	गवाह	कमलकुमार नेशनल पब्लिशिंग हाउस दरियागंज दिल्ली प्रथम संस्करण 1990
23	ग्राम्या	सुमित्रानन्दन पंत भारती भण्डार लीडर प्रेस, प्रयाग पाँचवाँ संस्करण 2013 वि.स.

24	घर निकासी	नीलेश रघुवंशी किताबघर प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 1997
25	जादू नहीं है कविता	कात्यायनी वाणी प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 2002
26	तुम कौन	रमणिका गुप्ता नवलेखन प्रकाशन बिहार संस्करण 1999
27	दीपशिखा	महादेवी वर्मा भारती भण्डार इलाहाबाद संस्करण 2019 वि. सं
28	दूसरा सप्तक	सं अज्ञेय भारतीय ज्ञानपीठ दिल्ली दसवीं संस्करण 2013
29	दौपदी	नरेन्द्र शर्मा राजकमल प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 1960

30	निराला ग्रन्थावली	सं ओंकार शरद न्यू बिल्डिंग्स अमीनाबाद, लखनऊ 2030 वि. स
31	बीजाक्षर	अनामिका भूमिका प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 1993
32	भूमिजा	नागार्जुन, सं सोमदेव शोभाकांत राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली दूसरा संस्करण 1994
33	महादेवी वर्मा साहित्य – I	सं निर्मला जैन वाणी प्रकाशन दरियागंज, दिल्ली तृतीय संस्करण 2007
34	मीराबाई और उनकी पदावली	देशराज सिंह भाटी अशोक प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 1962
35	मुकुल	सुभद्राकुमारी चौहान हंस प्रकाशन इलाहाबाद आठवाँ संस्करण 1959

36	मेरा होना	कुसुम अंसल अभिव्यंजना दिल्ली प्रथम संस्करण 1998
37	मौसम गर्म है	सुधा जैन सूर्यभारती प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 1998
38	मौसम से कह दो	शशि शर्मा भावना प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 1992
39	यशोधरा	मैथिलिशरण गुप्त साहित्य सदन चिरगाँव (झाँसी) 2033 वि. स.
40	यह आकांक्षा समय नहीं	गगन गिल राजकमल प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 1998
41	यात्रादंश	सुमन राजे साहित्य निकेतन, कानपुर प्रथम संस्करण 1987

42	युगवाणी	सुमित्रानंदन पंत राजकमल प्रकाशन दिल्ली’चतुर्थ संस्करण 1959
43	रघुवीर सहाय की प्रतिनिधि कविताएँ	स. सुरेश शर्मा राजकमल प्रकाशन दिल्ली संस्करण 1994
44	रास्ते भर जंगल	कुसुम कुमार किताबघर प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 1984
45	लहर नहीं टूटेगी	शकुन्त माथुर नाशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली प्रथम संस्करण 1990
46	शताब्दी के सरहद पर	सावित्री दागा पंचशील प्रकाशन जयपुर प्रथम संस्करण 1999
47	शाम्भवी	दिनेशनन्दिनी डालमिया राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 1994

48	शायद किसी दिन	चंद्रकला त्रिपाठी नमन प्रकाशन दरियागंज, दिल्ली प्रथम संस्करण 1999
49	सबूत क्यों चाहिए	इंदु जैन अभिरंजना प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 1999
50	समय की निरंतरता में	कुसुम अंसल किताबघर प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 2000
51	साकेत	मैथिलीशरण गुप्त साहित्य सदन चिरगाँव 2019 वि. सं
52	सात भाइयों के बीच चंपा	कात्यायनी आधार प्रकाशन पंचकुला प्रथम संस्करण 1999
53	सीधी कलम सधे न	सुनीता जैन भारतीय प्रकाशन संस्थान दिल्ली प्रथम संस्करण 1996

54	स्वप्न में घर	चंपा वैद नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली प्रथम संस्करण 2001
55	स्त्री काव्यधारा	सं जगदीश्वर चतुर्वेदी सुधा सिंह अनामिका पब्लिकेशन्स दरियागंज, दिल्ली प्रथम संस्करण 2006

आलोचनात्मक ग्रंथ

1	अतीत होती सदी और स्त्री का भविष्य	सं राजेन्द्र यादव, अर्चना वर्मा राजकमल प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 2000
2	अपना कमरा	गोपाल पधान (अनुवादक) संवाद प्रकाशन ठाणे प्रथम संस्करण 2002
3	आज की कविता	विनय विश्वास, राजकमल प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 2009

4	आजाद औरत कितनी आज़ाद	सं शैलेन्द्र सागर, रजनी गुप्ता सामसिक प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 2005
5	आधुनिक कविता का पुनर्पाठ	डॉ. करुणाशंकर उपाध्याय राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 2008
6	इतिहास में स्त्री	सुमन राजे भारतीय ज्ञानपीठ दिल्ली प्रथम संस्करण 2012
7	इक्कीसवी सदी की ओर	सं सुमन कृष्णकान्त राजकमल प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 2001
8	उत्तर आधुनिकता साहित्यक विमर्श	सुधीश पचौरी वाणी प्रकाशन नई दिल्ली प्रथम संस्करण 1996
9	उत्तर आधुनिकतावाद और दलित साहित्य	कृष्णदत्त पालीवाल वाणी प्रकाशन नई दिल्ली प्रथम संस्करण 2008

10	उपनिवेश में स्त्री	प्रभा खेतान
		राजकमल प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड
		दिल्ली
		प्रथम संस्करण 2004
11	औरत अस्तित्व और अस्मिता	अरविंद जैन
		सारांश प्रकाशन
		दिल्ली
		प्रथम संस्करण 2001
12	औरत कल आज और कल	आशारानी व्होरा
		कल्याणी शिक्षा परिषद्
		दिल्ली
		प्रथम संस्करण 2005
13	अंतर्राष्ट्रीय महिला दशक और	मीराकांत
	हिन्दी पत्रकारिता	क्लासिकल पब्लिशिंग कंपनी
		दिल्ली
		प्रथम संस्करण 1994
14	कविता का उत्तर जीवन	परमानन्द श्रीवास्तव
		राजकमल प्रकाशन
		दिल्ली
		प्रथम संस्करण 2004
15	कविता का थल और काल	ए. अरविन्दाक्षन
		किताबघर प्रकाशन
		दिल्ली
		प्रथम संस्करण 2001

16	दलित चेतना और स्त्री विमर्श	सं. विजयकुमार सन्देश, डॉ, नामदेव क्लासिकल पब्लिकेशन कंपनी दिल्ली दूसरा संस्करण 2009
17	दुर्ग द्वार पर दस्तक	कात्यायनी परिकल्पना प्रकाशन लखनऊ दूसरा संस्करण 1998
18	धर्म के आर पार औरत	सं. नीलम कुलश्रेष्ठ किताबघर प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 2010
19	नष्ट लड़की नष्ट गद्य	तसलीमा नसरीन आनंद पब्लिशर्स प्र. लि. कलकत्ता तृतीय संस्करण 2000
20	नयी कविता का रूप	डॉ. रेणु दीक्षित सरस्वती प्रकशन कानपुर प्रथम संस्करण 2009
21	नए आयामों को तलाशती नारी	सं. दिनेशनंदिनी डालमिया, रश्मि मल्होत्रा नवचेतन प्रकाशन, दिल्ली संस्करण 2003

22	नवजागरण और महादेवी के रचनाक्रम: स्त्री विमर्श के स्वर	कृष्णदत्त पालीवाल किताबघर प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 2008
23	नागपाश में स्त्री	सं. गीताश्री राजकमल प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 2010
24	नारी प्रश्न	सरला महेश्वरी राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली, दरियागंज प्रथम संस्करण 1998
25	नारी शोषण आईने और आयाम	आशारानी व्होरा कल्याणी शिक्षा परिषद् दिल्ली प्रथम संस्करण 2005
26	नारीवादी राजनीति : संघर्ष एवं मुद्दे	सं. साधना आर्य, निवेदिता मनोन, जिनी लोकनीता, हिन्दी माध्यम कार्यान्वय निदेशालय दिल्ली संस्करण 2001
27	परिधि पर स्त्री	मृणाल पाण्डे राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली, दरियागंज प्रथम संस्करण 1998

28	परिवार निजी संपत्ति और राज्य की उत्पत्ति	नरेश नदीम प्रकाशन संस्थान दिल्ली प्रथम संस्करण 2003
29	पानी जो पत्थर पीता है	अनामिका प्रकाशन संस्थान दिल्ली प्रथम संस्करण 2005
30	बाधाओं के बावजूद नई औरत	उषा महाजन मेघा बुक्स दिल्ली संस्करण 2001
31	भक्ति आन्दोलन और सूरदास का काव्य	मैनेजर पाण्डेय वाणी प्रकाशन नई दिल्ली प्रथम संस्करण 1993
32	मात्र देह नहीं है औरत	मृदुला सिन्हा सामयिक प्रकाशन दिल्ली संस्करण 2007
33	मिथक और आधुनिक कविता	डॉ. शम्भुनाथ नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली प्रथम संस्करण 1985

34	मिथक और भाषा	सं. कल्याणमल लोढ़ा हिन्दी विभाग कलकत्ता विश्वविद्यालय कलकत्ता प्रथम संस्करण 1981
35	मीरा का काव्य	विश्वनाथ त्रिपाठी वाणी प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 1989
36	रचना के विकल्प	ए अरविंदाक्षन शिल्पायन दिल्ली प्रथम संस्करण 2006
37	समकालीन कविता में स्त्री	गायत्री महेश्वरी संजय बुक सेन्टर वाराणसी संस्करण 1998
38	समकालीन कविता प्रकृति और परिवेश	सं. रतन कुमार पाण्डेय अनंग प्रकाशन दिल्ली संस्करण 2002
39	समकालीन महिला लेखन	ओमप्रकाश शर्मा पूजा प्रकाशन दिल्ली संस्करण 2002

40	संस्कृति के चार अध्याय	रामधारी सिंह दिनकर लोक भारती प्रकाशन दिल्ली न. संस्करण 2000
41	स्त्रियों की पराधीनता	प्रगति सक्सेना (अनुवादक) राजकमल प्रकाशन दिल्ली संस्करण 2009
42	स्त्री देह की राजनीति से देश की राजनीति तक	मृणाल पाण्डे राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली दूसरा संस्करण 2002
43	स्त्री अस्मिता के प्रश्न	सुभाष सोतिया कल्याणी शिक्षा परिषद् दिल्ली संस्करण 2008
44	स्त्री अस्मिता शय्या से सर्वोच्च अदालत तक	सीमा दीक्षित सामयिक बुक्स नई दिल्ली संस्करण 2011
45	स्त्री अस्मिता : साहित्य और विचारधारा	सं. जगदीश्वर चतुर्वेदी, सुधा सिंह आनंद प्रकाशन कलकत्ता संस्करण 2004

46	स्त्री उपेक्षिता	प्रभा खेतान (अनुवादक) हिन्दी पकट बुक्स प्राइवट लिमिटड दिल्ली नवीन संस्करण 2002
47	स्त्री चेतना और मीरा का काव्य	पूनम कुमारी अनामिका पब्लिशंर्स एंड डिस्ट्रीब्यूटर्स प्रथम संस्करण 2009
48	स्त्री परंपरा और आधुनिकता	सं. राजकिशोर वाणी प्रकाशन दिल्ली संस्करण 2010
49	स्त्री मुक्ति का सपना	सं. कमला प्रसाद वाणी प्रकाशन नई दिल्ली प्रथम संस्करण 2004
50	स्त्री लिंग निर्माण	साधना शाह (अनुवादक) रेमाधव पब्लिकेशन्स नोयडा प्रथम संस्करण 2007
51	स्त्री लेखन और समय के सरोकार	हेमलता महेश्वर नेहा प्रकाशन दिल्ली संस्करण 2006

52	स्त्री संघर्ष का इतिहास (1800-1990)	राधाकुमार वाणी प्रकाशन नई दिल्ली प्रथम संस्करण 2002
53	स्त्री विमर्श कलम और कुदाल के बहाने	रमणिका गुप्ता शिल्पायन दिल्लीसंस्करण 2004
54	स्त्रीत्व का मानचित्र	अनामिका सारांश प्रकाशन दिल्ली संस्करण 1999
55	स्त्रीत्ववादी विमर्श : साहित्य और विचारधारा	क्षमा शर्मा राजकमल प्रकाशन प्राइवट लिमिटड, दिल्ली संस्करण 2002
56	स्वतंत्रता सेनानी लेखिकाएँ	आशारानी व्होरा सत्साहित्य प्रकाशन दिल्ली संस्करण 2001
57	स्वागत हें बेटी	विभा देवसारे माता बुक्स दिल्ली प्रथम संस्करण 2005

58	विद्रोही स्त्री	मधु बी जोशी (अनुवादक) राजकमल प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण 2001
59	हिन्दी काव्य भाषा	कृष्णशंकर पाण्डेय शिवम इलाहबाद प्रथम संस्करण 1991
60	हिन्दी साहित्य का आधा इतिहास	सुमनराजे भारतीय ज्ञानपीठ दिल्ली प्रथम संस्करण 2003
61	ज्ञान का स्त्रीवादी पाठ	सुधा सिंह ग्रंथ शिल्पि प्र. लि. दिल्ली संस्करण 2008
62	श्रृंखला की कड़ियाँ	महादेवी वर्मा लोकभारती प्रकाशन इलाहबाद संस्करण 2010
63	हिन्दी काव्य भाषा	कृपाशंकर पाण्डे शिवम इलाहबाद प्रथम संस्करण 1991

मलयालम

64	फेमिनिज़म	जान्सी जेम्स केरल भाषा इंस्टिट्यूट तिरुवनंतपुरम संस्करण 2000
65	फेमिनिज़म चरित्रपरमाया ओरु अन्वेषणम	डॉ. एम.लीलावती प्रभात बुक हॉउस तिरुवनंतपुरम संस्करण 2000

अंग्रेजी

66	Feminism: Theory, criticism Analysis	Sushila Singh Pencraft International Delhi, Fc. 1997

पत्र-पत्रिकाएँ

1	आजकल	मई	1991
2	आजकल	फरवरी	1991
3	गगनांचल	जनवरी/मार्च	1993
4	मधुमती	मार्च	1992
5	मधुमती	जून	1992
6	मधुमती	जून-अगस्त	1994
7	मधुमती	अगस्त-सितंबर	1999
8	युद्धरत आम आदमी	विशेषांक	2011
9	वसुधा	जुलाई-दिसंबर	2012
10	वागर्थ	अक्तूबर	1997
11	वागर्थ	अक्तूबर	1998
12	समकालीन भारतीय साहित्य	जनवरी – फरवरी	2010
13	समकालीन भारतीय साहित्य	मार्च-अप्रैल	2012
14	साक्षात्कार	सितंबर	1992
15	साक्षात्कार	जनवरी	1995
16	साक्षात्कार	जनवरी	1999
17	हंस	नवंबर	2009

समाचार पत्र

18	मातृभूमि दैनिक	30 जुलाई	2014
19	नवभारत टाइम्स दैनिक	11 अगस्त	2011

.........௵.........